भोजपुरी और नेपाली बोलियों का तुलनात्मक अध्ययन: गोरखपुर तथा भैरवाँ जनपदों के विशिष्ट सन्दर्भ में

इलाहाबाद विश्वविद्यालय
की
डी०फिल० उपाधि के लिए प्रस्तुत

शोध-प्रबन्ध

शोध–निर्देशिका

डॉ0 मीरा दीक्षित
हिन्दी विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद

शोधकर्ता

रजनी कान्त मणि त्रिपाठी
हिन्दी विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद

हिन्दी विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
2002

भोजपुरी और नेपाली बोलियों का तुलनात्मक अध्ययन : गोरखपुर तथा भैरवा जनपदों के विशिष्ट सन्दर्भ में

:: विषयानुक्रमणिका ::

:: भूमिका ::

भाषायें अपनी सांस्कृतिक विरासत में लोक–चेतना की संवाहिकाएं होती हैं । विचार विनिमय का साधन होते हुए भी वे लोक–चेतना का वैश्वीकरण इस रूप में प्रस्तुत करती हैं जहां मनुष्य केन्द्र में हो जाता है और निर्धारित सीमाएं अपने बन्धन को तोड़कर उसके स्वत्व को प्रमाणित करने का कारक बन जाया करती हैं । हिन्दी इस दृष्टि से विश्वपटल पर अपना पांव इस प्रकार से फैला रही है कि दुनिया के तमाम देश उसके सांस्कृतिक बोध से अपना रागात्मक सम्बन्ध स्थापित करने के लिए अपना हाथ बढ़ा रहे हैं । भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी इस रूप में क्षेत्रीयता और प्रांतीयता की भावना से मुक्त रहकर अपने अन्दर गुणात्मक परिवर्तन उपस्थित करती रही है । पूर्वी हिन्दी और पश्चिमी हिन्दी के रूप में हिन्दी का इस प्रकार विभाजन एक तरह से भाषायी क्षेत्र में बांटने जैसा लगता है और जिसके चलते क्षेत्रवाद का जन्म भी होता है और सामाजिक एकता को भी नुकसान पहुंचता है । प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध क्षेत्रवाद और प्रान्तीयता की भावना से मुक्त रहकर हिन्दी की आधार बोली भोजपुरी और नेपाल की नेपाली के सांस्कृतिक बोध को रेखांकित करने का विनम्र प्रयास है और इस प्रयास में अपनी जन्मभूमि और उसके समीप स्थित सीमान्त देश नेपाल के सांस्कृतिक बोध को भौगोलिक पृष्ठभूमि के रूप में विवेचित और विश्लेषित करने का कार्य मैंने अपना स्वधर्म समझा था, इसका मूल कारण नेपाल का शैव मत का बाहुल्य भी माना जा सकता है, जिसका प्रभाव नाथपंथी योगियों की परम्परा में गोरखपुर की गोरक्षपीठ के प्रभाव के रूप में भी देखी जा सकती है । भारतीय धर्मसाधना का बहुदेववाद गोरखपुर और नेपाल की सांस्कृतिक स्थिति में अद्वैतवाद का शब्द पर्याय बनता दिखायी पड़ता है ।

आज जब भारतवर्ष के अन्य सीमान्त देश आतंकवाद का सहारा लेकर इस्लाम के एकेश्वरवाद की दुहाई देकर धर्म को क्षेत्रविस्तार की परिधि में संकुचित करने का प्रयास कर रहे हैं – "नेपाल की नेपाली और हिन्दी की भोजपुरी" – इस दृष्टि से लोकजागरण की प्रभाती बनकर सामने आ रही हैं। यह इस शोध–प्रबन्ध की दूसरी केन्द्रीय विशेषता हो सकती है, जहां शिव का सौन्दर्य बोध काव्य के स्तर पर और गद्य के स्तर पर भी दोनों को संप्रेषित करता है।

इस शोध–प्रबन्ध को इस रूप में प्रस्तुत किया गया है, उससे हम अपने चेहरे को स्वच्छ–दर्पण की तरह देख सकें और उसके विकीर्णन से सीमान्त प्रदेश को प्रभावितभी कर सकें ।

इस शोध कार्य का उद्देश्य नेपाल में भोजपुरी का प्रयोग और प्रभाव सम्बन्धी समस्त सामग्री एकसाथ प्रस्तुत कर देना नहीं है, वरन् उस तथ्य को सामने ला देना है जिसकी अब तक उपेक्षा हुई है और जिसमें आगे अनेक संभावनाएं निहित हैं। इतना अवश्य किया गया है कि प्रयोग और प्रभाव के क्षेत्र की विविधता और अनेकमुखी सक्रियता को निर्भ्रान्त रूप से प्रमाणित करने के लिए जितनी सामग्री अपेक्षित हो सकती है उसे यथेष्ट मात्रा में प्रस्तुत करने की सम्यक् चेष्टा की गई है। इस शोध–कार्य का उद्देश्य शोध के एक नये क्षेत्र का उद्घाटन है, उसका समापन नहीं । इस क्षेत्र में इतनी संभावनाएं हैं कि समापन का अभी प्रश्न ही नहीं उठता ।

भारत के उत्तर में लगभग 500 मील की लम्बाई में पूरब से पश्चिम तक फैला नेपाल अपनी नैसर्गिक सुषमा और सम्पदा के लिए विदेशियों के

आकर्षण का सदा से एक केन्द्र रहा है। आदिकाल से ही यह देश अनेक रूपों में स्मरण किया जाता रहा है ।

प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध इस दृष्टि से छह् अध्यायों में विभाजित है, जिसमें प्रथम अध्याय के अन्तर्गत–

क) भोजपुरी का नामकरण

ख) स्थान भेद से नामान्तर

ग) भोजपुरी की सजीवता

घ) भोजपुरी का विस्तार क्षेत्र

च) भोजपुरी के विभिन्न रूप

छ) भोजपुरी बोलियों की तुलना

ज) गोरखपुर की भोजपुरी एवं प्रमुख कवि हैं।

भोजपुरी नामकरण के अन्तर्गत स्थान के आधार पर इसका नाम भोजपुरी किस प्रकार से पड़ा बताने का प्रयास किया गया है। स्थान भेद से नामान्तर के अन्तर्गत प्रत्येक जगह की अपनी बोली की विशिष्टता के कारण उस स्थान के नाम पर उस बोली के नामकरण के बारे में बताया गया है – जैसे छपरा जिले की भोजपुरी 'छपरहिया' तथा बनारस की भोजपुरी 'बनारसी' आदि । भोजपुरी की सजीवता लोगों का इसके प्रति प्रेम तथा अपनी मातृ–भाषा के प्रति लगाव के बारे में बताया गया है ।

भोजपुरी के विस्तार क्षेत्र के अन्तर्गत इसके सीमाओं तथा अन्य भाषा–भाषी क्षेत्रों में इसके विस्तार तथा विद्वानों द्वारा निर्धारित क्षेत्रों के बारे में लिखा गया है ।

भोजपुरी के विविध रूप में 'जगह-विशेष' की भोजपुरी की सीमाओं के बारे में बताने का प्रयास किया गया है ।

भोजपुरी बोलियों की तुलना के अन्तर्गत आदर्श-शाहाबाद, सारन तथा बलिया-भोजपुरी की उत्तरी, पश्चिमी आदि बोलियों की तुलना की गयी है।

गोरखपुर की भोजपुरी में गोरखपुर की भोजपुरी का आदर्श भोजपुरी से अन्तर तथा गोरखपुर की भोजपुरी को क्षेत्र के अनुसार विभाजित किया गया है तथा गोरखपुर के प्रमुख भोजपुरी कवियों को बताया गया है ।

द्वितीय अध्याय के अन्तर्गत नेपाली भाषा का परिचय दिया गया है। नेपाली की उत्पत्ति के सम्बन्ध में विभिन्न भाषा-शास्त्रियों के मत दिए गए हैं। आधुनिक आर्य-भाषा और नेपाली का वर्गीकरण करके नेपाली को हिमाली : खस वर्ग की भाषा के अन्तर्गत रखा गया है तथा हिमाली-खस वर्ग की भाषाओं के बारे में लिखा गया है जिसमें हिमाली भाषा, पश्चिमी पहाड़ी भाषाओं, गढ़वाली, कुमाउनी के बारे में लिखा गया है। नेपाली भाषा के ऐतिहासिक विकास को नेपाली के अन्तर्गत लिखा गया है जिसमें प्राचीन नेपाली जो कि प्रारम्भ से ई0 की चौदहवीं शताब्दी तक है तथा मध्यकालीन नेपाली - पन्द्रहवीं शताब्दी से उन्नीसवीं शताब्दी तक और आधुनिक नेपाली -बीसवीं शताब्दी से अब तक के बारे में बताया गया है। नेपाल के बाहर नेपाली की स्थिति के बारे में बताया गया है। इसके बाद इस अध्याय में नेपाली भाषा की वर्तमान स्थिति के बारे में बताया गया है कि नेपाली के विकास के लिए क्या हो रहा है। इसके बाद नेपाल की भाषिक स्थिति के बारे में बताया गया है कि किस क्षेत्र में कौन-कौन सी बोलियां हैं। इसके बाद पहाड़ी क्षेत्र में नेपाली के बारे में बताया गया है। पुनः नेपाली का पुराना नाम "खसकुरा", "खसभाषा" अथवा पर्वतिया के बारे में बताया गया है। अन्त में भैरहवां तथा वहां के प्रमुख कवियों के बारे में बताया गया है ।

तीसरे अध्याय में "भोजपुरी और नेपाली का भाषागत स्वरूप निर्धारण" करने का प्रयास किया गया है। "भोजपुरी का भाषागत स्वरूप" के अन्तर्गत भोजपुरी के क्षेत्र के बारे में बताया गया है और उसके बाद नामकरण के बारे में बताया गया है। भोजपुरी का विभाजन तथा क्षेत्रों के अनुसार अलग-अलग जिलों, स्थानों के भोजपुरी के संज्ञा, विशेषण, क्रियापद तथा आदर्श भोजपुरी और पश्चिमी भोजपुरी जिसमें आजमगढ़, बनारस तथा मिर्जापुर की भोजपुरी शामिल है, से अन्तर बताया गया है। उनके रूप के बारे में बताया गया है। इसके बाद मधेसी भोजपुरी और थारू भोजपुरी के बारे में बताया गया है ।

"नेपाली भाषा का स्वरूप" के अन्तर्गत नेपाली भाषा के शब्द जिसमें तत्सम्, तद्भव, देशज तथा विदेशी है, उनके बारे में बताया गया है। अनेक शब्द जो संस्कृत से प्राकृत और नेपाली में आ गये हैं, उनके बारे में बताया गया है। हिन्दी तथा नेपाली के शब्द स्त्रोतों की समानता के बारे में बताया गया है। नेपाली के लिंग, वचन, कारक, सर्वनाम तथा सर्वनाम की रूपावली, विशेषण, उपसर्ग, प्रत्यय, क्रिया, काल, तीन वाच्य- 'कर्तृवाच्य, कर्मवाच्य, भाववाच्य' सकर्मक तथा अकर्मक क्रिया, अव्यय, संधि, समाज आदि के बारे में बताया गया है ।

चौथे अध्याय में "भोजपुरी और नेपाली का सांस्कृतिक बोध" में दोनों क्षेत्रों के धार्मिक, सामाजिक तथा भौगोलिक सम्बन्ध के बारे में बताया गया है।

पांचवे अध्याय में "भोजपुरी तथा नेपाली साहित्य" के अन्तर्गत भोजपुरी तथा नेपाली कवियों के बारे में बताया गया है जिसमें उन नेपाली कवियों को भी बताया गया है जो हिन्दी और भोजपुरी कवियों से प्रभावित होकर उन्हीं की तरह काव्य रचना करने का प्रयास किया है ।

छठे अध्याय में नेपाली और भोजपुरी ध्वनियों का विवेचन किया गया है। इसमें नेपाली के स्वर, संयुक्त स्वर, अनुनासिक स्वर, व्यंजनवर्ण, अक्षर प्रणाली के बारे में लिखा गया है। भोजपुरी ध्वनि में भोजपुरी स्वर, अनुनासिक स्वर, संयुक्त स्वर, व्यंजन, अनुनासिक व्यंजन, पार्श्विक व्यंजन, लुंठित व्यंजन, उक्षिप्त या ताड़नजात व्यंजन, व्यंजन वर्णों का द्वित्वभाव या दीर्घीकरण, भोजपुरी तथा नेपाली के ध्वनिग्रामों के तुलनात्मक अध्ययन के निष्कर्ष के बारे में बताया गया है ।

अन्त में मैं उन सभी लोगों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करना अपना कर्तव्य समझता हूँ जिन लोगों का सहयोग व स्नेह एवं शुभकामनाएं निरंतर मिलती रहीं । सर्वप्रथम मैं अपने पूज्य गुरू स्वर्गीय डा0 भवानी दत्त उत्प्रेती जी के प्रति श्रद्धावनत हूँ जिन्होंने मुझे इस विषय पर शोध–कार्य करने के लिए प्रेरित किया था । उनके आकस्मिक निधन हो जाने से मेरा शोध–कार्य रूक गया था जिसको मैं डा0 मीरा दीक्षित जी के निर्देशन में पुन शुरू कर सका और उनके सहयोग एवं स्नेह से इसे पूरा कर सका। मैं उनका अत्यन्त आभारी हूँ।

मैं उन सभी पुस्तकालयों एवं लोगो के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ जिन्होंने अल्पमात्र भी इस ग्रन्थ की पूर्णता में योगदान दिया है तथा उन सभी प्राचीन एवं अर्वाचीन लेखकों का आभारी हूँ जिनकी रचनाएं जिस रूप में भी इस ग्रन्थ के प्रणयन में उपयोगी सिद्ध हुई हैं ।

रजनी कान्त मणि त्रिपाठी
रजनी कान्त मणि त्रिपाठी
शोध–छात्र, हिन्दी विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद।

प्रथम अध्याय

भोजपुरी

भोजपुरी – नामकरण

भोजपुरी[1] पूर्वी। अथवा मागधी-परिवार की सबसे पश्चिमी बोली है । ग्रियर्सन ने पश्चिमी मागधी को "बिहारी" की संज्ञा से अभिहित किया है। बिहारी से ग्रियर्सन का उस एक भाषा से आशय है, जिसकी – मगही – मैथिली तथा भोजपुरी तीन बोलियां हैं। भाषा–विज्ञान की दृष्टि से ग्रियर्सन का कथन सत्य है तथापि इन तीन बोलियों में पारम्परिक अन्तर भी है । मैथिली "अछ या छ" धातु का प्रयोग भोजपुरी तथा मगही में नहीं है। इसी प्रकार भोजपुरी क्रियाओं के रूप में मैथिली तथा मगही क्रियाओं के रूप की जटिलता का सापेक्षिक रूप से अभाव है। मैथिली में प्राचीनकाल से ही रचनायें होती रहीं हैं और भोजपुरी तथा मगही में भी लोकगीतों तथा लोक कथाओं का बाहुल्य है। इन अन्तरों के साथ–साथ इन त्रिविध बोलियों के बोलने वालों को इस तथ्य (बात) की प्रतीति भी नहीं होती कि उनकी बोलियां भाषा की उपभाषायें हैं। इस सन्दर्भ में यह भीषण कठिनाई है कि बिहारी भाषा का कोई साहित्यिक रूप भी

---

1. कतिपय विद्वानों ने "भोजपुरी" के स्थान पर "भोजपुरिया" शब्द का प्रयोग किया है। विशेषण के लिए "ई" की भांति ही भोजपुरी में "इया" प्रत्यय भी व्यवहृत होता है, किन्तु इस "इया" प्रत्यय से किंञ्चित् अप्रतिष्ठा अथवा घनिष्ठता का भाव आ जाता है, जिसका "ई" प्रत्यय में वस्तुतः अभाव है। "ई" प्रत्ययवाला रूप छोटा है तथा जिस प्रकार "बंगाल" से "बंगाली", "नेपाल" से "नेपाली" शब्द बन जाते हैं, उसी प्रकार यह भी बन जाता है। यही कारण है कि – "भोजपुरिया" की अपेक्षा – "भोजपुरी" के प्रयोग को समीचीन मानते हुए प्रयोग किया जाता है। **कीन्स हार्नले** तथा **ग्रियर्सन** प्रभृति विद्वन्मण्डली ने भी अपने लेखों तथा ग्रन्थों में "भोजपुरी" शब्द का ही प्रयोग किया है, जिस कारण यह बहुत प्रचलित हो गया है ।

उपलब्ध नहीं है। इन परिस्थितियों में इन बोलियों के बोलने वाले अपनी-अपनी बोली को एक दूसरे से पृथक् समझ सकते हैं तथापि मैथिली, मगही तथा भोजपुरी के बोलने वाले सहजतापूर्वक एक-दूसरे की बोली समझ लेते हैं ।

भोजपुरी की तीनों बोलियों में विस्तार-क्षेत्र की दृष्टि से भोजपुरी का स्थान सर्वोच्च है। उत्तर में हिमालय की तराई से लेकर दक्षिण में मध्य प्रान्त की सरगुजा जनपद तक इस बोली का विस्तार है। बिहार प्रान्त के शाहाबाद, सारन, चम्पारन, रांची, जशपुर स्टेट, पलामू के कुछ भाग तथा मुजफ्फर नगर के उत्तर-पश्चिमी कोने में इस बोली के बोलने वाले निवास करते हैं। इसी प्रकार उत्तर प्रदेश में बनारस, गाजीपुर, बलिया, जौनपुर के अधिकांश भाग, मिर्जापुर, गोरखपुर, आजमगढ़ तथा बस्ती जिले की हर्रैया तहसील में स्थित कुवानो नदी तक भोजपुरी बोलने वालों का आधिपत्य है ।

डॉ0 सुनीति कुमार चटर्जी ने मागधी बोलियों तथा भाषाओं को तीन भागों में विभक्त किया है । डॉ0 चटर्जी के मतानुसार

1. भोजपुरी पश्चिमी मागधी-वर्ग

2. मैथिली तथा मगही मध्य मागधी-वर्ग

3. बंगला, असमिया और उड़िया पूर्वी मागधी-वर्ग के अन्तर्गत आती है।

इस प्रकार बंगला, असमिया और उड़िया यदि भोजपुरी की चचेरी बहने हैं तो मैथिली और मगही उसकी सगी बहनें हैं ।

भोजपुरी बोली का नामकरण शाहाबाद जनपद के भोजपुर परगने के नाम पर हुआ है। सम्प्रति भोजपुर स्वयं अब जनपद हो गया है। शाहाबाद जिले में भ्रमण करते हुए डॉ0 बुकलन सन् 1822 ई0 में भोजपुर आये थे। उन्होंने मालवा के

भोजबंशी – "उज्जैन" राजपूतों के "चेरों" जाति को पराजित करने के विषय में उल्लेख किया है ।

बंगाल की एशियाटिक सोसाइटी के 1871 के जर्नल में छोटा नागपुर, पचैत तथा पलामू के सम्बन्ध में मुसलमान इतिहास लेखकों के विवरणों की चर्चा करते हुए **बलॉचमैन** ने भोजपुर का भी उल्लेख किया है। वे वर्णन करते हुए कहते हैं कि– "बंगाल के पश्चिमी प्रान्त तथा दक्षिणी बिहार के राजा, दिल्ली सम्राट के लिये अत्यन्त दु:खदायी थे। अकबर के राजत्वकाल में बक्सर के समीप भोजपुर के राजा दलपत सम्राट से पराजित होकर बन्दी किये गये और अन्त में, जब बहुत अधिक आर्थिक दण्ड के पश्चात् वे बन्धन–मुक्त हुए तो, उन्होंने सम्राट के विरूद्ध पुन: क्रान्ति की। जहॉगीर के राजत्वकाल में भी उनकी क्रान्ति चलती रही, जिसके परिणामस्वरूप भोजपुर लूटा गया तथा उनके उत्तराधिकारी– "प्रताप" को शाहजहॉं ने फॉसी का दण्ड दिया। आइने–अकबरी में इस बात का उल्लेख है कि रोहतास–सरकार के अन्तर्गत– "सहसराम" (सासाराम) परगने के उत्तर तथा "आरा" के पश्चिम, भोजपुर में, इन उज्जैनी राजाओं का निवास–स्थान था। शाहजहॉं के शासनकाल के दसवें वर्ष में प्रताप ने सम्राट के विरूद्ध क्रान्ति की। इसी समय अब्दुल्ला खॉं फिरोजजंग ने भोजपुर पर घेरा डाला तथा इसे विजय किया।[1] इसके पश्चात् प्रताप ने अपने को सम्राट के हाथ में सौंप दिया और शाहजहॉं की आज्ञा से उसे फांसी दी गयी ।[2]

ऊपर के विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि किसी समय भोजपुर–राज्य अत्यन्त प्रसिद्ध था। इसके शासक उज्जैन राजपूत प्राचीनकाल में अपने मूलस्थान मालवा से बिहार चले आये थे। मध्ययुग के भारतीय इतिहास–विशेषत:–पश्चिमी बिहार के इतिहास – में इन राजपूतों का स्थान बहुत ही महत्वपूर्ण है। सन् 1857 ई0 की

---

1. जिनहज्ज 8, 1046 – भोजपुरी–भाषा और साहित्य, पृ0 232.
2. पादशाहनामा (1 बी, पृ0 271–274) वही, पृ0 233.

क्रान्ति तक इनका प्रभुत्व अक्षुण्य रहा। इसी समय महाराजकुमार बाबू कुँवरसिंह ने अँगरेजों के विरूद्ध विप्लव किया, जिसके परिणामस्वरूप भोजपुर ध्वस्त कर दिया गया। इस प्रकार भोजपुर राज्य का अन्त हुआ। इस समय "डुमराँव"–राज्य के वंशज (उज्जैनबंशी क्षत्रिय) मात्र हैं ।

इससे स्पष्ट हो जाता है कि उज्जैन के भोजों[1] के नाम पर ही "भोजपुर" नाम पड़ा, क्योंकि प्राचीन काल में इन्हीं लोगों ने इसी क्षेत्र पर अधिकार करके यहाँ शासन करना प्रारम्भ किया था । डुमराँव के निकट भोजपुर नगर ही इनकी राजधानी थी । यद्यपि इस प्राचीन नगर का वैभव विनष्ट हो चुका है, तथापि आज भी डुमराँव के निकट – "छोटका" तथा "बड़का" भोजपुर नाम के दो गाँव वर्तमान हैं। "नवरत्न दुर्ग" का ध्वंसावशेष अब भी यहां विद्यमान है। इसके स्थापत्य से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह मध्ययुग की कृति है ।

भोजों के प्राचीन नगर के नाम पर ही इस क्षेत्र का नाम भी "भोजपुर" पड़ गया, जो आगे चलकर इस नाम के परगने तथा जिले का कारण हुआ । प्राचीन काल में भोजपुर नगर के दक्षिण तथा वर्तमान आरा (भोजपुर) के उत्तर का अर्द्धभाग इसी प्रान्त की सीमा थी । सन् 1781 के **"जेम्स रेनेल"**[2] के एटलस में आरा के उत्तरी भाग का नाम – "रोतास" (रोहतास) प्रान्त मिलता है। इस प्रकार 18वीं शती में भोजपुर एक प्रान्त था। धीरे–धीरे इसका विशेषण भोजपुरी, इस प्रान्त के वासियों तथा उनकी बोली के लिए भी प्रयुक्त होने लगा। चूंकि इस प्रान्त की बोली ही इसके उत्तर–दक्षिण

---

1. धार के प्रसिद्ध राजा भोज का नाम किसी व्यक्ति विशेष का नाम न होकर उस क्षेत्र के राजाओं की उपाधि प्रतीत होता है। (ऐतरेय ब्राह्मण, 8–14).
2. जेम्स रेनेल ने सर्वप्रथम बनारस तथा बिहार का प्रामाणिक मानचित्र तैयार किया था.

तथा पश्चिम में भी बोली जाती थी, इसलिये भौगोलिक दृष्टि से भोजपुर–प्रान्त से बाहर होने पर भी इधर के नागरिक तथा उनकी भाषा के लिये भी "भोजपुरी" शब्द ही प्रचलित हो गया ।

यह एक विशेष तथ्य है कि भोजपुर के चारों ओर की तीन करोड़ से अधिक लोगों की बोली का नाम भोजपुरी हो गया। प्राचीन काल में भोजपुरी का यह क्षेत्र,–"काशी",–"मल्ल" तथा पश्चिमी "मगध" एवं "झारखण्ड" (छोटा नागपुर) के अन्तर्गत था। मुगलकाल में जब भोजपुर के राजपूतों ने अपनी वीरता तथा सामरिक शक्ति का विशेष परिचय दिया तब एक ओर जहाँ "भोजपुरी" शब्द जनता तथा भाषा दोनों का वाचक बनकर गौरव का द्योतनन करने लगा, वहीं दूसरी ओर वह एक भाषा के नाम पर प्राचीनकाल के तीन प्रान्तों को एक प्रान्त में पिरोने में भी समर्थ हुआ।

इस प्रकार सत्रहवीं–अठारहवीं शताब्दी में मागधी–भाषा के इस रूप के बोलने वाले "भोजपुरी" कहलाये । भोजपुरी स्वभावतः युद्धप्रिय होते हैं। अतएव मुगल सेना तथा उसके पश्चात् 1857 ई0 के भारतीय विद्रोह तक ब्रिटिश सेना में उनका बड़ा सम्मान रहा । बिहार में प्रचलित निम्न पद में भोजपुरियों के युद्धप्रिय स्वभाव की चर्चा है। इस पद में "भोजपुरिया" शब्द से भोजपुरी लोगों से तात्पर्य है–पद इस प्रकार है–

भागलपुर [1] के भगोलिया,
कहलगाँव [2] के ठग ;
पटना [3] के दैवालिया,
तीनू नामजद ,
सुनि पावै भोजपुरिया,
त तीनू कै तुरै रग [4]।।

1, 2, 3 : बिहार के नगरों के नाम हैं।

4. तीनों की नसें तोड़ दे।

ग्रियर्सन ने बिहारी भाषाओं तथा उपभाषाओं के प्रकरण में "भोजपुरिया" शब्द का प्रयोग भाषा के अर्थ में किया है जो निम्न पद में दृष्टिगोचर होता है–

कस कस कसमर किना मगहिया ।

का भोजपुरिया की तिरहुतिया ।।5

"क्या" सर्वनाम के लिये "कसमर" – (सारन जिले का एक स्थान) में "कस", "मगही" में "किन", भोजपुरी में "का" तथा "तिरहुतिया" (मैथिली) में "की" होता है ।

ऊपर के विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि मुगल–शासन के अन्तिम काल से "भोजपुरी" अथवा "भोजपुरिया" शब्द जनता तथा भाषा में काफी प्रचलित हो गया था। भाषा के अर्थ में लिखित रूप में इसका सर्वप्रथम उल्लेख सन् 1789 ई0 में उपलब्ध होता है। सर जार्ज ग्रियर्सन ने अपने "लिंग्विस्टिक सर्वे" में एक उद्धरण दिया है– जो इस प्रकार है–

"1789 – दो दिन बाद, सिपाहियों का एक रेजिमेण्ट जब दिन निकलने पर शहर से होता हुआ चुनारगढ़ की ओर जा रहा था, तो मैं गया और उसे जाते देखने के लिये खड़ा हो गया। इतने में रेजीमेण्ट के सिपाही रूके और उनके बीच के कुछ लोग अँधेरी गली की ओर दौड़ पड़े। उन्होंने एक मुर्गी पकड़ ली और कुछ मूली–गाजर भी उठा लाये। लोग चीख उठे । तब एक सिपाही ने अपनी भोजपुरिया बोली में कहा – इतना अधिक शोर न करो । आज हम लोग फिरंगियों के साथ जा रहे हैं; किन्तु हम सभी चेतसिंह की प्रजा हैं और कल उनके साथ भी आ सकते हैं । तब मूली–गाजर

---

5. ग्रियर्सन – बिहारी भाषाओं तथा उपभाषाओं के सप्त व्याकरण, भाग 1 (ग्रियर्सन– सेवेन ग्रामर्य आफ द डायलेक्ट्स एण्ड सबडायलेक्ट्स आफ बिहारी लैंग्वेज पार्ट वन) मुख पृष्ठ पर ।

का ही प्रश्न न होगा, बल्कि तुम्हारी बहू–बेटियों का होगा।"[1]

इसके पश्चात् निश्चित रूप से भाषा के अर्थ में–"भोजपुरी" शब्द का प्रयोग सन् 1868 ई0 में जॉन बीम्स ने अपने "भोजपुरी" बोली पर संक्षिप्त टिप्पणी शीर्षक लेख में किया है।[2] वस्तुतः बीम्स ने प्रचलित अर्थ में ही इस शब्द का प्रयोग किया है। यह लेख प्रकाशित होने से एक वर्ष पूर्व 17 फरवरी सन् 1867 ई0 में एशियाटिक सोसायटी में पढ़ा गया था ।

भोजपुरी जनता तथा उनकी भाषा के नाम भी मिलते हैं। मुगलों के शासनकाल में दिल्ली तथा पश्चिम में, भोजपुरियों – विशेषतः भोजपुरी–क्षेत्र के तिलंगों – को "बक्सरिया" कहा जाता था। 17वीं तथा 18वीं शताब्दी में भोजपुर तथा उसके पास में ही स्थित

---

1. 1789-"Two days after, as a regement of sepoys on its way to Chunar Garh, was marching through the city at day-break, I went out, and was standing to see it pass by. the regement halted; and a few men from centre ran into a dark lane, and laid hold of a hen and some roots; the people screamed. 'Do not make so much noise', said one of the men in his Bodjpooria idiom. 'We go today with the Frenghees, but we are all servants (tenants) to Cheyt Singh, and may come back tomorrow with him, and then the question will be not about your roots but about your wives and daughters."

ग्रियर्सन – लिंग्विस्टिक सर्वे, प्रथम भाग, पूरक अंश पृ0 22 पर (रेमण्डकृत–"शेर मुताखरीन का अनुवाद, द्वितीय संस्करण, अनुवादक की भूमिका, पृ0 8, भोजपुरी भाषा और सात्यि पृ0 234–235 पर।

2. रॉयल सोसाइटी आफ बंगाल जर्नल भाग 3, पृ0 485–508 द्रष्टव्य।

बक्सर, फौजी सिपाहियों की भर्ती के दो प्रमुख केन्द्र थे। 18वीं शती में जब अंग्रेजों के हाथ में जब शासन सूत्र आया, तब वे भी मुगलों की परम्परा को अक्षुण्ण रखते हुए भोजपुर तथा बक्सर से तिलंगों की भर्ती करते रहे ।[1]

अधिकांशतः भोजपुरी बंगाल में जाते हैं, जहां उन्हें बंगाली लोग– "हिन्दुथानी" अथवा "पश्चिमा" तथा कभी–कभी "देशवासी" अथवा "खोट्टा" भी कहते हैं। "खोट्टा" शब्द में तो स्पष्ट रूप से घृणा का भाव भी आ जाता है। अधिकांश भोजपुरी बंगाल तथा उसके मुख्य नगर कलकत्ता में दरबानी अथावा छोटा–मोटा काम करके ही जीवोकापार्जन करते हैं। इसी कारण इनके लिए "छोट्टा" शब्द का प्रयोग हुआ होगा। वस्तुतः बंगाली तथा भोजपुरी दोनों इससे अनभिज्ञ हैं कि उनकी भाषायें एक ही मागधी भाषा से प्रसूत हुई हैं। शिक्षित बंगाली भी इस तथ्य से अपरिचित ही हैं और वे भोजपुरी को हिन्दी अथवा हिन्दुस्थानी के अन्तर्गत ही मानते है।

"देशवासी" के सम्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि जब कलकत्ता अथवा बंगाल में जब एक भोजपुरी दूसरे भोजपुरी से मिलता है तब उसे देशवासी अथवा मुल्की भाई कहकर सम्बोधित करता है तथा अपनी बोली को भी देशवाली कहता है। किन्तु देशवाली अथवा मुल्की शब्दों की व्याप्ति के विषय में यह ज्ञातव्य है कि ये दोनों ही शब्द सापेक्षिक शब्द हैं और कभी–कभी एक पश्चिमी हिन्दी भाषा–भाषी भी एक दूसरे पश्चिमी हिन्दी भाषा–भाषी को देशवासी अथवा मुल्की और उसकी भाषा को देशवासी कहता है ।

उत्तरी भारत में भोजपुरियों को "पुर्बिया" और उसकी बोली को "पूर्बी बोली" कहते हैं। "पूरब" और "पुर्बिया" के सम्बन्ध में–हाब्सन–जॉन्सन[2] में निम्न विवरण उपलब्ध है–

---

1. विलियम इरविंग– दि आर्मी आफ द इण्डियन मुगल, लन्दन 1903, पृ0 68–69.
2. हॉन्सन–जॉन्सन पृ0 724, भोजपुरी भाषा और साहित्य पृ0 235.
   हेनरी मूल तथा ए.सी.बर्नेल कृत कोश "हान्सन–जान्सन"–जिसमें ऐंग्लो–इण्डियन लोगों में प्रचलित शब्दों तथा वाक्यों की तालिका है।

"उत्तरी भारत में "पूरब" से अवध, बनारस तथा बिहार प्रान्त से तात्पर्य है, अतएव "पूर्बिया" इन्हीं प्रान्तों के निवासियों को कहते हैं। बंगाल की पुरानी फौज के सिपाहियों के लिए भी इस शब्द का प्रयोग होता था, क्योंकि उनमें से अधिकांश इन्हीं प्रान्तों के निवासी थे ।"

ऊपर के उद्धरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि "पुर्बिया" तथा "पूर्बी" के अंतर्गत "कोसली" (अवधी) भी आ जाती है; वस्तुतः "पुर्बिया" शब्द की व्याप्ति भी अनिश्चित तथा सापेक्षिक है। ये ब्राह्मण–ग्रन्थों में प्रयुक्त "प्राच्य" अथवा ग्रीक "प्रसिओई" का आधुनिक रूप है, जिससे "मध्य प्रदेश" के पूरब के निवासियों से आशय है। आधुनिक काल में भी कोसल (अवध) के लोग बिहार के निवासियों को "पुर्बिया" कहते है। यद्यपि नागरी हिन्दी (खड़ी बोली) तथा ब्रजभाषा–भाषी उन्हें ही "पुर्बिया" कहते हैं।

स्थान-भेद से नामान्तर :–

भोजपुरी के अन्तर्गत स्थान–भेद से बोलियों का नाम भी पड़ गया है, जैसे छपरा जिले की भोजपुरी "छपरहिया" तथा बनारस की भोजपुरी "बनारसी" बोली कहते हैं। इसी प्रकार बलिया के पश्चिमी तथा आजमगढ़ के पूर्वी क्षेत्र की बोली "बंगरही" कहलाती है। इधर बांगर से उस क्षेत्र से तात्पर्य है, जहां गंगा की बाढ़ नहीं जाती।

श्रीराहुल सांकृत्यायन ने बलिया जिले के तेरहवें वार्षिकोत्सव के अपने अभिभाषण में भोजपुरी भाषा के स्थान पर "मल्ली" नाम का प्रयोग किया है। मल्ल जनपद बुद्ध के काल में षोडश महजनपदो के साथ वर्णित गणराज्यों में से एक गणराज्य था। इसकी वास्तविक सीमा क्या थी, यह आज निश्चित रूपेण नहीं बोधगम्य हो सका है। जैन–कल्पसूत्रों में नव मल्लों का उल्लेख है, किन्तु बौद्ध–ग्रन्थों में केवल तीन स्थानों–

1. कुशीनारा
2. पावा
3. अनुपिया

के मल्लों का उल्लेख प्राप्त होता है। इनके कई प्रसिद्ध नगरों के नाम मिलते हैं जैसे–

1. भोजनगर
2. अनुपिया
3. उरूवेलकप्प ।

कुशीनारा तथा पावा विद्वानों के अनुसार उत्तर प्रदेश के गोरखपुर में स्थित वर्तमान कसया (सिद्धार्थ नगर) पडरौना (जनपद) ही हैं। इस सम्बन्ध में एक तथ्य ध्यातव्य है कि "मल्ल" की भांति "काशी" का उल्लेख भी प्राप्त होता है। काशी (बनारस) में भी भोजपुरी ही बोली जाती है, अतएव मल्ल के साथ काशी का होना भी आवश्यक है। राहुलजी ने इस क्षेत्र की भोजपुरी का "काशिका" [1] नामकरण किया है, किन्तु भोजपुरी को इस प्रकार छोटे–छोटे टुकड़ों में विभक्त करना अनावश्यक तथा अनुपयुक्त है। सम्प्रति भोजपुरी एक विस्तृत क्षेत्र की भाषा है। यही कारण है कि प्राचीन जनपदीय नामों को पुनः प्रकाशित (प्रचलित) करने की अपेक्षा इसी का प्रयोग समीचीन है। इस नाम के साथ–साथ भी कम–से–कम तीन सौ वर्षों की परम्परा है।

भोजपुरी की सजीवता :

भोजपुरी एक सजीव भाषा है। यद्यपि भोजपुरी–क्षेत्र से प्रारम्भिक (प्राथमिक) तथा माध्यमिक–शिक्षा का माध्यम हिन्दी है, तथापि अपनी मातृभाषा के लिये भोजपुरियों के हृदय में अगाध प्रेम है। जहाँ अध्यापक तथा छात्र सभी भोजपुरी ही हैं, वहां कठिन शब्दों की व्याख्या तथा अर्थ आदि समझाने के लिये अध्यापक बन्धु प्राय. भोजपुरी का ही प्रयोग करते है। इसी प्रकार गणित के प्रश्नों तथा ज्यामिति के अभ्यासों को आपस में समझाते हुए छात्रगण प्राय· अपनी मातृभाषा ही बोलते हैं। प्राथमिक कक्षाओं के छात्र तो अपने गुरूजनों को भोजपुरी में ही सम्बोधित करते हैं। व्यवहारत भी आपसी वार्तालाप भी सर्वत्र वे लोग भोजपुरी में ही करते हैं। संस्कृत के प्राचीन पंडित भी अपनी पाठशालाओं

---

1. भोजपुरी भाषा और साहित्य, पृ0 236.

में व्याकरण शास्त्र की शिक्षा प्रदान करते समय छात्रों को भोजपुरी में ही पढ़ाते हैं। भोजपुरी भाषी कोई जन जब आपस में वार्तालाप करते हुए हिन्दी, उर्दू मिश्रित बोलता है, तो वह उपहास का पात्र बन जाता है। ग्रामीण पंचायतों में राजनैतिक, आर्थिक तथा धार्मिक समस्याओं पर विचार करते समय लोग भोजपुरी का ही व्यवाहार करते हैं और हाथ के लिखे हुए विवाहादि के निमन्त्रण–पत्र भी प्रायः भोजपुरी में ही होते हैं।

बनारस तथा मिर्जापुर के एक विशेष प्रकार के गीत, जिसे कजली कहते हैं, अत्यधिक प्रचलित है। इसकी भाषा प्रायः भोजपुरी होती है। कजली पावस ऋतु में ही गायी जाती है ।

भोजपुरी का विस्तार (क्षेत्र) :

भोजपुरी–क्षेत्र के बाहर भोजपुरियों का सबसे बड़ा केन्द्र कलकत्ता है। कलकत्ता को हम वास्तव में भोजपुरी जीवन तथा संस्कृति का केन्द्र कह सकते हैं। सहस्त्रों भोजपुरी कलकत्ता तथा भागीरथी के किनारे स्थित जूट–कारखानों में काम करते हैं । कलकत्ता के – "आक्टरलोनी मानुमेण्ट" के पास का किले का मैदान (जिसे भोजपुरी में मौनीमठ (मौन रहने वाले साधु का मठ) कहते हैं) वास्तव में भोजपुरियों का हाइडपार्क है। प्रत्येक रविवार को हजारों भोजपुरी इस मैदान में एकत्र होकर भोजपुरी लोकगीतों, लोक–कथाओं तथा लोक–गाथाओं (आल्हा, विजैमल आदि) से अपना मनोरंजन करते हैं ।

भोजपुरी के प्रति उसके बोलने वालों का इतना अनुराग होने पर भी इसमें लिखित साहित्य का अभाव है। सम्भवत· इसका कारण यह है कि प्राचीन काल में जहाँ मिथिला तथा बंगाल के ब्राह्मणों ने संस्कृत के साथ–साथ अपनी–अपनी मातृभाषाओं में भी लेखन कार्य सतत बनाये रखा वहीं भोजपुरियों ने मात्र संस्कृत के ही पठन–पाठन–लेखन तक अपने को सीमित रखा । उधर संस्कृत का प्रमुख केन्द्र काशी भी भोजपुरी

क्षेत्र में ही है। इस कारण भी संस्कृत–अध्ययन के लिये ही भोजपुरियों को विशेष प्रोत्साहन मिला । किन्तु यह सत्य है कि कबीर तथा भोजपुरी क्षेत्र के अन्य सन्त कवि अपनी मातृभाषा को न विस्मरण कर सके और अपनी मातृभाषा का दीपक प्रज्वलित किये रहे ।

भोजपुरी 43,000 वर्गमील में बोली जाती है। इसकी सीमा प्रान्तों की राजनीतिक सीमा से भिन्न है। भोजपुरी के पूर्व में इसकी दो बहनों – "मैथिली" तथा "मगही" का क्षेत्र है। इसकी सीमा गंगा नदी के साथ–साथ पटना के पश्चिम, कुछ मील तक पहुँच जाती है, जहाँ से सोन नदी के मार्ग का अनुसरण करती हुई वह रोहतास तक पहुँचती है। यहाँ से वह दक्षिण–पूर्व का मार्ग ग्रहण करती है तथा आगे चल कर राँची के प्लेटों के रूप में एक प्रायद्वीप का निर्माण करती है। इनकी दक्षिण–पूर्वी सीमा राँची के बीस मील पूर्व तक जाती है तथा बाँदू के चारों ओर घूमकर वह खरसावाँ तक पहुँच जाती है । यहाँ से यह उड़िया को अपने बामहस्त छोड़ती हुई पश्चिमाभिमुखी होकर, पुनः दक्षिण और तत्पश्चात् उत्तर की ओर मुड़कर जशपुर (स्टेट) को अपने अन्तर्गत कर लेती है। यहाँ छत्तीसगढ़ी तथा बघेली को वह अपनी बाईं ओर छोड़ देती है। यहाँ से भण्डरिया तक पहुँचकर यह प्रथम उत्तर–पश्चिम और पुनः उत्तर–पूर्व मुड़कर सोन नदी का स्पर्श करती हुई नगपुरिया भोजपुरी की सीमा को पूर्ण करती है ।

सोन नदी को पार कर भोजपुरी अवधी की सीमा का स्पर्श करती है तथा सोन नदी के साथ यह 82 अंश देशान्तर रेखा तक चली जाती है। इसके पश्चात् उत्तर ओर मुड़कर यह मिर्जापुर के 15 मील पश्चिम की ओर गंगा नदी के मार्ग से मिल जाती है । यहाँ से यह पुन. पूर्व की ओर मुड़ती है, गंगा को मिर्जापुर के पास पार करती है तथा अवधी को अपने बायें छोड़ती हुई यह सीधे उत्तर की ओर "ग्राण्ड ट्रंक रोड" पर स्थित "तभंगावाद" को स्पर्श करती हुई जौनपुर शहर के कुछ मील पूर्व तक पहुँच जाती है । इसके पश्चात् घाघरा नदी के मार्ग का अनुसरण करती

हुई यह "अकबरपुर" तथा "टांडा" तक चली जाती है। घाघरा नदी के उत्तरी बहाव मार्ग के साथ–साथ पुनः यह पश्चिम में 82 अंश देशान्तर तक पहुँच जाती है। यहाँ से यह टेढ़े–मेढ़े मार्ग से होते हुए बस्ती जनपद के उत्तर–पश्चिम, नेपाल की तराई में स्थित, यह सीमा "गिरवा" तक चली जाती है। यहां पर भोजपुरी की सीमा एक ऐसी पट्टी बनाती है, जिसका कुछ भाग नेपाल की सीमा के अन्तर्गत आता है। यह पट्टी 15 मील से अधिक चौड़ी नहीं है तथा बहराइच तक चली गयी है। इसमें "थारू" बोली बोली जाती है, जिसमें भोजपुरी के ही रूप मिलते हैं।

भोजपुरी की उत्तरी सीमा, अवधी की इस पट्टी को, जो भोजपुरी तथा नेपाली के बीच है, बायीं ओर छोड़ती हुई दक्षिण की ओर 83 अंश देशान्तर रेखा तक चली गयी है। यह पूर्व में रूम्मनदेई (रूपन्देही जनपद–बुद्ध का जन्म–स्थान प्राचीन लुम्बिनी) तक पहुँच जाती है। यहाँ से यह पुनः उत्तर–पूर्व ओर, नेपाल राज्य में स्थित "बुटवल" तक चली जाती है तथा वहाँ से पूर्व से होती हुई नेपाल राज्य के "अमलेखगंज" के 15 मील पूर्व तक पहुँच जाती है। यहाँ ये यह फिर दक्षिण की ओर मुड़ती है। इसके पूर्व में मैथिली का क्षेत्र आ जाता है। मुजफ्फरपुर के 10 मील इधर तक पहुँच कर यह सीमा पश्चिम की ओर मुड़ जाती है तथा गंडक नदी के साथ–साथ वह पटना के पास तक जाकर गंगा नदी से मिल जाती है।

ऊपर भोजपुरी की जो सीमा निर्धारित की गयी है उसमें तथा डॉ0 ग्रियर्सन द्वारा लिखित "लिग्विस्टिक सर्वे" में दी गयी सीमा में विशेषतः भोजपुरी की उत्तरी सीमा में थोड़ा सा अन्तर है। वस्तुतः भाषा की विशेषता की दृष्टि से भारत तथा नेपाल की सीमा बहुत कुछ अस्पष्ट है। इधर डॉ0 ग्रियर्सन ने केवल राजनैतिक–सीमा देकर ही सन्तोष कर लिया है। यद्यपि उन्होंने यह स्पष्ट रूपेण इंगित किया है कि हिमालय की तराई में भी भोजपुरी बोली जाती है। स्व0 प्रो0 डॉ0 उदय नारायण तिवारी (हिन्दी विभाग, इलाहाबाद युनिवर्सिटी) ने स्वयं जाँच करके इस सीमा को डॉ0 ग्रियर्सन द्वारा

दी हुई सीमा से और उत्तर निर्धारित किया है। इसके लिये स्व0 पूज्य तिवारी जी को नेपाल की तराई में भ्रमण करके अनेक स्थानों में भाषा की जांच करनी पड़ी तभी यह सीमा निश्चित हो सकी । तराईमें जो पट्टी अवधी की सीमा में प्रविष्ट कर गयी है और जिसकी चर्चा ऊपर की जा चुकी है, वहाँ "थारू" जाति निवास करती है,जो भोजपुरी-भाषा-भाषी हैं। यद्यपि अवधी-भाषी भी व्यापार के लिये कभी-कभी यहाँ आते-जाते रहते हैं ।

भोजपुरी के विस्तार को मानचित्र में देखने से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि इस समय यह दो राज्यों – उत्तर प्रदेश तथा बिहार में फैली हुई है। वस्तुतः यह उत्तर प्रदेश के पूर्व के जिलों तथा पश्चिमी बिहार की भाषा है। इसके बोलने वालों की संख्या भी अन्य दोबिहारी बोलियों – मैथिली तथा मगही की संयुक्त संख्या से लगभग दुगुनी है। दो राज्यों में विभक्त होने पर भी भोजपुरियों की संस्कृति तथा रीति-रिवाज में कोई अन्तर नहीं आया है। पारस्परिक विवाह-सम्बन्ध, भोजपुरी भाषा-सम्मेलन, परदेश में भी एक-दूसरे से मिलने पर मातृभाषा में ही पूरी तरह सम्भाषण की प्रथा ने वस्तुतः दो राज्यों में विभक्त भोजपुरियों को एकता के सूत्र में आबद्ध कर रखा है । यह होते हुए भी, यदि समस्त भोजपुरी भाषा-भाषी एक ही राज्य में आ जाते तो इसमें एकता की भावना और भी दृढ़ हो जाती और तब सामूहिक रूप से ये भारतीय राष्ट्र के अभ्युत्थान में और अधिक सहायक होते।

भोजपुरी के विविध रूप :

डॉ0 ग्रियर्सन ने भोजपुरी को चार भागोंमें विभक्त किया है जो निम्न हैं-

1- उत्तरी

2- दक्षिणी

3- पश्चिमी, तथा

4- नगपुरिया

---

1. लिंग्विस्टिक सर्वे।

उत्तरी भोजपुरी घाघरा नदी के उत्तर में बोली जाती है। इसकी भी दो विभाषायें हैं :–

1. सरवरिया ।

2. गोरखपुरी ।

यदि गण्डक नदी के साथ एक रेखा नेपाल सीमा तक और यहाँ से गोरखपुर शहर के कुछ मील पूर्व से होते हुए "बरहाज" तक खींची जाय तो इसके पश्चिम "सरवरिया" तथा "गोरखपुरी" भोजपुरी का क्षेत्र होगा ।

सोन नदी के दक्षिण "नगपुरिया भोजपुरी" का क्षेत्र पड़ता है। उत्तरी तथा नगपुरिया भोजपुरी के मध्य में की दक्षिणी तथा पश्चिमी का क्षेत्र आता है। यदि बरहज से गाजीपुर शहर तक और वहाँ से सोन नदी तक रेखा खींची जाय तो इसके पूर्व दक्षिणी भोजपुरी तथा पश्चिम पश्चिमी भोजपुरी का क्षेत्र होगा। यह दक्षिणी भोजपुरी ही वास्तव में आदर्श भोजपुरी है। इसका क्षेत्र शाहाबाद, सारन, बलिया, पूर्वी देवरिया तथा पूर्वी गाजीपुर है। पश्चिमी गाजीपुर, आजमगढ़, बनारस, मिर्जापुर तथा जौनपुर के कुछ भागों में पश्चिमी भोजपुरी बोली जाती है ।

आदर्श भोजपुरी अपनी अन्य बोलियों की अपेक्षा अति श्रुति–मधुर है। जिस प्रकार ईरानी लोगों की सम्बाद की फारसी तथा फ्रेंच बोलने वालों की उच्चारण विधा में एक विशेष प्रकार का संगीतात्मक माधुर्य तथा लोच–इन्टोनेशन–होता है, तदवत् माधुर्य तथा लोच आदर्श भोजपुरी में भी होता है। वाक्य के अन्तिम स्वर का देर तक उच्चारण करने से हीयह माधुर्य उत्पन्न होता है। उदाहरणार्थ–यदि किसी को कहना है कि – बच्चे, कहाँ जा रहे हो ? तो इसे आदर्श भोजपुरी में इस प्रकार कहेंगे–

"बबुआ हो – ओ – ओ – कहाँ जातार – अ – अ ।"

भोजपुरी की अन्य बोलियों में इस माधुर्य का तथा लोच का सर्वथा ही अभाव है ।

आदर्श भोजपुरी को इसकी अन्य बोलियों से पृथक करने वाला सर्वनाम – "रउआँ" है। इस सर्वनाम का भोजपुरी की अन्य बोलियों में अभाव है। आदर्श भोजपुरी में इस शब्द के कई रूप उपलब्ध हैं यथा– "राउरँ और राउर" आदि।

आदर–प्रदर्शन के लिए ही "आपके" अर्थ मं "रउरा" तथा "राउर" सर्वनाम का प्रयोग किया जाता है। प्राकृत में इस शब्द का रूप "लाउल" प्राप्त होता है, जिसका संस्कृत रूप "राजकुल" अथवा "राजकुल्य" होगा। मैथिली में इस सर्वनाम के लिये "बाइस" तथा "अहाँ" शब्दों का प्रयोग होता है, जिनकी उत्पत्ति संस्कृत के "अतिश" तथा "आयुष्मान्" शब्दों से हुई है ।

आदर्श–भोजपुरी का "राउर" शब्द इतना प्रसिद्ध तथा महत्वपूर्ण है कि "अवधी" के कवि महाकवि गोस्वामी तुलसीदास की तथा "ब्रजभाषा" के महाकवि सूरदास से लेकर श्री जगन्नाथदास "रत्नाकर" तक ने इसका प्रयोग किया है। सत्यता तो यह है कि अवधी, ब्रजभाषा तथा अन्य पश्चिमी–बोलियों में इस सर्वनाम का समानार्थक कोई शब्द है ही नही । गोस्वामी तुलसीदास जी ने "श्रीराम चरित मानस" में लिखते हैं–

" जौ राउर अनुशासन पाऊँ।
कन्दुक इव ब्रह्माण्ड उठाऊँ ।। "[1]

सूरदास के एक पद की टेक है

"मधुप" रावरी पहिचान"[2]

---

1. श्रीरामचरित मानस बालकाण्ड स्वयम्बर प्रकरण ।

2. सूरसागर ।

श्री जगन्नाथदास "रत्नाकर", "उद्धव-शतक" के एक पद में कहते हैं-

"फैले बरसाने में न रावरी कहानी यह।" [1]

भोजपुरी बोलियों की तुलना :

नीचे आदर्श-शाहाबाद, सारन तथा बलिया-भोजपुरी की उत्तरी, पश्चिमी आदि बोलियों की हम तुलना करते हैं :-

1. **संज्ञा**- आदर्श भोजपुरी के स्त्रीलिंग शब्दों के अन्त में प्रायः ह्रस्व "इ" आता है, किन्तु भोजपुरी की इतर बोलियों में इनका अभाव है- जैसे-आँखि-पाँखि (आदर्श भोजपुरी) । आँख-पाँख (अन्य भोजपुरी)।

गोरखपुर की उत्तरी भोजपुरी के संज्ञा पदों में कहीं-कहीं अनुनासिक का प्रयोग होता है- जैसे-भाँट-खाँड़ ।

किन्तु आदर्श भोजपुरी में इसके रूप होंगे भाट, साड़ । मैथिली के प्रभाव से कभी-कभी सारन तथा मुजफ्फरपुर की सीमा की भोजपुरी में "ड़" का "र" होता है। जैसे- घोड़ा → घोरा, सड़क → सरक आदि।

गोरखपुर की उत्तरी भोजपुरी में प्राचीन भोजपुरी के कतिपय रूप अद्यावधि पर्यन्त विद्यमान हैं। जैसे हिन्दी - "मैं" सर्वनाम "मयँ" तथा "में" रूप। भोजपुरी की अन्य बोलियो में यह रूप केवल कहावतों तथा मुहावरों आदि में ही उपलब्ध होते हैं। उत्तरी भोजपुरी के अन्य कारकों में व्यवहृत "मो" सर्वनाम भी आदर्श भोजपुरी में नहीं मिलता। इसी प्रकार मध्यम पुरूष के सर्वनाम "तू" के अतिरिक्त, गोरखपुर में "तैं" भी बोला जाता है तथा अप्राणिबोधक, प्रश्नवाचक सर्वनाम-"कैथी" (हिन्दी "क्या") गोरखपुर में "केथुआ" बोला जाता है ।

---

1. उद्धव-शतक ।

विशेषण :–संख्यावाचक विशेषण में 11 से 18 तक को उत्तरी भोजपुरी में – "एगारे", "बारे", "तेरे" आदि बोला जाता है और आदर्श भोजपुरी का इन शब्दों में व्यवहृत अन्तिम "ह" का गोरखपुर की उत्तरी भोजपुरी में लोप हो जाता है। इसी प्रकार आदर्श भोजपुरी में–"अर्तिस", "अर्तालिस", "सत्सठ", "अर्सठ" गोरखपुर में "अँड़तिस", "अँड़तालिस", "सँड़सठ" और "अँड़सठ" बोले जाते हैं।

क्रियापद– (क) सहायक क्रियायें :–

आदर्श भोजपुरी का "बाड़ै" गंगा के उत्तर "बाटै" हो जाता है। यद्यपि कहीं–कहीं "बाड़ै" का भी प्रयोग होता है। इसी प्रकार उत्तम पुरूष पुल्लिंग में "बाटौ", मध्यम पु0 में "बाट", "बाटै", "आटै", तथा अन्य पुरूष पुल्लिंग में "बाटै", "आटै", "बाय", "आय", रूप मिलते हैं। आदर्श भोजपुरी में "बा" रूप का उत्तरी भोजपुरी में सर्वथा अभाव है ।

(ख) क्रियापद वर्तमान काल :–

सारन की भोजपुरी में मध्यम पुरूष एक वचन में– "दैखुए", "दैखुयस", अन्य पुरूष एक वचन में "दैखुए", "दैखै" तथा अन्य पुरूष बहुवचन में "दैखैन" रूप वैकल्पिक रूप में मिलते हैं ।

भूतकाल :

भोजपुरी की समस्त बोलियो मे भूतकाल में "ल" वाला रूप मिलता है, किन्तु पलामू की भोजपुरी में उसमें "उ" भी जोड़ दिया जाता है। गण्डक के पूर्व की भोजपुरी पर मैथिली का भी प्रभाव पड़ने लगता है–यथा–

उत्तमपुरूष :– हम "दैखलियैन" (जब कर्म अन्य पुरूष में रहता है) तथा जब उसके प्रति विशेष आदर–प्रदर्शन करना होता है, जैसे–"मैंने श्रीमान् राजा को देखा" → "हम राजा के दैखलियैन" कहा जायेगा। इसी प्रकार जब कर्म मध्यमपुरूष

में रहता है तब– "हम दैखलियव" बोला जाता है यथा "हम रउरा के दैखलियव", अर्थात् मैंने आप श्रीमान् को देखा ।

मध्यमपुरूष :– जब कर्म अन्य पुरूष का होता है तथा जब वह किसी निम्न श्रेणी के व्यक्ति का बोधक होता है तब– "तू देखलहुस" का प्रयोग किया जाता है, यथा – "तू मलिया के देखलहुस"। किन्तु जब अन्य पुरूष के कर्म के प्रति आदर–प्रदर्शन करना होता है तब– "तू देखलहुन" का प्रयोग किया जाता है, जैसे– "तू राजा के दैखलहुन" अर्थात् "तुमने श्रीमान् राजा को देखा"।

भूतकाल (सम्भाव्य) :

म0पु0ए0व0	अन्य पु0ब0व0
दैखतैन	दैखतैंस

उपर्युक्त उत्तरी भोजपुरी की दो विभाषायें–गोरखपुरी और सरवरिया हैं जिनमें गोरखपुरी की कतिपय विशेषताओं का उल्लेख ग्रियर्सन ने भी किया है। इनमें जो विशेषता, विशिष्टता हमारा ध्यान अधिक आकर्षित करती हैं, वह है विवृत "अ" को लिखने की प्रणाली । इसे दो बार लिखा जाता है,–यथा–

" दअअ", लअअ" ।

उच्चारण–सम्बन्धी विशेषता गोरखपुरी भोजपुरी में यह है कि "ड़" के स्थान पर इसमें "र" का प्रयोग होता है–यथा–पड़ल –– परल। बलिया की आदर्श भोजपुरी में "परल तथा पड़ल" दोनों का प्रयोग होता है।

इसी प्रकार आदर्श भोजपुरी की सहायक क्रिया "बाड़े" के लिये गोरखपुरी भोजपुरी में "बाटै" का ही प्रयोग मिलता है

---

1. लिंग्विस्टिक सर्वे, भाग 5, पृ0 229.

सरवरिया भोजपुरी का क्षेत्र बस्ती तथा पश्चिमी गोरखपुर है। इसकी निम्नलिखित विशेषताओं का उल्लेख ग्रियर्सन ने किया है जिसे जाँचने के पश्चात् डॉ0 उदय नारायण तिवारी जी ने भी अनुमोदित किया है।[1] गोरखपुर की भाँति बस्ती में भी "ड़" के स्थान पर "र" का ही प्रयोग होता है। इस प्रकार यहाँ भी लोग "पड़ल" के स्थान पर "परल" ही बोलते हैं। यहाँ सम्बन्ध कारक में उपसर्ग के रूप में "कई" तथा अन्य कारकों में "के" का प्रयोग होता है। यह सीधे-सीधे पश्चिमी भोजपुरी के प्रभाव का परिणाम है।

सरवरिया भोजपुरी के सर्वनाम के रूपों में भी कई विशेषतायें दृष्टिगोचर होती हैं, यथा-सम्बन्ध कारक के रूपों के अन्त में "ए" आता है- तुहरे, ओ करे, इन्-के, अपने, आदि । क्रिया पदों के रूपों में इस बोली में एक विशेषता होती है कि इसके अन्य पुरूष, एकवचन, भूतकाल के रूपों में- अस/असि के स्थान पर- "इस" का प्रयोग होता है। इस प्रकार आदर्श भोजपुरी के दिहलस या दिहलसि, लिहलस, या लिहलसि, कइलस या कइलसि, रूप सरवरिया भोजपुरिया में दिहलिस, लिहलिस एवं कइलिस हो जाते है।

सहायक क्रिया के रूप में "ड़" से अन्त होने वाले रूप के स्थान पर यहाँभी "ट" से अन्त होने वाले रूपों का ही प्रयोग होता है। इस प्रकार यहाँ "आटे" आदि रूप ही प्रयोग में आते हैं ।

फैजाबाद, जौनपुर, आजमगढ़, बनारस, मिर्जापुर तथा गाजीपुर के पश्चिमी भाग में जो भोजपुरी बोली जाती है वह आदर्श भोजपुरी की अपेक्षा कई रूपों मे (बातों में) भिन्न है। उदाहरणस्वरूप बिहारी भाषाओं की एक सबसे बड़ी विशेषता यह है कि

---

1. लिंग्विस्टिक सर्वे, भाग 5, पृ0 239.

"अकारान्त" संज्ञा पदों के रूप अन्य कारकों में भी वैसे ही रहते हैं, किन्तु इस भोजपुरी में ये "ए" में परिणत तो हो जाते हैं। वस्तुतः यह पश्चिमी भोजपुरी प्राच्य समूह की आर्य भाषाओं में से सबसे पश्चिम की है, अतएव इस पर इसकी पश्चिम की बोलियों का प्रभाव पड़ना सर्वथा स्वाभाविक है ।

निम्नलिखित बातों में, पश्चिमी भोजपुरी आदर्श भोजपुरी से भिन्न है–

(क) **संज्ञा :–**

संज्ञाके रूप में, "आदर्श भोजपुरी" तथा "पश्चिमी भोजपुरी" में निम्नलिखित अन्तर हैं :–

आदर्श भोजपुरी (बलिया, शाहाबाद)	**पश्चिमी भोजपुरी** (आजमगढ़)
पाँच	पाँचा
भाट	भॉट
साँढ़	सॉड़
जाअ	जाआ
गाइ	गाय
आँखि	आँख
पाँखि	पाँख

आजमगढ़, बनारस तथा मिर्जापुर की पश्चिमी भोजपुरी में सम्बन्धकारक के प्रत्यय के रूप में "क" तथा "कै" का प्रयोग होता है। आदर्श भोजपुरी के अन्य कारकों में संज्ञापदों के अन्त में "आ" आता है, किन्तु प० भोजपुरी में यह "ए" हो जाता है।

बनारस तथा आजमगढ़ की प० भोजपुरी में अधिकरण कारक का चिह्न "से" है। आदर्श भोजपुरी में यह "सैं" अथवा "सै" है किन्तु शाहाबाद की भोजपुरी में यह "सै" है ।

उदाहरण–

पेड़ से पतई गिरत जाय –– पेड़ से पत्ते गिर रहे हैं। (बनारस)

पैड़ सैं पतई गिरतिया –– पेड़ से पत्ते गिर रहे हैं। (बलिया)

पैड़ लै पतई गिरतिया –– पेड़ से पत्ते गिर रहे हैं। (शाहाबाद)

"लिये" के अर्थ में प्रत्यय के रूप में बनारस तथा मिर्जापुर की प0 भोजपुरी में "कातिन" "बदे" तथा कभी–कभी "कातिर" का प्रयोग होता है; किन्तु बलिया की आदर्श भोजपुरी में केवल कातिर हो जाता है ।

उदाहरण–

तोरा वदे, तोरा कातिन – बनारस, मिर्जापुर ।

तोहरा कातिर या कातिन – बलिया ।

इसी प्रकार "बदले में" के अर्थ में पश्चिमी भोजपुरी "सन्ती/सन्तिन" शब्दों का प्रयोग होता है किन्तु आदर्श भोजपुरी में "सँती" हो जाता है।

(ख) **विशेषण** –

भोजपुरी की भिन्न–भिन्न उपभाषाओं के संख्यावाचक विशेषण में पश्चिमी तथा आदर्श भोजपुरी में पहाड़ा पढ़ते समय "औ" अन्तर आता है। आदर्श भोजपुरी में दु पाँचै, दु सातै, दु आठै आदि कहते है, किन्तु आजमगढ़ और बनारस में– दु पंचै, दु सतै, दु अठै आदि कहते हैं ।

पलामू की उत्तरी सीमा पर आदर्श–भोजपुरी बोली जाती है, किन्तुउसी जिले के उत्तर–पूर्वी कोने में, जहाँ गया की सीमा आती है, मगही का आरम्भ हो जाता है। पलामू जिले के शेष भाग में, तथा समस्त राँची जिले मे भोजपुरी का एक विकृत रूप बोला जाता है। इस विकृति का एक कारण तो "मगही "है, जो इसके उत्तर, पूर्व और दक्षिण में बोली जाती है। इसके अतिरिक्त पश्चिमी में "छत्तीसगढ़ी"

का प्रभाव पड़ने लगता है। इन दोनों के अतिरिक्त इस विकृति का एक तीसरा कारण यह भी है कि यहाँ के अनार्य भाषा–भाषी आदिवासियों की बोली के भी अनेक शब्द यहाँ की भोजपुरी में संयुक्त हो गये हैं। सत्यता यह प्रतीत होती है कि इधर के मूल निवासी "आस्ट्रिक" (आग्नेय), तथा द्रविण–भाषा–भाषी थे, किन्तु कालान्तर में आर्य–भाषा के रूप में भोजपुरी का प्रसार इस क्षेत्र में हुआ । यही विकृत भोजपुरी जशपुर (पुरानी स्टेट) में भी बोली जाती है । (पुराने जशपुर राज्य के पश्चिम ओर छत्तीसगढ़ी की एक उपभाषा सरगुजिया बोली जाती है और दक्षिण में उड़िया का क्षेत्र है।)

इस विकृत भोजपुरी का नाम "नगपुरिया" अथवा "छोटा भोजपुरी" की बोली है। इसको "सदानी/सदरी" कहते हैं । अनार्य मुंडा लोग इसे "डिकूकाजी" अथवा "डिकू"[1] बोली कहते हैं । जिसका अर्थ–आर्य–भाषा–भाषी होता है। "सदरी" से तात्पर्य है कि, यह उन लोगों की बोली है, जो इधर बस गये हैं। उत्तरी भारत में प्रयुक्त फारसी–अरबी के – "सदर मुकाम" – शब्द से यह शब्द ग्रहण किया गया है। इस प्रकार छत्तीसगढ़ी का विकृत रूप "सदरी कोरवा" कहलाता है। विशुद्ध "कोरवा" बोली तो मुण्डा लोगों की है।

छोटा नागपुर डिवीजन के भी वस्तुतः दो भाग हैं। इसके उत्तरी भाग में हजारी बाग तथा दक्षिण में रांची है। इन दोनों भागों को विभक्त करने वाली दामोदर नदी है। सीमा के पठार के अन्तर्गत वस्तुतत· रांची का समस्त जिला आ जाता है। इस पठार के पूर्व ओर "मानभूम और सिंहभूम" के जिले आते हैं। इस पठार के पूर्व का कुछ भाग राजनैतिक दृष्टि से रांची जिले में पड़ता है। ग्रियर्सन के अनुसार– यहाँ की भाषा नगपुरिया नहीं अपितु "पंचपरगनिया" बोली है, जो वस्तुतः मगही का ही एक रूप है। कई अन्य विद्वान इस "पंचपरगनिया" बोली को भोजपुरी का ही अंग स्वीकार करते हैं।[2]

1· डिकूकाजी/डिकू–आर्य भाषा–भाषियों की बोली ।

2 द्रष्टव्य–भोजपुरी भाषा और साहित्य पृ0 243·

नगपुरिया और सदानी का वैशिष्ठय :

"नगपुरिया और सदानी" की निम्नलिखित विशेषतायें हैं–

1. **उच्चारण–** इसकी प्रमुख विशेषता यह है कि यहाँ अन्तिम वाले अक्षर के पूर्व वाले अक्षर में "इ" का आगम होता है और इस प्रकार "अपिनिहित" (Epenthesis) का रूप आ जाता है, जैसे–सुअइर। पड़ोस की बंगला भाषा के कारण "अ" का उच्चारण "ओ" में परिणत हो जाता है, जैसे–सब–का उच्चारण सोब, भजन का भोजन हो जाता है ।

2. **संज्ञा–** एक वचन से बहुवचन बनाते समय संज्ञा पदों में "मन" प्रत्यय संयुक्त हो जाता है। इस प्रत्यय का छत्तीसगढ़ी में प्रयोग होता है और वहीं से यहाँ इसका आगमन हुआ है ।

इसमें निम्नलिखित परसर्गों (Post position) का प्रयोग होता है–कर्मकारक–को, सम्बन्ध कारक के, क, केर तथा कर, सम्प्रदान–ले लैं, लगिन, और लगै, अधिकरण–में, अपादान से प्रयुक्त होते हैं। कभी–कभी छत्तीसगढ़ी का प्रत्यय "हर" भी प्रयोग में आता है जैसे–"बेटाहर"।

क्रिया – सहायक क्रिया

वर्तमान – मैं हूँ		भूत – मैं था[1]	
एकवचन	बहुवचन	एक वचन	बहुवचन
अहों, हौ/हौं	अही/हई	रहो	रही/रहली
अहइस, हइस, हिस	अहा/हा	रहिस	रहा/रहला
अहे/है	अहें/हैं	रहे/रहलत	रहैं/रहलैं

1. **टिप्पणी–**"अहों" आदि को कभी–कभी "आहों" आदि के रूप में भी लिखते हैं। वर्तमान काल के निम्न रूप इसमें, मगही से लिये गये हैं।

	एकवचन	बहुवचन[1]
1.	हे – कों	हे – की
2.	हे – किस	हे – का
3.	हे – के	हे – कैं

देख के रूप :

धातु – "देख–क्" देखना, इसका प्रयोग सम्प्रदान कारक में "देखने के लिए" के अर्थ में भी होता है–

क्रियामूलक विशेष्य – देइख् ।

विकारी रूप – देखे, देखल ।

इनमें देखल का अर्थ देखने की क्रिया भी होता है।

वर्तमानकालिक कृदन्तीय रूप – देखत, देखते हुए।

भूतकालिक कृदन्तीय रूप – देखल, देखा हुआ ।

सम्भाव्य वर्तमान के रूप वही होते हैं जो भविष्यत् के, किन्तु इसमें अपवाद स्वरूप अन्य पु0ए0व0 में – "देखोक्" तथा ब0व0 में "देखों" रूप मिलते हैं। अन्य बोलियों में जहाँ सम्भाव्य वर्तमान के लिए प्रयुक्त होते हैं, वहाँ नगपुरिया में वैकल्पिक रूप से पुरा घटित वर्तमान Present Perfect के रूपों का प्रयोग होता है ।

वर्तमान मै देखता हूँ		भूतकाल मैंने देखा		भविष्यत्काल मै देखूंगा	
ए0व0	ब0व0	ए0व0	ब0व0	ए0व0	ब0व0
देखो–ना	देखि–ला	देखलों	देखलीं		
देखिसि–ला देखिस्–ला	देख–ला	देखलिस	देखला	देख, देखवे	देखा, देखवा
देखे ला	देखै–ला	देखलत	देखलइ	देखोक्	देखों

भविष्यत् मैं देखूँगा आदि		भूतकाल (सम्भाव्य) (यदि) मैं देखे होता	
ए0व0	ब0व0	ए0व0	ब0व0
देखबों	देखब, देखबै	देखतों	देखती
देखबे	देखबा	देखतिस्	देखता
देखी, देखतै	देखबैं	देखतक्	देखतैं

पुराघटित वर्तमान "मैंने देखा है" के निम्नलिखित दो रूप होते हैं–

ए0व0	ब0व0	ए0व0	ब0व0
देखलों हों	देखली हई	देखों	देखी
देखले हइस	देखला हा	देखिस	देखा
देखलक है	देखलैं हैं	देखे	दखै

पुराघटित अतीती– "मैंने देखा था" के रूप नीचे लिखते हैं–

एक वचन	बहुवचन
देख्–रहों	देख्–रही
देख्–रहिस्	देख्–रहा
देख्–रहे	देख–रहें

टिप्पणी 1 :– ऊपर की तालिका मे "देखतैं" तथा "देखबै" रूप मगही से उधार लिये गये हैं। वर्तमान काल का रूप – देखत–हो, "मैं देखता हूँ", होता है। इसके संक्षिप्त रूप "देखथों" तथा "देखत्थों" भी वैकल्पिक रूप से प्रयुक्त होते हैं। इसी प्रकार घटमान अतीत का रूप देखत रहों–"मैं देखता था"–होगा।

भोजपुरी की अन्य बोलियों की भाँति यहाँ भी प्रेरणार्थक एवं कर्मवाच्य की क्रियायें मिलती हैं, यथा-"खायक्" दिखाना (प्रेरणार्थक) देखवाएक् दिखलवाना (द्वितीय प्रेरणार्थक), देखल् जाएक्-देखा जाना (कर्मवाच्य)। इसमें अनियमित क्रियापद -होएक् "होना" मिलता है। इसके वर्तमानकालिक कृदन्तीय रूप "होअत" या "भवेत्" भूतकालिक कृदन्तीय रूप "होअल" या "भेल" होते हैं। इसी प्रकार जाएक् (जाना) तथा "देएक्" के भूतकालिक कृदन्तीय रूप "गेल", "देवेक"-गया, दिया। वर्तमानकालिक कृदन्तीय रूप देत या देवत एवं भूतकालिक कृदन्तीय रूप देल या देवल होंगे।

असमापिका के कृदन्तीय रूप (Conjunctive Participle)देइख् या देइख-के-होते हैं। अन्य भोजपुरी बोलियों से तुलना करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि इसका मूल रूप-देखि था, किन्तु अपिनिहित (Ependthesis) के कारण उच्चारण में यह "देइख" में परिणत हो गया। इस "इ" के कारण ही इसके पूर्व आने वाले "आ" का उच्चारण "ओ" में परिणत हो जाता है। इस प्रकार "माइर", "मारकर" का उच्चारण "मोइर" हो जाता है ।

मधेशी भोजपुरी

गोरखपुर के पूर्व, गण्डक नदी के उस पार, बिहार का चम्पारन जिला है। यह सारन जिले के उत्तर है। चम्पारन तथा सारन जिलों को गण्डक नदी ही विभाजित करती है। इन दोनों जिलों में ऐतिासिक तथा राजनैतिक सम्बन्ध हैं किन्तु वास्तव में चम्पारन प्राचीन मिथिला-प्रदेश का ही एक भाग है। इसकी भाषा से भी इस बात की पुष्टि होती है । यद्यपि यहाँ की भाषा प्रमुख रूप में वही भोजपुरी है, जो सारन तथा पूर्वी गोरखपुर में बोली जाती है तथापि इस पर पड़ोस बोली जाने वाली मुजफ्फरपुर की मैथिली का भी यत्किंचित् प्रभाव है। चम्पारन के पूर्व, मुजफ्फरपुर की सीमा की बोली पर, मैथिली का सबसे अधिक प्रभाव है। यहाँ के ढाका थाने में 16 मील लम्बे

तथा 2 मील चौड़े क्षेत्रफल में मैथिली बोली जाती है। चम्पारन में पश्चिम की ओर जाने से मैथिली का प्रभाव क्रमशः क्षीण हो जाता है। यहाँ तक कि गण्डक के किनारे की बोली वही भोजपुरी हो जाती है जो उत्तर-पूर्वी-सारन तथा पूर्वी गोरखपुरमें बोली जाती है । चम्पारन की बोली को यहाँ वाले "मधेशी"नाम से अभिहित कहते हैं। "मधेशी" शब्द की उत्पत्ति संस्कृत "मध्यदेश" से हुई है। तिरहुत की मैथिली तथा गोरखपुर की भोजपुरी के मध्य की बोली होने के कारण ही इसका "मधेशी" नाम पड़ा है।

"मधेशी" भोजपुरी में भी मैथिली की भाँति ही "मूर्धन्याड़" का उच्चारण "र" में परिणत हो जाता है। यथा-पड़ल —> परल, कोढ़ी —> कोरही, धड़का — धरका।[1]

मुजफ्फरपुर की मैथिली में-"उन लोगों के लिये "औकनी" सर्वनाम का प्रयोग होता है। मधेशी भोजपुरी में भी यह "औकनी" विद्यमान है।

इस प्रकार सहायक क्रिया के रूप में मधेशी भोजपुरी में "आर"ऽ(तुम हो) तथा "आटे" (वह है) दोनों का प्रयोग होता है तथा सकर्मक क्रिया ए0व0, अतीतकाल का रूप मैथिली की भाँति - "अक"प्रत्ययान्त होता है-

जैसे कहलक् - उसने कहा, देलक् - उसने दिया, आदि। यहाँ - "यह आया" के भोजपुरी आइल् के स्थान पर मैथिली - "आएल" का एवं "उसने कहा" के लिये मैथिली "कहल-कै" का प्रयोग होता है।

---

1 बलिया की आदर्श भोजपुरी में "पड़ल" तथा "परल" दोनों का प्रयोग होता है। "कोढ़ी" के लिये आदर्श भोजपुरी में भी "कोरूहि" व्यवहृत होता है। किन्तु बड़का के लिये बरका का प्रयोग नहीं होता। यहां साम्य गोरखपुर तथा बस्ती की भोजपुरी में भी दृष्टिगत होता है ।

थारू भोजपुरी

डा0 ग्रियर्सन ने थारू भोजपुरी का एक विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया है। थारू वस्तुतः भारत के आदिवासी हैं। वे हिमालय की तराई में, पूरब में– जलपाईगुड़ी से लेकर पश्चिम में कुमायूँ भावर तक पाये जाते हैं। इसका उल्लेख अलबेरूनी ने भी किया है। इनकी उत्पत्ति के सम्बन्ध में अनेक विद्वानों ने गम्भीरतापूर्वक विचार किया है। श्री क्रुक ने तो इस सम्बन्ध में विशेष श्रम किया। उनके अनुसार थारू मूलतः द्रविड़ हैं किन्तु नेपाली तथा अन्य पहाड़ी जातियों के सम्पर्क तथा सम्मिश्रण से उनमें मंगोल रक्त आ गया है। उनके शारीरिक गठन से यह बात स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है।

थारू लोगों की उत्पत्ति के सम्बन्ध में भले ही विवाद हो, किन्तु यह निर्विवाद सत्य है कि वे आर्य–भाषा–भाषी हैं और थारू नाम की इनकी कोई पृथक भाषा नहीं है। सर्वत्र ये लोग अपने आस–पास की आर्य–भाषा ही बोलते हैं। उदाहरणस्वरूप पूर्णिया के उत्तर में बसने वाले थारू पूर्वी मैथिली के विकृत रूप का जो वहाँ प्रचलित है, व्यवहार करते हैं। इसी प्रकार चम्पारन तथा गोरखपुर के थारू विकृत भोजपुरी एवं नैनीताल के तराई के थारू उस क्षेत्र में बोली जाने वाली पश्चिमी हिन्दी का प्रयोग करते है।

थारू लोगो की बोली की यह विशेषता उल्लेखनीय है कि उसमें पड़ोस में बोली जाने वाली बोली का विशेष पुट रहता है। उदाहरण के लिये उत्तर प्रदेश का खीरी जिला कोसली (अवधी) भाषा–भाषी हैं किन्तु यहाँ के थारू अवधी नहीं बोलते अपितु उनकी बोली में – पीलीभीत तथा नैनीताल की तराई में बोली जाने वाली पश्चिमी

---

1. लिंग्विस्टिक सर्वे, भाग 5, अंक 2, पृ0 311 से 324 तक।

हिन्दी का पुट है । इसी प्रकार बहराइच तथा गोंडा के थारू इन जिलों की कोसली (अवधी) नहीं बोलते किन्तु वे बस्ती में प्रचलित विकृत भोजपुरी का व्यवहार करते हैं। डा0 ग्रियर्सन के अनुसार थारू पूर्वी हिन्दी बिल्कुल ही नहीं बोलते, वे या तो नैनीताल की तराई की पश्चिमी हिन्दी बोलते हैं या भोजपुरी अथवा मैथिली का व्यवहार करते हैं ।

****

गोरखपुरी की भोजपुरी बोली

गोरखपुर राप्ती नदी के किनारे बसा हुआ है। महाभारत काल में गायों की रक्षा करने के कारण इसका नाम गोरक्षपुर पड़ा था। संसार का सबसे पुराना गणतन्त्र गोरखपुर में तथा उसके आस-पास ही विकसित हुआ । मुअज्जमशाह जब यहां पर शिकार के लिए आये थे तो इसका नाम मुअज्जमाबाद रखा गया था। 1801ई0 में ईस्ट इंडिया कंपनी ने अवध के नवाब से इसको खरीदा था। 1857 के विद्रोह के कारण अंग्रेजों ने 1865 में गोरखपुर से बस्ती तथा आजमगढ़ को अलग कर दिया था। बाद में 1947 में देवरिया को गोरखपुर से अलग किया गया।

डा0 ग्रियर्सन[1] ने भोजपुरी को चार भागों में विभक्त किया है। ये विभाग हैं – उत्तरी, दक्षिणी, पश्चिमी तथा नगपुरिया। उत्तरी भोजपुरी घाघरा नदी के उत्तर में बोली जाती है। इसकी भी दो विभाषाएं हैं –

क) सरवरिया तथा

ख) गोरखपुरी ।

यदि गण्डक नदी के साथ एक रेखा नेपाल सीमा तक और वहां से गोरखपुर शहर के कुछ मील पूरब से होते हुए बरहज तक खींची जाय तो इसके पश्चिम "सरवरिया" तथा पूरब "गोरखपुरी" भोजपुरी का क्षेत्र होगा ।

---

1. ग्रियर्सन – 'लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इण्डिया', जिल्द 5, भाग-2

गोरखपुर की उत्तरी भोजपुरी के संज्ञा पदों में कहीं-कहीं अनुनासिक का प्रयोग होता है। यथा- भाँट, नाँद ।

गोरखपुरी की उत्तरी भोजपुरी में प्राचीन भोजपुरी के कतिपय रूप आज भी वर्तमान है; जैसे- हिन्दी ' मैं ' सर्वनाम ' मयँ ' तथा ' में ' रूप। भोजपुरी की अन्य बोलियों में यह रूप केवल कहावतों तथा मुहावरों आदि में ही मिलते हैं। उत्तरी भोजपुरी के अन्य कारकों में व्यवहृत ' मो ' सर्वनाम भी आदर्श भोजपुरी में नहीं मिता है। इसी प्रकार मध्यम पुरूष के सर्वनाम ' तू ' के अतिरिक्त गोरखपुर में ' तैं ' भी बोला जाता है तथा अप्राणिबोधक, प्रश्नावाचक सर्वनाम ' केथी ' (हिन्दी ' क्या') गोरखपुर में ' केथुआ ' बोला जाता है।

संख्यावाचक विशेषण में 11 से 18 तक को उत्तरी भोजपुरी मं 'एगारे', 'बारे', 'तेरे' इत्यादि बोला जाता है और आदर्श भोजपुरी का इन शब्दों में व्यवहृत अन्तिम 'ह' का गोरखपुर की उत्तरी भोजपुरी में लोप हो जाता है। इसी प्रकार आदर्श भोजपुरी के 'अर्तिस', 'अर्तालिस", 'सत्सठ', 'अर्सठ' गोरखपुर में 'अँड़तिस', 'अँड़तालिस', 'सँड़सठ' और 'अँड़सठ' बोले जाते हैं ।

गोरखपुरी भोजपुरी[1] की एक प्रमुख विशेषता है विवृत्त'अ' को लिखने की प्रणाली । इसे दो बार लिखा जाता है, यथा-दअअ लअअ । उच्चारण-सम्बन्धी विशेषता गोरखपुरी भोजपुरी में यह है कि 'ड़' के स्थान पर इसमें 'र' का प्रयोग होता है , यथा - पड़ल -- परल ।

---

1. ग्रियर्सन - लिंग्विस्टिक सर्वे, भाग 5, पृष्ठ 229.

आदर्श भोजपुरी की सहायक क्रिया 'बाड़े' के लिए गोरखपुरी भोजपुरी में 'बाटे' का ही प्रयोग प्रचलित है ।

सरवरिया भोजपुरी पश्चिमी गोरखपुर में बोली जाती है। इसके सर्वनाम के रूपों के की कई विशेषतायें[1] दृष्टिगोचर होती हैं यथा– सम्बन्ध कारक के रूपों के अन्त में 'ए' आता है; यथा–तुहरे, ओकरे, इनन्के, अपने आदि।

क्रियापदों के रूपों में इस बोली में एक विशेषता यह है कि इसके अन्य पुरूष, एकवचन, भूतकाल के रूप में – अस या – असि के स्थान पर – इस का उपयोग होता है ।

सहायक क्रिया के रूप में 'ड' से अन्त होने वाले रूप के बजाय यहां भी 'ट' से अन्त होने वाले रूपों का ही प्रयोग होता है। इस प्रकार यहां 'बाटे' आदि रूप ही प्रयोग में आते हैं ।

इस प्रकार की कुछ अन्य विशेषतायें भी गोरखपुर की भोजपुरी में पायी जाती हैं ।

-----

1. ग्रियर्सन – लिंग्विस्टिक सर्वे, भाग 5, पृष्ठ 229.

गोरखपुर के प्रमुख भोजपुरी कवि

गोरखपुर के पुराने भोजपुरी कवियों में श्री राम अधार त्रिपाठी 'जीवन' चंचरीक तथा मन्न द्विवेदी का नाम प्रमुख रूप से लिया जा सकता है, जिसमें चंचरीक जी भोजपुरी में शुद्ध स्वतन्त्रता आन्दोलन के बारे में अपनी कवितायें लिखे हैं। इनके कविताओं के शीर्षक भी इसी प्रकार हैं– "स्वराजी", "चर्खा"। "सोहर" भी इन्होंने स्वतन्त्रता आनदोलन के बारे में ही खिा है ।

अन्य प्रमुख कवियों में प्रमुख हैं श्री कृष्ण मुरारी शुक्ल। यह हास्य रस के कवि हैं । इन्होंने अपनी एक कविता भी सुनायी जो इस प्रकार है–

कल पुरजा बिल्कुल ढिल ढिल बा
गड़िया एकदम सकरपक्क बाय
अरे भोकलवा चकाचक्के बाय । (चकाचक)

अरूण गोरखपुरी भी भोजपुरी कवियों में प्रमुख हैं। इन्होंने भी अपनी एक कविता सुनायी जो इस प्रकार है–

कोनो कालू डोम खर्राद्लस फिरसे राजा के
राहि बिकाइल चौराहा पर
बूझ राजा के?

गणेश तिवारी ने भी अपनी एक कविता सुनायी जो इस प्रकार है–

इ पिरितिया त कोल्हू क चक्का हव,
अंगुरी देव त पहुंचा धरइब करी ।

एक अन्य प्रमुख भोजपुरी कवि हैं श्री रवीन्द्र श्रीवास्तव 'युगानी' जी। यह गोरखपुर के पचगावा के पास भवानिपुर गांव के रहने वाले हैं। इस समय

यह गोरखपुर आकाशवाणी में कार्यरत भी हैं। इनका एक काव्य संग्रह है–"मोथा और माटी" जो कि 1980 में "वसुन्धरा" प्रकाशन गोरखपुर से प्रकाशित हुआ है। जब मैं इनसे सम्पर्क किया तो इन्होने अपनी यह कविता मुझे सुनायी–

आगी पर चारों ओर काठे क हाड़ी,
राम–राम मोछू सलाम भाई दाढ़ी।
लरिकन क खेल लाठी क रेल,
हुकुर–हुकुर इंजन कब दउर कब फेल।
के कब कोहां जाय,
कहां पे ओहां जाय,
बेमतलब घुड़दौड़, इहां जा उहां जा
के गिरी कहां गिरी दऊ इ अनाड़ी
राम–राम मोछू सलाम भाई दाढ़ी ।

इनके अतिरिक्त अन्य प्रमुख कवि इस प्रकार हैं–

1. स्व0 श्री त्रिलोकी नाथ उपाध्याय ।
2. श्री राम नवल मिश्र ।
3. श्री अरूण गोरखपुरी ।
4 श्री सत्यनारायण मिश्र 'सत्तन' ।
5. श्री मुकेश श्रीवास्तव ।
6. श्री परमात्मा मणि त्रिपाठी ।
7. श्री राजनाथ त्रिपाठी 'राजू गोरखपुरी'।

****

द्वितीय अध्याय

नेपाली

नेपाली भाषा का परिचय

हिमाली क्षेत्र के पश्चिमी "भेक" तथा पश्चिमी नेपाल की पुरानी जाति "खसों" के आधार पर नेपाली भाषा को "खसभाषा" कहा जाता रहा है । "खसकुरा" या "खसभाषा" कहने से अभी भी लोग उसे नेपाली भाषा का ही दूसरा नाम समझते हैं । नेपाली भाषा नेपाल के संविधान के "भाग–1, धारा–4 के" अनुसार राष्ट्रभाषा है । नेपाल के अधिकांश क्षेत्र में पहाड़ ही पहाड़ हैं, अतः यहां के वाशिन्दों को समतल में रहने वाले लोग पहाड़ी या पहाड़िया तथा इनकी भाषा को "पहाड़ी" भाषा कहते हैं । भाषा–शास्त्रियों ने भी सम्पूर्ण हिमाली क्षेत्र की आधुनिक आर्यभाषा को पहाड़ी वर्ग में रक्खा है तथा नेपाली को "पूर्वी पहाड़ी" कहा है। इसको "पर्वते भाषा" कहने के दो तात्पर्य हैं– नेपाल पर्वतों का देश होने के कारण यहां के वाशिन्दे को "पर्वते" कहा है। सुन्दरानन्द बंडा ने इसे "पार्वती भाषा" कहा, जिसे "पर्वत्या" भी कहा जाता है। श्री 5 बड़ा महाराज पृथ्वीनारायण शाह द्वारा नेपाल के एकीकरण के बाद "नेपाली", "गोर्खाली" नाम से प्रसिद्ध हुए तथा इनकी भाषा को "गोर्खाली" कहा गया। भाषा के रूप में राजकीय मान्यता प्राप्त करने के पश्चात इसका व्यापक प्रयोग देखने में आया । इसी सिलसिले में इसे "गोरख–भाषा", "गोरखा भाषा", "गोर्खा भाषा", "गोर्खे भाषा" और "गुर्खाली भाषा" नाम दिये गये । प्रसंगवश नेपाली भाषा के अन्य नाम भी देखने को मिलते हैं । काठमांडो उत्पत्यका के शिलालेखों में इसे "भाषा", "देशभाषा", "स्वदेश भाषा" और "गिरिराज भाषा" की संज्ञा से अभिहित किया गया है । शक्तिवल्लभ ने इसे "लोक भाषा", विद्यापति ने "प्राकृत भाषा" की संज्ञा दी है ।

"नेपाली भाषा" नाम सर्वप्रथम सम्भवत एटन के व्याकरण में ही दिखाई पड़ा । इससे पहले कर्क व्यांटिक ने इसे पर्वते ही कहा था । उसके बाद के यूरोपीय भाषा शास्त्रियों ने "गोर्खाली" तथा "नेपाली" का ही प्रयोग किया ।

नेपाल नाम के आधार पर इसका नाम नेपाली हुआ । नेपाल में अनेक भाषाएं हैं, लेकिन देश की बहुसंख्यक जनता की भाषा यही होने के कारण यह "नेपाली" भाषा[1] हो गई । अथर्वपरिशिष्ट, कौटिल्य[2] का अर्थशास्त्र, समुद्रगुप्त का प्रयाग स्थित शिलालेख और पुराणों में "नेपाल" शब्द ई0पू0 पांचवीं शताब्दी से ही प्रचलित है। नेपाल के बाहर हर जगह इसे "नेपाली भाषा" ही कहा जाता है।

---

1. The languages passes under various names. Europians call it 'Nepali'or 'Naipali' i.e. the language of Nepal. This is a misnomer, for it is not the language of Nepal, but only that of the Aryan rules of the country. The inhabitants of Nepal itself give the name (in a slightly corrupted form) to the principal Tibetan-Burman language of the country, Newari and call the Aryan language 'Khas-Kura' 'Khas-speech'. It is also called Gorkhali, i.e. the language of the Gorakhas owing to the fact that the Rajput rulers of Nepal come immediately from the town of the Gorkhas.Another name is Parbatiya or the language of the mountainers. Another name Pahati also meaning 'Mountainers Language' was given by Mr. Baines to the whole group of Aryan language spoken in the lower Himalayas from Nepal to Chamta. He divides these Pahati language into three sub-grups, western Pahati of the Punjab Himalaya's , Central Pahati of Garhwal and Kumaon and eastern Pahati of Nepal. Eastern Pahati is therefore another title of the language now its names are in order, Khas Kura, Naipali, Gorkhali, Parbatiya and Eastern Pahari." -Grierson: Linguistic Survey of India Vol. IX, pt. IV, Page 18.

\+ (क) नेपाली भाषा की उत्पत्ति–चूड़ामणि उपाध्याय रेग्मी, पृ0 2.
(ख) नेपाली भाषा का बनोट–गोपाल निधि तिवारी।

नेपाली की उत्पत्ति के सम्बन्ध में विभिन्न भाषा शास्त्रियों के मत :-

नेपाली की उत्पत्ति के सम्बन्ध में विद्वानों में परस्पर मतैक्य नहीं है। इस सम्बन्ध में उपलब्ध विभिन्न विद्वानों के मतों को संक्षेप में उपस्थित किया जा रहा है :-

(1) जार्ज ग्रियर्सन[1] ने नेपाली भाषा को राजस्थानी, मेवाड़ी, मालवी और मारवाड़ी इन चार बोलियों की परिनिष्ठित भाषा का ही विकसित या परिवर्तित रूप स्वीकार किया है। नेपाली उसी प्राकृत और अपभ्रंश से उद्भूत हुई है, जिससे राजस्थानी का उद्भव हुआ है। फलतः ग्रियर्सन की दृष्टि में शौरसेनी प्राकृत और शौरसेनी अपभ्रंश ही नेपाली की स्त्रोत-भाषा या जननी है ।

---

1. Sir George Grierson- 'Certain Rajputs of Udaipur, being oppressed by the Musalmans, fled to the North and in the early parts of the 16th Century, settled in the country of the lower Himalayas including Garhwal, Kumaon and Western Nepal. In 1559 a party of these conouered the town of Gorakha (say seventy miles to the North-West of Kathmandu). In 1768 Prithvi Narain Shah of Gorkha made himself master of the whole of Nepal and found the present Grkhali dynasty. It will, thus, be seen that the ruling classes of Nepal mountain say that they are of Rajput origin and their language, which is the lingua-Franca of the country is still closely connected with Mewati-Mrawati dialect spoken in the Udaipur, which they claim as their original home."

   (Linguistic Survey of India, Vol. IX Pt. 1)

(2) **डा0 सुनीति कुमार चटर्जी की मान्यताएँ:-** डा0 चटर्जी ने आधुनिक आर्य भाषाओं का नये सिरे से वर्गीकरण किया है तथा वे ग्रियर्सन के वर्गीकरण से असहमत हैं। डा0 चटर्जी का वर्गीकरण ग्रियर्सन की अपेक्षा अधिक तर्कसंगत है, पर जहां तक हिमालय की तलहटी में बोली जाने वाली पहाड़ी भाषाओं (जैसा अभिधान उन्होंने स्वयं दिया है) का प्रश्न है उन्होंने उनके साथ न्याय नहीं किया है। आधुनिक आर्य भाषाओं की तालिका में चटर्जी ने ग्रियर्सन की तरह पहाड़ी भाषाओं (कुमाउंनी, नेपाली) आदि को स्थान नहीं दिया है । डा0 चटर्जी की तालिका में पहाड़ी भाषाओं का स्थान न होना ही सिद्ध करता है कि वे इन्हें संस्कृत से उत्पन्न आर्यभाषा नहीं मानते । यदि वे इसे संस्कृतोत्पन्न आर्यभाषा के रूप में स्वीकार करते तो निश्चय ही अपनी आधुनिक आर्यभाषा तालिका के किसी खाने में स्थान प्रदान करते। डा0 चटर्जी ने कश्मीरी तथा पूर्व पहाड़ी (नेपाली), मध्य पहाड़ी (गढ़वाली और कुमांउनी) तथा पश्चिमी पहाड़ी (कुलुई, चमेआली आदि) भाषाओं की उत्पत्ति "दरद" भाषा से मानी है। डा0 चटर्जी ने ग्रियर्सन के द्वारा उद्भावित असंस्कृत आर्यभाषा यानी दरद या विशाल भाषा से पहाड़ी भाषाओं का उद्भव बताया है ।

(3) **आर0 एल0 टर्नर :-** उत्तरकालीन नेपाली भाषा की उत्पत्ति इन्होंने शौरसेनी प्राकृत और शौरसेनी अपभ्रंश से मानी है तथा प्राचीन नेपाली की उत्पत्ति मागधी प्राकृत और मागधी अपभ्रंश से स्वीकार की है। उनके अग्रिम वक्तव्य का आशय है कि "भारत के पश्चिमोत्तर भाग से आर्य भाषा-भाषी लोग पहाड़ों की ओर कब गये यह बता पाना तो कठिन है, किन्तु इतना निश्चित है कि इनके आगमन के पूर्व भी नेपाल में कोई आर्यभाषा बोली जाती रही होगी। प्रमाणस्वरूप 1000 विक्रम संवत् को पाटन (काठमांडो का एक भाग) की दरबारी भाषा को गृहीत किया जा सकता

---

1. सुनीति कुमार चटर्जी - ओ0डी0बी0एल0, पृ0 59.
2. टर्नर का नेपाली शब्दकोश, भूमिका, पृ0 141.

है। सम्भवत: यह भाषा भोजपुरी और मैथिली आदि बिहारी बोलियों की स्रोत-भाषा (यानी मागधी-प्राकृत और मागधी अपभ्रंश) से मिलती-जुलती रही होगी। इसके अतिरिक्त नेपाली में मैथिली और भोजपुरी के शब्द भी विपुल संख्या में पाये जाते हैं।"

(4) श्री पारसमणि प्रधान ने नेपाली की उत्पत्ति खस अपभ्रंश से मानी है। उनके अनुसार कुछ प्राचीन खस उत्तर पश्चिम भारत के कश्मीर अंचल में आकर बसे और कुछ खस गढ़वाली और कुमाऊं होते हुए पश्चिम नेपाल में आये। गढ़वाल और कुमाऊँ के वासिकाओं में अधिकांश खस बोली बोलते हैं। गोरखा राज्य की स्थापना के बाद भी खशों की ही प्रधानता थी और यह बोली सरल, सुसम्पन्न और विशाल होने के फलस्वरूप नेपाल राज्य के एकीकरण के बाद यही "राजभाषा" बनी। इस प्रकार नेपाली भाषा का उद्‌गम इसी खस अपभ्रंश से हुआ ।

(5) इतिहास शिरोमणि श्री बाबूराम आचार्य के अनुसार भी "खसकुरा" या "पर्वतीय बोली" कश्मीर से आई हुई इड़ावृत्ति आर्यों से चला दिखता है। नेपाली भाषा का उद्‌गम खस से हुआ ऐसा ही ये मानते हैं ।

(6) श्री सूर्य विक्रम सवाली ने नेपाली भाषा की उत्पत्ति भारतीय हिन्दी, मराठी, बंगाली आदि की तरह संस्कृत से ही मानी है । उनके अनुसार सन् 1303 में अलाउद्‌दीन खिलजी ने चित्तौर पर आक्रमण किया। इस आक्रमण से चित्तौर जर्जर हो गया (महामहोपाध्याय गौरी शंकर ओझा के अनुसार) तथा वहां के राजा श्री रत्नसिंह

---

1. नेपाली भाषा की उत्पत्ति र विकास-पारसमणि प्रधान, पृ0 16-17.
2. नेपाली भाषा को बनोट-गोपालनिधि तिवारी, पृ0 51.
3. नेपाली भाषा के विकास का संक्षिप्त इतिहास-श्री सूर्य विक्रम सवाली, पृ0 1-2.

का भाई तथा लड़का इधर–उधर भटकने लगे । श्री रत्नसिंह का भाई कुम्भकर्ण की सन्तान कुछ समय बाद कुमाऊँ के पहाड़ की तरफ से पाल्पा में आकर बस गये और धीरे–धीरे अपने राज्य का विस्तार करने लगे और बाद में पृथ्वी नारायण शाह ने नेपाल को अपने अधिकार में कर लिया।" (उदयपुर का इतिहास भाग 1, पृ0 72).

इसी कुम्भकर्ण के वंशज कुमाऊँ से नेपाल आये तथा इसी समय नेपाली भाषा का प्रारम्भ हुआ और ये लोग ग्रियर्सन साहब ने जिस भाषा समूह को राजस्थानी भाषा कहा है, उसी में से एक भाषा बोलते थे। राजस्थानी भाषा गुजराती की तरह शौरसेनी अपभ्रंश से निकली हुई है। अतएव नेपाली भाषा की उत्पत्ति भी शौरसेनी अपभ्रंश से हुई है ।

(7) भाषा वैज्ञानिक श्री बालकृष्ण पोखरेल[1] ने नेपाली भाषा की उत्पत्ति शौरसेनी प्राकृत से कुछ अंश में माना है ।

(8) श्री विज्ञान विलास[2] के अनुसार– "नेपाली भाषा की उत्पत्ति नेपाल में ही हुई", ऐसा मत प्रकट किया है। उनके अनुसार भारत से आये हुए राजपूतों के नेपाल प्रवेश से पहले से ही यह भाषा नेपाल में प्रचलित थी ।

(9) श्री गोपालनिधि तिवारी के अनुसार "वैदिक भाषा प्राचीन भाषाओं का जननी होने के कारण इससे लौकिक संस्कृत होते हुए अनेक किस्म की प्राकृत भाषाओं

---

1. नेपाली भाषा र साहित्य – बालकृष्ण पोखरेल, पृ0 11.
2. नेपाली भाषा को बनोट – गोपालनिधि तिवारी, पृ0 6.

की उत्पत्ति हुई । संस्कृत से प्राकृत, प्राकृत से अपभ्रंश होते हुए नेपाली भाषा की उत्पत्ति हुई। भारतवर्ष में बोली जाने वाली हिन्दी, बंगाली, मराठी, गुजराती, पंजाबी आदि भाषाओं की तरह ही नेपाली भाषा की उत्पत्ति हुई । पुनः वे लिखते हैं कि संस्कृत के तत्सम शब्द, उसी से विकृत प्राकृत के शब्द तथा अपभ्रंश से बना "खसकुरा" ही स्थानीय तुरनियन शाखा के (गरूंड, मगर, चेपाड., मुर्गी, कुसुण्डा, नेवारी, किराती, लिम्बु, लाप्चा आदि) शब्दों के साथ सम्मिलित होकर नेपाली भाषा निर्मित हुई है।

(10) श्री चूड़ामणि उपाध्याय रेग्मी[1] – नेपाली भाषा का प्राचीन रूप खसान में बना, खसान में बढ़ा तथा खसान में पालित हुआ। उस समय की अपभ्रंश खस अपभ्रंश थी, जिससे नेपाली भाषा की उत्पत्ति हुई कर्णाली प्रदेश में उस समय खसों का आधिपत्य होने के कारण उस क्षेत्र का नाम खसान हुआ । प्राकृत भाषाकाल में उस समय भारत के पश्चिमोत्तर प्रान्त और मध्यदेश की विशेषता का समान रूप लिया हुआ प्राकृत सरपादलक्ष- प्रदेश में रहा होगा जो मूलतः उदीच्य संस्कृत के विकसित होने पर भी मध्यदेशीय संस्कृत से प्रभावित था ।

(11) श्री सच्चिदानन्द चौधरी[2] – जिस प्रकार भारतीय भू-भाग मे विविध प्राकृतों से महाराष्ट्रा, शौरसेनी, मागधी, अर्द्धमागधी, पैशाची आदि अपभ्रंशों का उद्भव हुआ, ठीक उसी तरह नेपाल में "पार्वत्य प्राकृत" से भी "पर्वतिया अपभ्रंश" उत्पन्न हुई होगी । आधुनिक नेपाली का विकास स्वतन्त्र पद्धति पर हुआ है, यह संस्कृत, पार्वत्य प्राकृत, पर्वतिया अपभ्रंश आदि मे गुजरती हुई वर्तमान स्थिति को प्राप्त हुई है।

---

1. नेपाली भाषा की उत्पत्ति – श्री चूड़ामणि उपाध्याय, रेग्मी, पृ0 2.
2. जर्नल त्रिभुवन विश्वविद्यालय – डा0 सच्चिदानन्द चौधरी, 1967, पृ0 28.

इसकी अव्यवस्थित पूर्व कड़ी "पहाड़ी या पर्वतिया अपभ्रंश" है। मागधी, शौरसेनी, खस आदि अपभ्रंश नहीं ।

(12) **गोविन्द चातक के अनुसार** –खसों का प्रसार हिमालय में हिन्दूकुश से नेपाल तक था । इस तथ्य को अस्वीकार नहीं किया जा सकता । किन्तु मध्य और पूर्वी हिमालय में वे इतने प्रभंवशाली नहीं रहे जितने कि पश्चिम में । यदि सभी पहाड़ी भाषाओं का मूल दरद या खस ही होता तो उनमें बहुत बड़ी समानता होती। ठीक इसके विपरीत कश्मीरी आदि दरद भाषाएं मध्य पहाड़ी तथा पूर्वी पहाड़ी से बिल्कुल पृथक अस्तित्व प्रकट करती हैं। शौरसेनी का कोई और पर्वतीय रूप भी रहा होगा । वास्तव में मध्य और पूर्वी पहाड़ी का मूल कोई खस, दरद या पैशाची प्राकृत नहीं है । वे स्पष्टतः शौरसेनी से सम्बन्धित है।

(13) **डा0 भोलानाथ तिवारी** –इसका मूल शौरसेनी अपभ्रंश से मानते हैं।

उपर्युक्त मान्यताओं को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि नेपाली की उत्पत्ति के सम्बन्ध में विद्वानों का समुदाय मुख्यतः दो वर्गों में बंटा हुआ है जिसमें एक वर्ग नेपाली की उत्पत्ति शौरसेनी अपभ्रंश से माना है और दूसरा दल खस अपभ्रंश से । शौरसेनी से नेपाली को उद्भूत मानने वालों में जार्ज ग्रियर्सन, आर0एल0 टर्नर, श्री सूर्य विक्रम शवाली, बालकृष्ण पोखरेल, गोविन्द चातक

---

1. मध्य पहाड़ी का भाषा शास्त्रीय अध्ययन– गोविन्द चातकण पृ0 32–33.
2. हिन्दी भाषा – डा0 भोलानाथ तिवारी, पृ0 120.

तथा डा0 भोलानाथ तिवारी आदि अनेक विद्वानों के नाम आते हैं। दूसरी ओर खस अपभ्रंश से नेपाली की उत्पत्ति मानने वालों में श्री बाबूराम आचार्य, श्री चूड़ामणि उपाध्याय रेग्मी, गोपालनिधि तिवारी, पारसमणि प्रधान, डा0 सुनीति कुमार चटर्जी आदि प्रमुख हैं ।

उपर्युक्त विद्वानों ने अपने–अपने मतों के समर्थन में जो तर्क दिए हैं, उन पर ध्यान देने से ऐसा लगता है कि दोनों पक्षों के मत समान मूल्य एवं महत्व रखते हैं । ऐसी स्थिति में किसी एक का समर्थन करना हमारे लिए कठिन है। हमें ऐसा प्रतीत होता है कि नेपाली के उद्‌भव एवं विकास में शौरसेनी एवं खस दोनों का ही किसी न किसी रूप में योगदान अवश्य रहा है ।

आधुनिक आर्यभाषा और नेपाली :

आधुनिक आर्य भाषाओं का वर्गीकरण तथा भाषाओं को एक सूत्र में बांधने के प्रयास के क्रम में पहला श्रेय हार्नले को ही दिया जा सकता है। उन्होंने गौड़ीय भाषाओं के तुलनात्मक व्याकरण में आर्य परिवार के आधुनिक भारतीय आर्य भाषा को चार भाग में विभाजित किया । वह विभाजन इस प्रकार है–

(1) **पूर्वी गौड़ी**– पूर्वी हिन्दी (मैथिली, मगही, भोजपुरी) और बंगाली, असमिया, उड़िया ।

(2) **पश्चिमी गौड़ी** – पश्चिमी हिन्दी (ब्रज–राजस्थानी आदि) और गुजराती, सिन्धी, पंजाबी ।

(3) **दक्षिणी गौड़ी** – मराठी ।

(4) **उत्तरी गौड़ी** –पहाड़ी भाषा और गढ़वाली, कुमाऊँनी, नेपाली।

मोटे तौर से उन्होंने उत्तरी और पश्चिमी का सम्बन्ध शौरसेनी प्राकृत और पूर्वी का सम्बन्ध मागधी प्राकृत से दिखाया है । उसके बाद बर्नले द्वारा प्रतिपादित भारत में आर्यों के प्रदेश के सिद्धान्त के आधार पर ग्रियर्सन ने आधुनिक आर्य भाषाओं का दूसरा वर्गीकरण प्रस्तुत किया । हार्नले ने गौड़ीय भाषाओं का तुलनात्मक व्याकरण में लिखा है कि आर्य जब भारत में आये तो कम से कम दो दल में विभक्त होकर आये । पहले आने वाले पंजाब जाकर रहने लगे तथा पीछे आने वाले आर्य पूर्वागत आर्यों को भगाकर, उनके जगह पर रहने लगे और उसके बाद भगाये जाने पर वे आर्य पूर्व, दक्षिण और उत्तर में फैल गये। इसी के आधार पर ग्रियर्सन ने आभ्यन्तर और बाह्य का भेद किया । पूर्वागत आर्य बाह्य शाखा की भाषा बोलने लगे तथा नवागत आर्य अभ्यन्तर शाखा के । उनका यह वर्गीकरण दो बार निकला – भारत के भाषा–सर्वेक्षण में और इंडियन एण्टिक्ववेटी में ।

पहला वर्गीकरण इस प्रकार है :–

(अ) बाह्य शाखा–

क) उत्तर पश्चिमी समुदाय

1. लहंदा अथवा पश्चिमी पंजाबी
2. सिन्धी

ख) दक्षिणी समुदाय

1. मराठी
2. पूर्वी हिन्दी

ग) पूर्वी समुदाय

1. उड़िया
2. बिहारी

3. बंगाली

4. असमिया

(आ) मध्य शाखा–

घ) मध्य समुदाय

1. राजस्थानी

ङ) आभ्यन्तर शाखा–

ई) केन्द्रीय समुदाय

1. पश्चिमी हिन्दी

2. पंजाबी

3. गुजराती

4. भीली

5. खानदेशी

च) पहाड़ी समुदाय–

1. पूर्वी पहाड़ी अथवा नेपाली

2. केन्द्रीय पहाड़ी

3. पश्चिमी पहाड़ी भाषाएं ।

ग्रियर्सन का दूसरा वर्गीकरण इस प्रकार है–

अ) मध्यदेशीय (पश्चिमी हिन्दी)

आ) आभ्यान्तर (पंजाबी, राजस्थानी, गुजराती, पूर्वी हिन्दी और पहाड़ी भाषाएं)।

इ) बाह्य (लहन्दा, सिन्धी, मराठी, उड़िया, असमिया, बंगाली और बिहारी भाषा) ।

ग्रियर्सन के वर्गीकरण के आधार पर भाषा की ध्वनि, रूप और शब्द समूहों में समानता है। डा0 चटर्जी ने ग्रियर्सन द्वारा प्रस्तुत भाषा–साम्य के आधार की आलोचना कर अपना वर्गीकरण प्रस्तुत किया है। उनका "बंगला भाषा के उत्पत्ति और विकास" में प्रस्तुत वर्गीकरण इस प्रकार है–

1) दक्षिणात्य – मराठी, कोंकणी ।

2) प्राच्य –असमिया, बंगाली, उड़िया, मैथिली, मगही, भोजपुरी, अवधी, बघेली, छत्तीसगढ़ी ।

3) मध्यदेशीय – बुन्देली, कन्नौजी, ब्रजभाषा, हिन्दुस्तानी ।

4) प्रतीच्य – मालवी, निमाड़ी, मेवाती, गुजरी, जयपुरी और हतौड़ी, पश्चिमी गुजराती, पश्चिमी मारवाड़ी ।

5) प्रतीच्य (नागरी और पालि प्रभवित) – सिंहली, मालदीवान।

6) उदीच्य – पूर्वी पंजाबी, लहंदा, सिन्धी, जिप्सी ।

7) उदीच्य (खस) – पश्चिमी पहाड़ी भाषाएं, गढ़वाली, कुमाऊँनी, नेपाली ।

डा0 चटर्जी के वर्गीकरण के बाद भी अनेक वर्गीकरण दिखाई पड़े लेकिन आधार वही ऐतिहासिक क्षेत्रीय और भाषा की विशेषता ही है । ऐतिहासिक और भौगोलिक आधार पर एक और वर्गीकरण इस प्रकार हो सकता है–

1) प्राच्य मागधी वर्ग – मैथिली, मगही, भोजपुरी, बंगाली, असमिया, उड़िया ।

2) मध्यपूर्वी : अर्द्धमागधी वर्ग – अवधी, वघेली, छत्तीसगढ़ी।

3) मध्यदेशीय : शौरसेनी वर्ग – ब्रज, बांगरू, कन्नौजी, बुन्देली, राजस्थानी भाषाएं तथा गुजराती ।

4) दक्षिणात्य : महाराष्ट्री वर्ग – मराठी, कोंकणी ।

5) उदीच्य : पैशाची वर्ग – सिन्धी, लहन्दा, पंजाबी ।

6) हिमाली : खस वर्ग – पश्चिमी पहाड़ी भाषाएं, गढ़वाली, कुमाऊँनी, नेपाली ।

उपर्युक्त आधुनिक आर्य भाषाएं अभी के प्रमुख भाषाओं में से हैं। सम्पूर्ण आधुनिक आर्यभाषा और भाषिकाओं की गणना यदि की जाय तो एक लम्बी सूची बन जाएगी, लेकिन हमारा प्रयोजन नेपाली भाषा की उन्नति और विकास क्रम दिखाना ही है, अतः यहां हिमाली क्षेत्र की खस भाषा की संक्षिप्त चर्चा करेंगे ।

नेपाल की उप–भाषायें :
हिमाली भाषा :

डा0 ग्रियर्सन के अनुसार हिमाली भाषाओं का क्षेत्र भारत के पंजाब राज्य के उत्तर भाग भद्रवाह से नेपाल के पूर्वी क्षेत्र तक फैला हुआ है, लेकिन यह क्षेत्र वास्तव में अभी व्यापक है। नेपाल के पूर्वी क्षेत्र से भी पूर्व के पश्चिम बंगाल, सिक्किम, भूटान, असम और नागाहिल्स समेत यह भाषा बोली जाती है। हिमाली भाषा के क्षेत्र में अन्य भाषा भी बोली जाती है । उच्च हिमाली प्रदेश और कहीं कहीं महाभारत पर्वतमाला में भी यह भाषा तिब्बत बर्मी परिवार की भाषाओं के साथ (फ्रीक्वेंटली) बोली जाती है और हिमाली तराई प्रदेश में हिमाली

भाषा के साथ कन्नौजी, पंजाबी, अवधी, भोजपुरी, मैथिली, राजवंशी आदि भाषा बोली जाती हे ।

हिमाली भाषाओं के विभाजन तीन मुख्य समुदाय में किये गये हैं। उनको हिमाली कहने का खास आधार भाषा की विशेषता ही है (पूर्वी पहाड़ी) (नेपाली) केन्द्रीय पहाड़ी (कुमाऊँनी और गढ़वाली) और पश्चिम पहाड़ी (सिरमौरी, बघाती, किउन्थली, कुलुपी, भाण्डेअली, सुकेती, चमेअली, भद्रवाही, पड़ोरी आदि) हैं। भारत की 1961 की जनगणना में भारत में हिमाली आर्य भाषा बोलने वालों की संख्या 45,61,750 है और इनमें नेपाली भाषा–भाषियों की संख्या 10,30,254 है। कुमाऊँनी को छोड़कर इस शाखा के भाषा–भाषियों में नेपाली बोलने वालों की संख्या ही सबसे ज्यादा है ।

पश्चिमी पहाड़ी भाषाएं :

हिमालय के पश्चिमी भाग में रहने वाली जातियों के द्वारा बोली जाने वाली अनेक भाषाओं को पश्चिमी पहाड़ी नाम दिया गया है। यह पंजाब के उत्तर पूर्वी पहाड़ में भद्रवाह, चम्बा, भण्डी, सिमला, चकराता, बाहुल, स्थिति आदि जगहों में तथा इसके अगल–बगल में बोली जाती है । भारत के 1961 के जनगणना के अनुसार इनकी संख्या 6,59,556 मिलती है। इसकी प्रमुख भाषिकाओं में– सिरमौरी, बघाती, चमेअली, म्योठली और बहित्या, सिराजी, सोदोची (सतलज वर्ग) कुलुपी, झतरी, (कुल्लू वर्ग) भण्डेल्ला, पहाड़ी, सुकेती (मंडी वर्ग का), भद्रवाही, पाडरी, भरेसी (भद्रवाह वर्ग) लाइली और हमीरपुरी भी इसी वर्ग के है।

गढ़वाली :

गढ़वाल की भाषा गढ़वाली है। पुराणों में इसका नाम केदार खण्ड,

उत्तराखंण्ड आदि है। ई0 1961 की जनगणना में 8,09,146 गढ़वाली भाषा–भाषी भारत में दीखते हैं। यह संख्या भारत के नेपालियों से कम है।

यह टेहरी, अलमोड़ा और सहारनपुर, देहरादून, बिजनौर तथा मुरादाबाद के कुछ भागों में बोली जाती है । इसकी लिपि देवनागरी ही है ।

गढ़वाली के साथ ही कुमाऊँनी का भी नेपाली से घनिष्ठ सम्बन्ध है। सिंजाली गढ़वाली और कुमाऊँनी एक ही भाषा की सन्तान है।

कुमाऊँनी :

कुमाऊँनी और सिंजाली का स्त्रोत एक ही है। एक ही साथ कुमाऊंनी, गढ़वाली और नेपाली का उद्‌भव तथा विकास हुआ होगा । ये तीनों भाषाएं विक्रम संवत तेरहवीं शताब्दी तक एक ही होंगी । उसके बाद ही ये स्वतन्त्र रूप से विकसित हुई होंगी । कुमाऊँ (कूर्माचल) की भाषाको कुमाउनीया, कुमैयाँ कहा जाता है। यह भाषा अभी अल्मोड़ा, नैनीताल, पिथौरागढ़, चामधैली और उत्तरांचल में बोली जाती है। कुमाऊँनी के पूर्व में नेपाली भाषा, दक्षिण में पांचाली हिन्दी, पश्चिम मे गढ़वाली और उत्तर में तिब्बती बोली जाती है ।

नेपाली :

नेपाली को ग्रियर्सन ने पूर्वी पहाड़ी कहा है। यहां नेपाली भाषा के ऐतिहासिक क्रम-विकास की संक्षिप्त चर्चा करेंगे ।

नेपाली भाषा के इतिहास को मोटे रूप से तीन काल में विभाजित किया जा सकता है :-

क) प्राचीन नेपाली - प्रारम्भ से ई0 की चौदहवीं शताब्दी तक ।

ख) मध्यकालीन नेपाली - पन्द्रहवीं शताब्दी से उन्नीसवीं शताब्दी तक।

ग) आधुनिक नेपाली - बीसवीं शताब्दी से अब तक ।

प्राचीन नेपाली :

"प्राचीन काल से ही हिमाली क्षेत्र के पश्चिमी भाग में बड़ी केदार जैसे तीर्थस्थल होने के कारण भारत के विभिन्न क्षेत्रों में आर्यभाषा-भाषी जन आते रहते थे । इस प्रकार आने वालों में से कुछ वहीं रूक गये । इस प्रकार यहां रहने तथा नये आगन्तुकों की संख्या बढ़ते जाने के कारण इस क्षेत्र में आर्य भाषा भाषियो की संख्या बढ़ती गयी । भारत में मुसलमानों द्वारा पीड़ित शरणार्थी बहुत बड़ी संख्या में कुमाऊँ, गढ़वाल आये और नेपाल तराई होते हुए ये पहाड़ी क्षेत्र में भी प्रवेश पा गये। इस प्रकार क्रमश नेपाल के कर्णाली, गण्डकी और वागमती क्षेत्र में आर्य भाषा-भाषी जन का प्रसार हुआ । कर्णाली क्षेत्र में पहले से ही आकर रहने वाले खसों के बीच कुछ कुमाऊँ और गढ़वाल की तरफ से आने वाले और कुछ सीधे तराई की तरफ से आने वाले मिलकर रहने लगे। लेकिन शुरू में विशेष

प्रभुत्व खसों का ही था। पश्चिमी क्षेत्र में जनसंख्या के घनत्व और आबादी जगह जमीन की कमी से पुराने और नवागन्तुक खस, राजपूत और ब्राह्मण क्रमशः पूरब की तरफ बढ़े और क्रमशः गंण्डकी, वाग्मती और कोशी क्षेत्र में फैल गये।[1] इसी समय अलाउद्दीन खिलजी ने 1303 में चित्तौर पर आक्रमण किया और रत्नसिंह के भाई, लड़के इधर-उधर भागते चले। रत्नासिंह के भाई कुम्भकर्ण के बंशज कुमाऊँ आये और उसके बाद पाल्पा जाकर वहां अपने राज्य का विस्तार करने लगे। इनकी भाषा शौरसेनी अपभ्रंश से विकसित राजस्थानी थी।[2] पूरब तरफ गये हुए खस ब्राह्मणों की भाषा[1] को गुरूंड, मगर, तमाड., नेवार, राई, लिम्बू आदि भाषा-भाषियों ने "खसकुरा" कहा । "नेपाली" भाषा के इस युग में हम काचल्ल, अशोकचल्ल, लितारीमल्ल, रिपूमल्ल, आदित्यमल्ल, पुष्यमल्ल, पृथ्वीमल्ल, कर्णाली, अंचल के राजाओं के द्वारा राज्य विस्तार मिलता है तो साथ ही विशाल खस राज्य पृथ्वीमल्ल के बाद छिन्न-भिन्न होने के प्रमाण भी मिलते हैं। इस प्रकार अलग-अलग होने के बावजूद नेपाली भाषा-भाषी पहाड़ी क्षेत्र में जिधर-तिधर फैलने लगे और भाषा के माध्यम से अखंण्डता की आधारशिला निर्मित हुई।

नेपाली भाषा का प्राचीनकाल इसका प्रथम प्रसारकाल है, इस समय इसका मूल स्थान कर्णाली अचल होने के बाजूद भी यह पूर्वी पहाड़ी क्षेत्र में भी फैलने लगा था । तेरहवीं शताब्दी के अन्त में काठमांडू पर आक्रमण करने वाले खस राजा जितारीमल्ल और उसके बाद आने वाले रिपूमल्ल और आदित्यमल्ल के

---

1. श्री चूड़ामणि उपाध्याय रेग्मी - नेपाली भाषा की उत्पत्ति, पृ0 50-51
2. सूर्य विक्रम शवाली - नेपाली भाषा के विकास का संक्षिप्त इतिहास।

के साथ आने वाले कुछ प्राचीन नेपाली भाषा–भाषी यहीं बस गये। आदित्यमल्ल का नेपाली में लिखा हुआ ई0 सं0 1321 का अभिलेख गोर्खा जिला के "ताघवाई" नामक एक "गुम्बा" में मिला और यही अभी तक प्राप्त नेपाली भाषा का सर्वप्राचीन नमूना है।[1] मोटामोटी तौर पर आधुनिक आर्य भाषा का समय के और इसके बाद का नमूना हम प्राचीन बंगाली, मैथिली, गुजराती, मराठी, राजस्थानी भाषाओं का हम पाते हैं तो प्राचीन नेपाली का लिखित नमूना भी। 1321 ई0 तक का पाते हैं। इस प्रकार आदित्यमल्ल का ताम्रपत्र (1321), पुष्यमल्ल का तामपत्र (1328, 1336, 1337 ई0) पृत्वीमल्ल का कनकपत्र (1356) और ताम्रपत्र (1358), अभयमल्ल का ताम्रपत्र (1346 ई0), मोदिनी वर्मा का ताम्रपत्र (1393 ई0), संसार वर्मा का तामपत्र (1396 ई0), बलिराज का ताम्रपत्र (1398 ई0), मेदिनी वर्मा और अजितवर्मा का ताम्रपत्र (1437 ई0), विवोधशाही का ताम्रपत्र (1498 ई0) आदि ताम्रपत्रों में प्राचीन नेपाली का नमूना मिलता है।[2]

मध्यकालीन नेपाली :

मध्यकालीन नेपाली का समय ई0 की सोलहवीं शताब्दी से ई0 के उन्नीसवीं शताब्दी तक है। सुविधा के लिए इस काल को पूर्व मध्यकाल और उत्तर मध्यकाल में विभाजित किया जा सकता है । नेपाल के एकीकरण से पूर्व का समय नेपाली भाषा का पूर्वमध्यकाल है तो उसके बाद का समय उत्तरमध्य काल है ।

---

1. मोहन प्रसाद – मध्यकालीन अभिलेख, पृ0 1–8.
2. चूड़ामणि उपाध्याय रेग्मी – नेपाली भाषा की उत्पत्ति, पृ0 52.

पूर्वमध्यकाल नेपाली भाषा–भाषियों के लिए दूसरा प्रसार युग है। सोलहवीं शताब्दी तक भी भारत के पड़ोसी राज्यों से पहाड़ी में आने वालों तथा पश्चिम से पूरब की ओर जाने वालों का क्रम विच्छिन्न नहीं हुआ था। मुसलमानों के आक्रमण से बचने के लिए अब कुमाऊँ भी सुरक्षित नहीं रहा। इस कारण कन्नौज के ब्राह्मण, राजस्थान के राजपूत तथा कुमाऊँ और गढ़वाल के खस ब्राह्मण भी नेपाल आने लगे । 1620 ई0 में जहांगीर के गढ़–कुमाऊँ पर आक्रमण के बाद बहुत से लोग अपने जानमाल, धर्म की रक्षा के लिए नेपाल आ गये। ये नवागन्तुक ब्राह्मण अपने धार्मिक आचरण में कट्टर होने के बाजूद अपने आचार–विचार में कुछ उदार थे । अतः पूर्वागत "पूर्विया" और नवागत कुमैया के बीच रीति–रिवाज में कुछ भिन्नता के बाजूद इधर आने पर उनकी भाषा में कुछ अनतर नहीं रहा ।[1]

सोलहवीं शताब्दी में नेपाली भाषा–भाषियों का विस्तार और तेजी से होने लगा । पात्या के सोनवंशी राजा मुकुन्दसेन के (1518–1553) राज्य विस्तार होने के बाद नेपाली भाषा–भाषी पूर्वी क्षेत्र में फैले और नेपाली भाषा ने भोजपुरी और मैथिली के साथ भोट–वर्मी भाषाओं से भी प्रभाव ग्रहण किया। पीछे सत्रहवीं शताब्दी में कुछ नेपाली भाषा–भाषी बिहार के रामनगर में आकर बसे। इसी समय एक तरफ तराई के साथ जुड़े हुए क्षेत्रों से विशेषत सवर्ण भाषाओ के प्रभाव आए तो दूसरी ओर पड़ोसी भाषाओं के मार्फत अरबी, फारसी शब्द भी नेपाली भाषा मे दिखाई पड़ने लगे। इस समय में काठमाण्डो में मल्ल राजाओं

---

1. कालिभक्त पन्त. हाम्रो सांस्कृतिक इतिहास, पृ0 51–53.

2. श्री चूड़ामणि उपध्याय रेग्मी – नेपाली भाषा की उत्पत्ति, पृ0 53.

के तीन राज्य थे। यहां की मुख्य भाषा नेवारी थी लेकिन मैथिली भी मल्ल राजाओं के समय की प्रमुख साहित्यिक भाषा थी । इस समय तक नेपाली का प्रसार क्षेत्र हमें लक्ष्मी नरसिंह मल्ल के शिलालेख (1341) और प्रतापमल्ल के शिलालेखों (1670) से स्पष्ट होता है ।

सोलहवीं शताब्दी के बाद कर्णाली अंचल में छोटे-छोटे बाईस राज्य थे, लेकिन उनके द्वारा प्रयुक्त नेपाली भाषा का नमूना प्रचुर मात्रा में मिलता है। भानशाही, सुतिशाही, संग्रामशाही, साइमल्लशाही, वीरभद्रशाही, जहांगीरशाही, सुरन्यशाही, सुदर्शनशाही के अभिलेखों से पूर्वमध्यकालीन नेपाली के केन्द्रीय भाषा का नमूना मिलात है । इसी तरह पश्चिमी भाषिका का नमूना हमें वाणी विलास के ज्वरोत्पत्ति चिकित्सा (1716) और प्रेमनिधि पन्त के प्रायश्चित प्रीप (1723) तथा "नृपश्लोकी" में मिलता है। 1650 ई0 के आसपास लिखी गयी "वाजपरीक्षा" में ब्रजभाषा का भी प्रभाव दिखता है ।

मुस्लिम धर्मावलम्बी चूड़ीहारे नेपाल के पहाड़ी क्षेत्र में इसी समय पूर्वी और पश्चिमी भाग में फैले तथा चूड़ी बनाकर स्थानीय जनता के बीच बेंचकर वे वहां जम गए। अपनी एक अलग भाषा लेकर आए हुए इन मुसलमानों की भाषा का नेपाली पर प्रभाव पड़ा और इस तरह उर्दू मिश्रित नेपाली का जन्म हुआ। [1]

नेपाली भाषा-भाषी इस अवधि में पहाड़ी क्षेत्र में व्यापक रूप में फैल गये। पश्चिम से पूरब को आने वाले नेपाली भाषा-भाषियों की संख्या बढ़ने

---

1. कालिभक्त पन्त - उद्धृत ने0प0उ0, पृ0 54.

के कारण यहां के भोट-वर्मी भाषी के बीच आपसी सम्पर्क के लिए माध्यम भाषा के लिए नेपाली प्रयुक्त हुआ ।उस समय की चौबीस राज्य में नेपाली प्रशासन भाषा बनी । नेपाली इतना विस्तृत हो जाने के कारण ही श्री 5 बड़ा महाराज पृथ्वीनारायण शाह द्वारा नेपाल के एकीकरण में आसानी हुई ।

उत्तर-मध्यकाल नेपाली भाषा का तीसरा प्रसार युग है। विशाल नेपाल के निर्माण के बाद छोटे-छोटे राज्य विशाल राष्ट्र में मिल जाने के कारण लोग अपनी सुविधानुसार वसोवस के लिए इधर-उधर फैलने लगे। नेपाली लोग तराई में आये, पहाड़ के कोना-कोना में फैल गये तथा नेपाली भाषा एकीकृत नेपाल के प्रशासन की माध्यम भाषा बनी । राजेन्द्र लक्ष्मी तथा बहादुरशाह के नायबी में नेपाल का विस्तार पूर्व विप्टा से पश्चिम कांगड़ा तक होने पर कुमाऊँ नेपाल के भीतर आ गया और वहां भी नेपाली का प्रभाव पड़ा । नेपाली भाषा-भाषी दार्जिलिंग तथा भूटान में भाग नहीं गये, बल्कि जंगल ही जंगल आसपास में भी अपना डेरा-डण्डा जमा लिया । सुगौली सन्धि (1815 ई0) के बाद नेपाल के राजनीतिक सीमा निर्धारण के बाद भी नेपाली भाषा का विस्तार नहीं हुआ। 1820 ई0 में ही कलकत्ता स्थित फोर्ट-विलियम कालेज के प्राध्यापक जे0ए0 एटन ने नेपाली भाषा का प्रथम व्याकरण लिखा । भीमसेन थापा के प्रधानमन्त्रित्वकाल में नेपाली सेना में अंग्रेजीकरण होने पर अनेक अंग्रेजी शब्द नेपाली में आये। उसके बाद अंग्रेजो से सम्बन्ध बढ़ने के कारण भी अंग्रेजी का प्रभाव नेपाली पर पड़ा । 1885 ई0 के आसपास ब्रिटिश फौज में नेपाली जवानों के भर्ती होने की व्यवस्था हुई। उसके बाद नेपाल के बाहर जाने वाले मगर, गुरूङ, राई, लिम्बू, नेवारी आदि भाषा-भाषी एक दूसरे से बोलचाल में नेपाली भाषा का ही प्रयोग करते रहे ।

इसी समय पड़ोसी देश भारत में पहले से ही चली आ रही ब्रजभाषा विशेष रूप से कविता के लिए स्वीकृत भाषा होने के कारण उसका प्रभाव लिखित नेपाली में मिलता है, साथ ही कम मात्रा में मैथिली और भोजपुरी के भी अंश मिलते हैं। उसी तरह नेपाली भाषा मगर, गुरूड, थकाली, तामाड़, चेपाड, नेवारी, धामी, राई, लिम्बू, सुनुार, लेपचा, धिमाल आदि भोर वर्मी। और थास दरे, दनुवार, कुम्हाले, आदि आर्य परिवार की भाषाओं का विभिन्न जगहों में बोली जाने वाली नेपाली भाषा पर प्रभाव पड़ा तथा नेपाली का इन भाषाओं पर । भारत के पड़ोसी भाषाओं के मार्फत नेपाली में पुर्तगाली भाषा के शब्द के आये तथा प्रशासन के स्तरीकरण के सिलसिले में अड्डा अदालत में अरबी, फ्रान्सीसी शब्द भी आये। भारत में ब्रिटिश शासन के बाद भी अड्डा–अदालत की स्वीकृत भाषा फारसी होने के कारण नेपाली में भी, इनका प्रभाव स्वाभाविक था ।

उत्तरमध्यकाल में नेपाली भाषा गण्डकी क्षेत्र को छोड़कर वाग्मती क्षेत्र को अपना केन्द्र बनाने लगी थी । फिर भी उस समय नेपाली भाषा और इसके वक्ता को गोर्खाली ही कहा गया । स्वयं आधुनिक नेपाल के निर्माता बड़ा महाराज पृथ्वीनारायण शाह के चिट्ठी–पत्री, उनके दिव्योपदेश, शान्तिवल्लभ के हास्यकदम्ब का नेपाली उल्था (1879 ई0) गोर्खा वंशावली और पृथ्वीनारायण शाह की जीवनी भानुभक्त के हितोपदेश, मित्रलाभ (1776 ई0) जैसे कृति के साथ औषधिग्रन्थ, तीन आहान राजधर्म, गीतगोविन्द, मुद्राराक्षस, पुराण, महाभारत, रामायण के अनुवाद जैसे प्रशस्त गद्यकृति मिलते है ।

अभी तक उपलब्ध पद्य नेपाल के निर्माण के बाद का ही मिलता है। भानुभक्त आचार्य ही इस युग के प्रतिनिधि कवि हुए जिनका रामायण नेपाली भाषा के प्रसार में विशेष रूप से सहायक हुआ । उन्नीसवीं शती के अन्त के

आसपास मोतीराम भट्ट ने नेपाली भाषा की उन्नति के लिए सक्रिय सहयोग दिया। उन्होंने भानुभक्त की रचना को प्रकाशित कराया, सामूहिक रूप में साहित्य सृजन की चलन चलाई, नेपाली में नाटकों का अनुवाद कर उर्दू और हिन्दी के नाटक, जो दरबार में अभिनीत होते थे, उनको नेपाली मुखौटा दिया, पुस्तक तथा पत्र–पत्रिकाओं की तरफ ध्यान देकर आधुनिक युग की नींव डाली। उनकी भाषा में ही हम आधुनिक नेपाली का अंकुर पाते हैं, साथ ही भानुभक्त कालीन भाषा के लक्षण से भी युक्त है। अतः हम "गोरखापत्र" के प्रकाशन (1901) के बाद की भाषा को आधुनिक नेपाली भाषा कहते हैं ।

आधुनिक नेपाली :

स्थूल रूप से 1901 ई0 के बाद नेपाली भाषा आधुनिक युग में पदार्पण करती है । गोरखापत्र के प्रकाशन के साथ नेपाली लेखन शैली ने बोलचाल की सरल और स्वाभाविक राह ली। नेपाली भाषा के वर्ण, व्याकरण और शब्द भण्डार में परिवर्तन परिलक्षित होता है। नेपाली भाषा का व्याकरण और शब्दकोश का निर्माण होता है। पुस्तक पत्रिकाओं की संस्था की स्थापना प्रकाशन में क्रमिक वृद्धि पठन–पाठन के माध्यम के रूप में नेपाली विषय रखा जाना आदि महत्वपूर्ण घटना 20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध अर्थात् 1950 तक के हैं। 1951 के बाद (प्रजातंत्र के बाद) पत्र–पत्रिका और संस्था की संख्या बढ़ी नेपाली भाषा में हिन्दी और अंग्रेजी के बढ़ते हुए प्रभाव को रोकने के लिए "अर्रोवादी आन्दोलन" शुरू हुआ। विभिन्न विषयो में पुस्तकों का प्रकाशन, देश–विदेश के रेडियो से नेपाली में समाचार और कार्यक्रम का प्रसार और देश–विदेश से नेपाली भाषा का अध्ययन अनुसंधान होने लगा । विश्वविद्यालय तथा अन्य संस्थाओं की स्थापना नेपाली भाषा ने नेपाल के संविधान में राष्ट्रभाषा के रूप में संवैधानिक मान्यता प्राप्त की तथा शिक्षा और

प्रशासन के माध्यम के रूप में नेपाली का व्यापक रूप में प्रचार–प्रसार हुआ। नेपाली भाषा का आधुनिक युग नेपाली भाषा का चौथा प्रसार युग है। नेपाली भाषा–भाषी पहले और दूसरे विश्व युद्ध में संसार के कोने–कोने में जाकर बढ़े। इस प्रकार बाहर जाने वाले नेपालियों में से कुछ बर्मा में रह गये जहां एक नेपाली समाज बन गया । इसी प्रकार 1947 में ब्रिटिश फौज के नेपालियों का विभाजन होने पर चार रेजिमेंट ब्रिटेन के हिस्सा में पड़ने के कारण, इसका मुख्य स्थान मलाया और सिंगापुर हो गया, और यहां भी इसका एक नेपाली समाज बना। इधर भारतीय फौज में भर्ती तथा अन्य किस्म के काम में लगे नेपाली भारत के उत्तर प्रदेश बिहार, बंगाल, आसाम तथा अन्य राज्यों में तथा सिक्किम तथा भूटान में स्थायी रूप से रह रहे हैं । नेपाल के भीतर भी पहाड़ से तरायी और तरायी से पहाड़ पर पूरब से पश्चिम, पश्चिम से पूरब आने–जाने के क्रम में नेपाली भाषाओं के विभिन्न भाषिकाओं के वक्ताओं में भी एक दूसरे की भाषिका का प्रभाव पड़ा, लेकिन सब तरफ पूर्वी भाषिका पर आधारित राष्ट्रभाषा नेपाली का ही व्यापक प्रचार–प्रसार हुआ ।

****

नेपाल के बाहर नेपाली की स्थिति

नेपाली भाषा–भाषियों[1] में नेपाली भाषा बोलने वाले पूर्वजों के बंशज मात्र नही हैं; बल्कि नेपाल और नेपाल के बाहर की अन्य जातियां भी इसे मातृभाषा के रूप में अपना चुकी हैं । नेपाल के मगर, गरूड., नेवार, लिम्बू, सुनुवार, यामी, येपाड, राजी, व्यासी, भोटे, दरै आदि जातियों के द्वारा नेपाली को ग्रहण करने की बात 1952–54, 1961 और 1971 के जनगणना विवरण की तुलना से स्पष्ट होती है। भारत में रहने वाले मगर, गरूड., नेवार, राई, लेम्बू, लेप्था और मोटे भाषा–भाषियों ने भी अपनी भाषा को छोड़कर नेपाली भाषा को अपना लिया । सिक्किम के कतिपय आदिवासी इसे अपनी मातृभाषा के रूप में स्वीकार कर चुके हैं ।

नेपाल के बाहर भारत में नेपाली भाषा–भाषी[2] विभिन्न आर्य और अनार्य परिवार के साथ रहकर भी अपनी भाषा के अस्तित्व को कायम रखे हुए हैं। सिक्किम, वर्मा, मलाया, पाकिस्तान, सिंगापुर, बंगलादेश, दार्जिलिंग, आसाम, देहरादून में नेपाली भाषा बहुत अधिक संख्या में है। उनका अपना एक समाज ही बनता जा रहा है । रूस, अमेरिका, चीन, विलायत आदि देशों में यह विश्व की एक भाषा के रूप में बोली जाने लगी है। नेपाल के साथ मैत्री सम्बन्ध के साथ ही इसका प्रसार क्षेत्र भी विदेशों में बढ़ता जा रहा है। 1921 की जनगणना के अनुसार नेपाली बोलने वालों की संख्या भारत में डेढ़ लाख से कुछ ही कम थी।[3]

---

1. श्री चूड़ामणि उपाध्याय रेग्मी – नेपाली भाषा की उत्पत्ति, पृ0 2–3.
2. श्री गोपालनिधि तिवारी – नेपाली भाषा को बनोट, पृ0 18.
3. डा0 भोलानाथ तिवारी – हिन्दी भाषा, पृ0 121.

नेपाल के चौदहों अंचल में नेपाली भाषा की ही प्रधानता है। राष्ट्रभाषा होने के कारण इसके माध्यम से ही सभी बोलने लगे हैं ।

इस प्रकार नेपाली का प्रसार क्षेत्र दिनोदिन अत्यन्त व्यापक होता जा रहा है ।

नेपाली भाषा की वर्तमान स्थिति

वर्तमान समाज में नेपाली भाषा का अध्ययन नेपाली और विदेशी विद्वानों द्वारा व्यापक रूप से हो रहा है। अभी भारत, अमेरिका, रूस, विलायत, चीन आदि देशों में इस पर अनुसंधान, पुस्तक–पत्रिकाओं का प्रकाशन, रेडियो प्रसारण आदि कार्य बड़ी तेजी से हो रहा है। समर इन्सिट्च्यूट ऑफ लिंग्विस्टक्स की स्थापना के बाद नेपाल के विभिन्न भाषाओं के वर्णनात्मक अध्ययन के क्रम में नेपाली पर भी सूक्ष्म रूप से अध्ययन हो रहा है। इसी संस्था से भाटिया हरी के सम्पादन में बोल–चाल की नेपाली (कनवरसेशनल नेपाली) 1969 में आस्टिनटे, ए. होल्सहाउजेन वल्भमणि दहरा और चूड़ामणि बन्धु के संयुक्त लेखन में भाषा के खडीय वर्गों के अध्ययन श्री बन्धु के ही संकलन और सम्पादन में नेपाली भाषा की कम्प्युटर शबनुक्रमणिका, भाटिया हरी का नेपाली वाक्यों का शोध पत्र (टेंटेटिव सिस्टमैटिक आर्गेनाइजेशन अफ नेपाली सेंटेंसेज) आदिप्रकाशित हुए।

इसी तरह फ्रैंकलिन सी साउथवर्थ का रूपानतरण व्याकरण पूना से 1967 में प्रकाशित हुआ । इसका नाम है नेपाली ट्रांसफॉरमेशनल स्ट्रक्चर्स: ए स्केच। 1969 में केरल विश्वविद्यालय के भाषा विज्ञान विभाग के विद्यार्थी ने नेपाली भाषा के विभिन्न पक्षों पर शोध पत्र लिखा। दार्जिलिंग में नेपाली के प्रयोग,

अनुसंधान और मौलिक लेख, उच्च कक्षा में अध्ययन और इसको संवैधानिक मान्यता दिलाने का कार्य चल रहा है ।

1969 में ही एशियाई जन एकता का अनुसंधान केन्द्र, विज्ञान एकामी सोवियत संघ से 3600 शब्दों का "नेपाली रूसी शब्दकोश" का सम्पादन ई0स0 राविनोमिच न0ई0 कारोसेम और ल0आ0 आगानीना के द्वारा किया गया। इस कोश के अन्त में नेपाली भाषा का संक्षिप्त व्याकरण भी प्रस्तुत है। अमेरिका के कौनेल विश्वविद्यालय की श्रीमती अब्दुल्की ने 1969 में एम.ए. के शोधपत्र के रूप में कारक व्याकरण और नेपाली भाषा और 1974 में पी0एच0डी0 के शोध पत्र के रूप में डा0 ग्राइम्स के सिद्धान्त के आधार पर नेपाली वाक्य का अर्थपरक विश्लेषण प्रस्तुत किया । 1974 में ही श्री बल्लभमणि दाहाल का पूना विश्वविद्यालय में लेख्य और कथ्य नेपाली का वर्णन ए.टिक्रपशन ऑफ नेपाली लिटरेरी एण्ड कोलोकिपल शीर्षक विषय में पी.एच.डी. के लिए शोध प्रस्तुत किया गया। इसी प्रकार नेपाली के अनय विद्वान रात–दिन नेपाली भाषा के भण्डार की श्री वृद्धि में क्रियाशील हैं। देश और विदेशों में शोध कार्य क्रियान्वित हो रहे हैं।

नेपाल के वाह्य सम्पर्क में क्रमिक वृद्धि विदेशियों का नेपाल आगमन और नेपाल की भाषा संस्कृति और अन्य विविध विषयों में ज्ञान प्राप्त करने तथा अनुसंधान के कार्य में अभिरूचि प्रकट हो रही है, एक तरफ देश के बाहर नेपाली भाषा का प्रयोग पठन–पाठन और अनुसंधान का कार्य हो रहा है तो दूसरे ओर देश के भीतर सम्पूर्ण नेपाली जीवन के अभिन्न अंग के रूप में नेपाली भाषा का प्रयोग दिखायी पड़ता है। सरकारी स्तर से नेपाली भाषा के संवर्धन के क्षेत्र में हुए प्रत्यक्ष कार्य जैसे–प्राविधिक शब्दावली का निर्माण संचार और शिक्षा के माध्यम

के रूप में नेपाली का प्रयोग प्रशासन तथा न्यायालय में नेपाली का प्रयोग, संस्थाओं के माध्यम से नेपाली की अभिव्यक्ति क्षमता में विकास का प्रयत्न तथा पंचायत स्थानीय विकास योजनायें गांवों के भोर राष्ट्रीय अभियान जैसे कार्यों से भी नेपाली भाषा के व्यापक प्रयोग में भी सहायता मिली है ।

स्वर्गीय श्री पाँच महाराजाधिराज महेन्द्र की सदिक्षा से उनके ही कुलपतित्व में नेपाली भाषा और साहित्य की उन्नति के लिए "रायल नेपाल एकेडेमी" की स्थापना 1957 में हुई। नेपाली भाषा और साहित्य की उन्नति के लिए एकेडमी की देन एवं सहयोग महत्वपूर्ण है। नेपाली साहित्य संस्थान. की स्थापना कवि केदारमान व्यथित के प्रयास से 1962 में हुई। इस संस्था ने देश के विभिनन स्थानों में तथा देशव्यापी साहित्य सेमिनारों द्वारा नेपाली भाषा और साहित्य की समस्याओं पर विचार–विमर्श कराकर इसके प्रचार और उन्नति में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

संक्षेप में नेपाली नेपाल अधिराज्य के समस्त राष्ट्रीय राज कार्य शिक्षा दीक्षा संस्कृति और साहित्यिक कार्य–कलाप की माध्यम भाषा है। नेपाली नेपाल में एकछत्र राज्य स्थापित कर अपनी विजय पताका फहराते हुए बड़ी तेजी से चारों ओर विश्व में फैलती जा रही है ।

नेपाल की भाषिक स्थिति

पूरे नेपाल को प्रमुख भाषाओं की दृष्टि से अगर क्षेत्रों में बांटा जाय तो उसके तीन क्षेत्र होते हैं :-

(1) पहाड़ी क्षेत्र जहां प्रमुख रूप से नेपाली व उसकी बोलियां बोली जाती हैं।

(2) काठमांडू उपत्यका तथा अन्य उपत्यका क्षेत्र जहां प्रमुख रूप से नेवारी या उसकी बोलियां बोली जाती हैं ।

(3) तराई तथा भीतरी तराई क्षेत्र जहां प्रमुख रूप से हिन्दी या उसकी बोलियां बोली जाती हैं ।

नेपाल एक बहुभाषी राष्ट्र है। सिर्फ पहाड़ी क्षेत्र में ही यहां तेरह साक्त भाषाएं[1] बोली जाती हैं। बहुभाषी राष्ट्र में भाषा की और एकीकरण की जो समस्या होती है, उससे नेपाल मुक्त है, ऐसा भी नहीं है। ऐसी स्थिति में प्रमुखता

---

1. आधुनिक नेपाल के सिर्फ पहाड़ी क्षेत्रों में ही तेरह बिल्कुल भिन्न तथा स्तरीय बोलिया बोली जाती हैं- खस या पर्वातेया, मगर, गरूड, सुनुवार, कावरी, हेथु, चेपांग, कुसुन्डा, गुरमी, नेवारी, किराती, लिम्बूआन और लेप्चा। केवल प्रथम को छोड़कर ये अन्य अनेक भाषाएं मंगोल हिमालयी परिवार की हैं और वे सभी उससे बहुत घनिष्ठ रूप से जुड़ी हैं।

और बोलने वालों की आवासीय स्थिति यानि उनकी आबादी की सघनता की दृष्टि से भाषायी वर्गीकरण अधिक उपयुक्त ठहरता है। भौगोलिक दृष्टिकोण से भी नेपाल का लगभग उसी प्रकार वर्गीकरण अब तक के सभी नेपाली एवं विदेशी भूगोलवेत्ताओं ने किया है। नेपाल के प्रसिद्ध भूगोलवेत्ता डा0 हर्कबहादुर गऊड़ ने नेपाल को प्रकृतिक बनावट की दृष्टि से चार भागों में बांटा है, पर भाषिक और आबादी की दृष्टि से डा0 गऊड़ के वर्गीकरण का सुदूर उत्तरी "भोर" (उपत्यका) क्षेत्र जो तिब्बत की सीमा से लगता है, यह नेपाली भाषा के क्षेत्र के अन्तर्गत ही किया जाएगा । क्योंकि एक तो उस क्षेत्र में आबादी नगण्य है, दूसरी बात वहां भोट या तिब्बती भाषा–भाषी जो भी थोड़े–बहुत लोग तिब्बत से आकर बस गये हैं, वे 1953 ई0 से तिब्बत पर चीन के आक्रमण की आन्तरिक प्रक्रिया शुरू होने या आक्रमण के बाद से अब तक बसने वाले लोग हैं। इसलिए उनका अपना कोई भाषायी क्षेत्र नहीं है और है भी तो नहीं के बराबर जो यहां उल्लेखनीय नहीं दीखता।

नदी, घाटी, पर्वत आदि का भाषाओं की स्थिति के बीच विभाजक रेखाएं खींचने में बहुत बड़ा हाथ होता है। नेपाल तो स्वयं प्राकृतिक रूप से ही उपर्युक्त तीन क्षेत्रों में बंटा हुआ है। इसलिए भी इन्हीं तीन आधारों पर भाषायी वर्गीकरण ठीक जँचता है ।

पहाड़ी क्षेत्र और नेपाली भाषा :

नेपाल का सुदूर उत्तरी और उत्तरी क्षेत्र जो इस देश की पूर्वी सीमा मेची नदी से पाश्चिमी सीमा महाकाली नदी तक फैला हुआ है, यही क्षेत्र पहाड़ी प्रदेश के नाम से जाना जाता है। इस प्रदेश के उत्तर में चीन शासित तिब्बत की सीमा लगती है और दक्षिण में नेपाल का तराई प्रदेश पड़ता है। यह पहाड़ी प्रदेश इस देश के सिर तथा दोनों ओर फैली दो बाहुओं के समान हैं जिस पर इस राष्ट्र

को गर्व है तथा यहां के लोगों की भुजाओं के शौर्य उनकी वीरता और चमकती "खुकरियों" की धार में सदा से इस देश का मस्तक ऊँचा रखा है। नेपाली मूलरूप से इसी पहाड़ी प्रदेश की भाषा है। यूँ इस पहाड़ी प्रदेश में विभिन्न जातियां रहती हैं जिसमें सामाजिक मर्यादा और आर्थिक सम्पन्नता की दृष्टि से क्षत्रिय एवं ब्राह्मण श्रेष्ठ जातियां हैं। वर्तमान समय तक की सेना और प्रशासन में यही दो जातियां मुख्य भूमिका लेती आयी हैं। नेपाल एक हिन्दू राष्ट्र है। इसलिए सामाजिक और धार्मिक दायित्व यहां के विनीत हिन्दू नरेशों ने सदा से ब्राह्मण के कन्धों पर डाल रखा है। धर्म जिस राज्य का प्रमाण हो राजा जहां सदा से कर्मचारी क्षत्रिय रखा हो वहां दायित्वों का यह बंटवारा संस्कारजन्य, स्वाभाविक तथा हिन्दू धर्मानुकूल भी है। दूसरी ओर इसे यहां के वीर क्षत्रियों तथा क्षत्रिय कुल में श्रेष्ठ ठकुरी वंशी महान नृपतियों, राजपुरूषों को एकाग्राचित्त होकर देश की सुरक्षा, राजनीतिक स्थिरता और न्याय को कामयाब रखने का भरपूर अवसर भी प्राप्त होता रहता है ।

नेपाली का पुराना नाम "खसकुरा", "खसभाषा" अथवा पर्वतिया :

मुख्यरूप से नेपाली, जिसका पुराना नाम "खसभाषा" या "खसकुरा" है, इन्हीं पश्चिम नेपाल के पहाड़ों में भारत से प्रवेश कर पूरब की ओर फैलती गयी। लड़ाकू खस जाति या खस वर्ग, जो बाद में अपनी बीसा के लिए प्रसिद्ध क्षत्रिय के नाम से जाने जाते रहे हैं, उनकी भाषा है। खसों के सम्बन्ध में वैसे कई धारणाएं पायी जाती हैं, पर यह निश्चय अब कर सकना मुश्किल है कि भारतीय इतिहास के पन्नों पर कई बार उभरी वह प्राचीन उस जाति और इस क्षत्रिय जाति में कितना कौन घुलमिल गया है। वैसे कुमाऊँनी भाषा की जाति मूलक कहावतों में क्षत्रियों के लिए अब भी "खस" या "खशिया" सम्बोधन का प्रयोग

मिलता है।[1] डा0 कमल प्रकाश मल्ल ने क्षत्रियों के लिए ही "खस" संज्ञा का प्रयोग किया है तथा उन्हें, ठक्कुरियों एवं ब्राह्मणों को भारत से आया मानते हैं। भारत में विभिन्न मुस्लिम आक्रमणों के फलस्वरूप राजस्थान से हिन्दू राजपूत (क्षत्रिय) योद्धाओं की जो अनेक टोलियां निरन्तर गढ़वाल, कुमाऊँ प्रदेश होते हुए पूरब की ओर के पहाड़ों में फैलती गई, सम्भव है उनके चपेट में नेपाल

---

1. दक्षिण उत्पन्न सिर्फ एक भाषा जो इन पहाड़ों में बोली जाती है वह है खस या पर्वतिया – जो एक भारतीय प्राकृत है, यहां उनके बीच ई0 बारहवीं से पंद्रहवीं शताब्दी में उपनिवेश के क्रम में लायी गई और अब सामान्यतया यह इतना बिखरा हुआ है कि महाकाली के पश्चिमी क्षेत्र में इसने वहां की स्थानीय बोलियों को लगभग समाप्त ही कर दिया है। वैसे उस नदी के पूर्वी इलाके में वह इतनी सुविधा से नहीं बढ़ पाई उसके पीछे यह बात थी कि इधर त्रिशूलगंगा बीच में पड़ती थी जिसने इस भाषायी साम्राज्य को आगे बढ़ने से रोका । उसने पूरब में वहां की स्थानीय मातृभाषाओं को और पश्चिम में खस या पर्वतिया दो अलग भाषायी साम्राज्य को लगभग समान रूप से विभाजन कर रखा था । पर्वतिया भाषा सरल, शब्दग्राही और अशिक्षितों के द्वारा बोली जाने वाली थी, पर उन जोशीले सैनिकों और राजपुरूषों ने जो इसकी बोली बोलने वाले थे, इसे योग्य बनाया। लगभग इसकी पूरी वाक्य–रचना और प्रत्येक दस में से आठ शब्द वास्तव में हिन्दी है।

के पश्चिमी पहाड़ों में कुछ पहले से आकर रह रही साक्त खस जाति भी पूरी तरह आ गई हो तथा जिनकी गति को रोक पाना उनके लिए बिल्कुल असम्भव भी था । परिणामतः वह विशाल क्षत्रिय जाति में घुलमिल कर अपना जाति सूचक खस नाम भी खो चुकी हो, लेकिन उनकी भाषा ने अपना कोई न कोई स्वरूप फिर भी बना रखा होगा, जो उन क्षत्रिय वीरों की अपनी भाषा पश्चिमी हिन्दी यानी राजस्थानी के साथ सम्प्रक्त होकर क्रमशः हिन्दी से साधारण भिन्नता में विकसित होती गई हो।[1] फिर भी जब तक उसका एक स्पष्ट स्वरूप न बन गया हो तब तक वह उस क्षेत्र की भाषा खसकुरा के नाम से हीलोगों से आहत होती रही हो । इतना निश्चित रूप में कहा जा सकता है कि खसकुरा पश्चिमी नेपाल और गढ़वाल कुमाऊँ की कोई एक अच्छी बोली थी जिसका कोईलिखित

---

1. "खशि नैं जड़ : "खशिया (क्षत्रिय) को नहाकर जाड़ा होता है,
   बामन से जाड़ ब्राह्मण को भोजन के बाद जाड़ा लगता है।"
   खशिया कि रीस : खशिया का क्रोध भयंकर होता है, उसके क्रोध को भैंसे
   भैंसा कि तीस की प्यास सदृश कहा गया है।"
   खशि मनै ठाड. ठाड. : खशिया मनाने से भी नहीं मानता, अकड़ा रहता है।
   खशिये कि उल्टि खेपड़ि : "खशिया को बुद्धि नहीं होती ।"
   खशियैल पी भैंसक दूद : भैंस का दूध पीते रहने से खशिये में सूझ-बूझ नहीं
   दी सूज न बूज रहती ।"
   खशिये मित्यारि नै · खशिया को कभी मित्र नहीं बनाना चाहिए ।"

– "कुमाऊँनी लोक-साहित्य तथा गीतकार", डा० भवानीदत्त उत्प्रेती, प्रथम संस्करण 1976 पृ07.

साहित्य तो नहीं था, पर लोगों की जुबान पर उसका कोई प्रचलित लोक साहित्य अवश्य था ।

उन वीर क्षत्रिय योद्धाओं के पश्चिम से नेपाल में प्रवेश करने पर जो हाल खसों और वहां की स्थानीय भाषाओं का हुआ होगा लगभग वैसी ही स्थिति की चर्चा हॉग्सन महोदय ने उनके मध्य तथा पूर्वी पहाड़ों में फैलने के बाद परिणामों के सन्दर्भ में की है। वह नेवारी का उदाहरण देते हुए नेपाली द्वारा उसे अतिक्रमितकर मिटाये न जा सकने के पीछे तर्क देते हुए लिखते हैं कि सम्भवतः नेवारों की भाषा को, उनका अलग राज्य होने के कारण विकास और सम्प्रेषण की सुविधा उसे स्वतः प्राप्त हो चुकी थी। उससे उसे वंचित नहीं किया जा सकता था, पर उनके धर्म (बौद्ध) की दोनों ही, पुराने हिन्दू आगन्तुक तथा नये हिन्दू विशेषताओं ने ईर्ष्या की दृष्टि से अवश्य देखा। पहाड़ी प्रदेशों में बात कुछ भिन्न थी और इसके अतिरिक्त चाहे जो कारण रहा हो नवागन्तुकों का जो ज्वार दक्षिण से आता रहा वे मुख्य रूप से त्रिशूली के पश्चिम में बसते गये । ब्राह्मणप्रधान (वर्णाश्रमप्रधान) हिन्दू धर्म अब तक भी इसलिए वहां प्रमुखतः फैलता रहा है क्योंकि इसके सबसे बड़े समर्थक "खस" (क्षत्रिय) जाति तथा उनके बाद "मगर" और "गुरूड." जाति थी ।

दक्षिण (भारत से तात्पर्य) से आने वाले वे नवागंतुक लोग वे शरणार्थी ये जो वहां निरन्तर मुस्लिम आक्रमणों के कारण इधर आने को बाध्य हुए थे तथा वे संख्या में इतने अधिक थे कि पहाड़ों पर रहने वाले असभ्य और यत्र-तत्र बिखरे मूलवासियों के ऊपर अपनी भाषा एवं धर्म की छाप डालने में पूरी तरह समर्थ हो गये । ब्राह्मणप्रधान हिन्दू वर्णाश्रम धर्म की सहज व्यापकता और गहरी जड़ों

के कारण ही नेपाल में संस्कृत जानने वालों की संख्या बहुत अधिक है।[1] उसमें भी आज भी उनकी संख्या पश्चिम के पहाड़ों में सर्वाधिक है। रास्थान की ओर से जाने वाले वीर क्षत्रिय योद्धाओं ने जब नेपाल में प्रवेश प्रारम्भ किया तो उनके साथ उनके आश्रित ब्राह्मण लोग भी स्थायी रूप से ले आये धर्म और अपने आश्रयदाता राजा में निष्ठा रखने वाले थे। ब्राह्मण उनके सुख दुःख के सदा सल्वर रहे हैं। मुस्लिम आक्रमणों से टूटे हुए और निराश इन योद्धाओं को पुनः शक्ति संगठन कर नये राज्य स्थापित करने की प्रेरणा देने वाले भी अवश्य ही ये ही लोग रहे होंगे। धर्मविहित समाज के निर्माण में इन ब्राह्मणों की भूमिका निश्चय ही उल्लेखनीय और महत्वपूर्ण है ।

---

1. "गोरखों की भाषा", "परवतिया" नेपाल की प्रधान भाषा है। मध्य और पश्चिम के प्रान्तों में अधिकांश लोग उसी भाषा का प्रयोग करते रहे हैं। यह भाषा संस्कृत का एक अपभ्रंश है और नागरी–लिपि में लिखी जाती है। भोटियों की भाषा तिब्बती है, नेवार जाति के लोगों की बोली उन सबसे भिन्न है। नेपाल में संस्कृत जानने वाले भी पर्याप्त संख्या में हैं।"

   – राममूर्ति सिह, "हमारे पड़ोसी राष्ट्र", प्रथम संस्करण 1949 ई0 पृ0 178.

भैरहवां (रूपन्देही) – परिचय :

एशिया की ज्योति गौतम बुद्ध की जन्मस्थली लुम्बिनी के पास पश्चिम अंचल के विकास के मूलद्वार के रूप में भैरहवां (रूपन्देही जिला) स्थित है। इसके दक्षिण में भारत–नेपाल अन्तर्राष्ट्रीय सीमा फैला हुआ है।

विक्रम सं0 2028[1] की जनगणना के अनुसार – इस जिला की जनसंख्या 2,43,346 है। भैरहवां रूपन्देही जिला के अन्तर्गत आता है, जो कि जिला का मुख्यालय है। अंचल के छै जिलों में जनसंख्या की तुलना में रूपन्देही जिला का ही प्रथम स्थान है।

इस जिले में बड़ी संख्या में थारू, यादव, मुसलमान और ब्राह्मण हैं। भाषायी आधार पर यहां के निवासियों की जनसंख्या[2] इस प्रकार से विभाजित किया जा सकता है–

नेपाली	43,531
नेवारी	2,807
भोजपुरी	1,04,661
अवधी	70,440
थारू	7,510
मगर	776
गुरूड़	1,321
अन्य	[illegible]

---

1. भैरहवां स्थित नगरपालिका तथा केम्पस में उपलब्ध तथ्य के अनुसार।
2. भैरहवां स्थित केम्पस के पुस्तकालय में उपलब्ध तथ्य के अनुसार।

इस जिले में भोजपुरी बोलने वालों की संख्या सबसे ज्यादा है। वर्तमान समय में शिक्षा के प्रसार के कारण भैरहवां जनपद में अन्य भाषा–भाषी लोगों की संख्या घटती जा रही है। अब यहां पर नेपाली और हिन्दी बोलने व समझने वालों की संख्या में वृद्धि हो रही है। यहाँ के स्कूलों और कालेजों में प्राय: नेपाली माध्यम में ही पढ़ाई–लिखाई का कार्य हो रहा है। कुछ ऐसे भी विद्यालय हैं जिनमें अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा प्रदान की जाती है ।

यहाँ पर बड़ी संख्या में थारू, यादव, मुसलमान व ब्राह्मण रहते हैं । भैरहवां (रूपन्देही) जिले की दक्षिणी सीमा भारत के साथ इसको जोड़ती है। भैरहवां के पास से काफी संख्या में रोपाई करने के लिए भारत में लोग आते हैं। यहाँ पर भारतियों की भी जनसंख्या अच्छी संख्या में है। रूपन्देही जिले में भैरहवां नगर पंचायत ही सबसे बड़ी जनसंख्या वाली नगर पंचायत है।

इस जिले में थारू जाति की संख्या सबसे अधिक है। ऐसा अनुमान किया जाता है कि यहां के आदिवासी लोग थारू जनजाति के हैं। यहां की बहुसंख्यक जनता थारू अपने संस्कृति के अनुसार रहन–सहन, रीति–रिवाज, वेशभूषा और अपनी भाषा बोलते हैं। इनकी भाषा में भोजपुरी, अवधी, मागधी तथा हिन्दी भाषा का प्रभाव दिखाई पड़ता है । थारू जनजाति में छोटी उम्र में शादी का भी रिवाज है। यहां की थारू जाति भूत, पिशाच और अन्य तरह के अंधविश्वासों पर विश्वास करती है ।

थारू के बाद यहां यादव जाति की संख्या ज्यादा है। यादव लोग अपनी जाति "यदुवंशी" भगवान श्रीकृष्ण वंशज अपने को समझते हैं।

भैरहवां के पश्चिम में लुम्बिनी है, जहां पर मुस्लिम लोग भी रहते हैं। मुसलमानों में पठान, खाँ, टुर्की आदि मुस्लिम जातियां हैं।

इस जिले में वर्मा, भारत से आने वाले और पहाड़ पर रहने वाले लोगों की बोली व संस्कृति में सम्मिश्रण है। कुर्मी और थारू तथा कुछ और जातियों का मुख्य पेशा कृषि ही है। नेवारी तथा बनिया लोग ज्यादातर व्यापार में लगे हुए हैं । विभिन्न जातियों के लोग भिन्न-भिन्न कार्यों में लगे हुए हैं।

भैरहवां के दक्षिण में नेपाल-भारत सीमा पर सोनौली तथा उत्तर में पोखरा को जाने वाली सोनौली पोखरा राजमार्ग स्थित है। बाद में लुम्बिनी में जन्मे राजकुमार सिद्धार्थ (गौतम बुद्ध) के नाम से इस राजमार्ग का नाम सिद्धार्थ राजमार्ग रख दिया गया है। भैरहवां से लुम्बिनी की दूरी 21 किलोमीटर है ।

भैरहवां में त्रिभुवन विश्वविद्यालय के अन्तर्गत दो डिग्री कालेज हैं। भैरहवां के पास बुटबल में एक टेनिकल इंस्टीट्यूट भी है। विद्यालयों की प्रशासनिक एवं जिला शिक्षा समिति के निर्देश में जिला शिक्षा अधिकारी का कार्यालय भैरहवां में है ।

भैरहवां ही जिले का मुख्यालय है। अधिकांश कार्यालय यहीं पर स्थित हैं। एक दशक से कृषि पर आधारित यहां की अर्थ-व्यवस्था महेन्द्र राजमार्ग और सिद्धार्थ राजमार्ग बन जाने से अर्थ-व्यवस्था में नये क्षितिज का उदय हुआ। इससे व्यापार और उद्योग को काफी बढ़ावा मिला है। प्रायः यहां की सभी भू-भाग समतल होने के कारण कृषि में आधुनिकीकरण की यहां शुरुआत अब शुरू हो गयी है।

भैरहवां बाजार में प्रायः व्यापारी वर्ग ही ज्यादा हैं। यहां पर विदेश से आये तथा नेपाल में निर्मित सामानों की बिक्री की जाती है। भैरहवां के बाजार में या आस–पास जाने पर भोजपुरी या हिन्दी की जानकारी रखने वालों को किसी प्रकार की कोई परेशानी नहीं होती । यहां हर दुकान पर भोजपुरी और हिन्दी बोली और समझी जाती है। अधिकांशतः भारत के लोग ही यहां खरीददारी करने के लिए आते हैं। भारतीय मुद्रा पूरे नेपाल में हर जगह ली जाती है। यहां पर आने पर किसी भी भारतीय को सबकुछ लगभग अपने ही देश जैसा लगता है।

******

*** भैरहवां के प्रमुख कवि ***

भैरहवां के कवियों का वैसे तो अभाव है लेकिन वहां सम्पर्क करने पर कुछ कवियों के नाम प्रकाश में आये हैं। इनमें से अधिकांश कवियों की रचनायें या उनके काव्य ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है । कुछ उभरते हुए कवि मिले जो काव्य के क्षेत्र में काफी कुछ करने की कोशिश कर रहे हैं। उनमें सबसे प्रमुख कवि हैं 'बालकृष्ण भट्टराई' जो कि भैरहवां कैम्पस के अध्यापक भी हैं । उन्होंने बातचीत के दौरान अपनी कुछ कवितायें भी सुनायीं। उनके द्वारा लिखी हुई कुछ कवितायें इस प्रकार हैं –

विरहणी के प्रति

सुख दु:ख दुवै हुन्छन् घाम छाया सरी यहां [1]
सुखले मात्र मान्छेकी उन्नति देजियो कहाँ ?
त्यसैले मनकी रानी । दु:खमा रून्‌ु हुन्न है ।
दु:ख नै नगरी कैल्ये सुखले पनि हुन्न है ।

× × × ×

रून्‌ु जीवनको हार सहनु जीत हो बुझ
सङ्घर्षमय जीवनमा खुशी का आँसुले रूझ
नझार तिमीले आंसु रोई एकान्तमा बसी
वरू सृजनका नक्ति समारू लेखनी मसी ।

× × × × ×

---

1. "क्षायित्व" पत्रिका, पूर्णांक 34 – काठमांडू.

सृजना सुख हो हेर, साधना गर्नुपर्दछ
लोक कल्याणका निक्ति सृजना गर्नुपर्दछ
थिएनौं भवमा हामा नहुने छौ भविष्यमा
सांचो त आज मात्रै ही नभोलि नहि जो यहां ।

इनकी दूसरी कविता इस प्रकार है–

आशा–निराशा

जीवनको धिपधिपे दियो हो [1]
जीवनका कठिन यात्राहरूमा
उकालो चढ्दा
ऑंध्यारा घुम्तीहरूमा
वाटो देखाउने सम्बल ।

भैरहवां के अन्य प्रमुख कवियों में यादव भट्टराई का भी नाम लिया जा सकता है। इन्होंने "दिल्ली" नाम स एक कविता लिखी है–

दिल्ली

भीड़ले उन्मत्त शहर
आफैं मस्त छ कता–कता
यात्री अतपत्र छन् सर्वत्र
वाहन अलपत्र कता–कता ।

---

1. बालकृष्ण भट्टराई–पत्रिका "मधुपर्क" मई–जून 2000, पूर्णांक 360 काठमांडू.
2. यादव भट्टराई – "दिशाहीन यात्रा का हर फहरू" प्रकाशन, काठमांडू।

भैरहवां के एक अन्य कवि हैं "कपिलदेव लामिछाने", इनसे सम्पर्क करने पर इन्होंने जो अपनी कविता सुनाई वह इस प्रकार है–

मेरे गांव का नेता मंत्री भाछन

मेरा गाउँका नेता मन्त्री 'भा' छन्
कुर्कुच्चा खियाउंथे पहिले
टायर खियाउने भा' छन् ।
मेरा गाउंका नेता मन्त्री भा' छन् ।
नारा लगाउँथे पहिले
अचेल मयलपीस लगाउने भा' छन् ।
जागिर खेज्दै हिंड्थे पहिले
अचेल
कसलाई जागिर रूवाउने
र कसैको जागिर रूवाउने
र कसैको जागिर खाने भा' छन् ।
साच्चै
अचेल मेरा गाउंका नेता मन्त्री भा' छन् ।

इनके अतिरिक्त भैरहवां के अन्य कवि इस प्रकार हैं :–

1. मोदनाथ शास्त्री – इन्होंने महाकाव्य भी लिखा है।
2. रूद्र श्रवाली
3. रूद्र शर्मा "दुखी"
4. गंगा लिगल

5. सुमन राणा
6. बुंद राना
7. विजय सागर
8. हर्षध्वज राई
9. करूणानिधि शर्मा
10. पृथ्वी शेरचन
11. हृदय लेकाली
12. देवी न्यौपाने धीर
13. वैकुंठनाथ अर्याल
14. अमर किशोर घिमिरे
15. भीम प्रसाद लामिछाने
16. गंगा लिगल
17. खगराज पाण्डे ।

****

तृतीय अध्याय

भोजपुरी और नेपाली का भाषागत स्वरूप निर्धारण

भोजपुरी और नेपाली का भाषागत स्वरूप निर्धारण

भोजपुरी का भाषागत स्वरूप :

बिहार की मैथिली, मगही तथा भोजपुरी तीनों बोलियों में विस्तार क्षेत्र की दृष्टि से भोजपुरी का स्थान सर्वोच्च है। यह बोली उत्तर में हिमालय की तराई से लेकर दक्षिण में मध्य प्रान्त के शाहाबाद, सारन, चम्पारन, रांची, जशपुर स्टेट, पलामू के कुछ भाग तथा मुजफ्फरपुर के उत्तर-पश्चिमी कोने में इस बोली के बोलने वाले रहते हैं । उत्तर प्रदेश के बनारस, गाजीपुर, बलिया, जौनपुर के अधिकांश भाग, मिर्जापुर, गोरखपुर, आजमगढ़ तथा बस्ती जिले की हरैया तहसील में स्थित कुवानो नदी तक भोजपुरी बोलने वालों का आधिपत्य है। डा0 सुनीति कुमार चटर्जी ने भोजपुरी को पश्चिमी मागधी वर्ग के अन्तर्गत रखा है।

भोजपुरी बोली का नामकरण शाहाबाद जिले के भोजपुर परगने के नाम पर हुआ है। अब यह बात स्पष्ट हो गया है कि उज्जैन के भोजों [1] के नाम पर ही "भोजपुर" नाम पड़ा; क्योंकि प्राचीन काल में इन्हीं लोगों ने इस क्षेत्र पर अधिकार करके यहां शासन करना आरम्भ किया था। 18वीं शताब्दी में भोजपुर एक प्रान्त था। धीरे-धीरे इसका विशेषण भोजपुरी इस प्रान्त के निवासियों तथा उसकी बोली के लिए भी प्रयुक्त होने लगा ।

---

1. धार के प्रसिद्ध राजा भोज का नाम किसी व्यक्ति विशेष का नाम न होकर उस क्षेत्र के राजाओं की उपाधि प्रतीत होता है। (ऐतरेय ब्राह्मण, 8-14)

भाषा के अर्थ में लिखित रूप में इसका सर्वप्रथम उल्लेख सन् 1789 ई0 में मिलता है। सर जार्ज ग्रियर्सन ने अपने 'लिंग्विस्टिक सर्वे' के प्रथम भाग के पूरक अंश, पृ0 22 में एक उद्धरण दिया है।

इसके पश्चात् निश्चित रूप से भाषा के अर्थ में "भोजपुरी" शब्द का प्रयोग, सन् 1868 ई0 में जॉन बीम्स ने रॉयल एशियाटिक सोसाइटी के जर्नल, भाग 3, पृष्ठ 485–508 में अपने "भोजपुरी बोली पर संक्षिप्त टिप्पणी" शीर्षक लेख में किया ।

भोजपुरी के अन्तर्गत स्थान–भेद से बोलियों का नाम भी पड़ गया है, जैसे छपरा जिले की भोजपुरी को "छपरहिया" तथा बनारस की भोजपुरी को "बनारसी" बोली कहते हैं। इसी प्रकार बलिया के पश्चिमी तथा आजमगढ़ के पूर्वी क्षेत्र की बोली "बगरही" कहलाती है। इधर बांगर से उस क्षेत्र से तात्पर्य है, जहां गंगा की बाढ़ नहीं जाती ।

भोजपुरी एक सजीव भाषा है। भोजपुरी क्षेत्र के बाहर भोजपुरियों का सबसे बड़ा अड्डा कलकत्ता है। कलकत्ता को हम वास्तव में भोजपुरी जीवन तथा संस्कृति का केन्द्र कह सकते हैं। हजारों भोजपुरी कलकत्ता तथा भागीरथी के किनारे स्थित जूट के कारखानों में काम करते हैं। कलकत्ता के "आमरललोनी मॉनुमेण्ट" के पास का जिले का मैदान (जिसे भोजपुरी मौनीमठ (मौन रहने वाले साधु का मठ) कहते हैं)। वास्तव में भोजपुरियों का हाइडपार्क है। प्रत्येक रविवार को हजारों भोजपुरी इस मैदान में एकत्र होते हैं तथा भोजपुरी गीतों, लोककथाओं तथा लोक गाथाओं (आल्हा, बिजमैल आदि) से अपना मनोरंजन करते हैं ।

डा0 ग्रियर्सन[1] भोजपुरी को चार भागों में विभक्त किया है। ये विभाग हैं– उत्तरी, दक्षिणी, पश्चिमी तथा नगपुरिया । उत्तरी भोजपुरी की भी दो विभाषाएं हैं–

1. सरवरिया तथा
2. गोरखपुरी ।

सोन नदी के दक्षिण नगपुरिया भोजपुरी बोली जाती है। उत्तरी तथा नगपुरिया भोजपुरी के बीच में ही दक्षिणी तथा पश्चिमी भोजपुरी का क्षेत्र है। यदि बरहज से गाजीपुर शहर तक और वहां से सोन नदी तक रेखा खींची जाय तो इसके पूरब दक्षिणी भोजपुरी तथा पश्चिम में पश्चिमी भोजपुरी का क्षेत्र होगा ।

यह दक्षिणी भोजपुरी ही वास्तव में आदर्श भोजपुरी है। इसका क्षेत्र इलाहाबाद, सारन, बलिया, पूर्वी देवरिया तथा पूर्वी गाजीपुर है। पश्चिमी गाजीपुर, आजमगढ़, बनारस, मिर्जापुर तथा जौनपुर के कुछ भागों में पश्चिमी भोजपुरी बोली जाती है ।

आदर्श भोजपुरी अपनी अन्य बोलियों की अपेक्षा अधिक श्रुति मधुर है। जिस प्रकार ईरानी लोगों की बोलचाल की फारसी तथा फ्रेंच बोलने वालों के लहजों में एक विशेष प्रकार का संगीतात्मक माधुर्य तथा लोच–'इण्टोनेशन'–होता है, उसी प्रकार का माधुर्य तथा लोच आदर्श भोजपुरी में भी होता है। वाक्य के अन्तिम स्वर का देर तक उच्चारण करने से ही यह माधुर्य उत्पन्न होता है। आदर्श भोजपुरी को इसकी अन्य बोलियों से पृथक करने वाला सर्वनाम "रउआ" है। इस सर्वनाम का भोजपुरी की अन्य बोलियों में अभाव है। आदर्श भोजपुरी में इस शब्द के कई रूप उपलब्ध हैं; यथा–"राउरां", "राउर" आदि। आदर प्रदर्शन के लिए

---

1. डा0 ग्रियर्सन– लिंग्विस्टिक सर्वे आफ इण्डिया, भाग 2.

ही आपके अर्थ में "रउरा" तथा "राउर"[1] सर्वनाम का प्रयोग किया जाता है। प्राकृत में इस शब्द का रूप "लाउल" मिलता है, जिसका संस्कृत रूप "राजकुल" अथवा "राजकुल्य" होगा । मैथिली में इस सर्वनाम के लिए "आइस" तथा "अहाँ" शब्दों का प्रयोग होता है, जिनकी उत्पत्ति संस्कृत के "अति" तथा "आयुष्मान" शब्दों से हुई है ।

शाहाबाद, सारन तथा बलिया भोजपुरी की उत्तरी, पश्चिमी आदि बोलियों का तुलनात्मक विवरण इस प्रकार है–

1. **संज्ञा**[2]– आदर्श भोजपुरी के स्त्रीलिंग शब्दों के अन्त में प्राय: ह्रस्व इ आती है, किन्तु भोजपुरी की अन्य बोलियों में इसका अभाव है, जैसे–आँखि, पाँखि (आदर्श भोजपुरी), आंख पांख (अन्य भोजपुरी)। गोरखपुर की उत्तरी भोजपुरी के संज्ञा पदों में कहीं–कहीं अनुनासिक का प्रयोग होता है। यथा–भाँट, नाँद। किन्तु आदर्श भोजपुरी में इसके रूप होंगे–भार, नाद। मैथिली के प्रभाव से कभी–कभी सारन तथा मुजफ्फरपुर की सीमा की भोजपुरी में 'ड़' का 'र' होता है; यथा–घोड़ा —> घोरा, सड़क —> सरक ।

गोरखपुर की उत्तरी भोजपुरी में प्राचीन भोजपुरी के कतिपय रूप आज भी वर्तमान हैं, जैसे–हिन्दी 'मैं' सर्वनाम 'मयँ' तथा 'मैं' रूप। भोजपुरी की अन्य बोलियों में यह रूप केवल कहावतों तथा मुहावरों आदि में ही मिलते हैं। उत्तरी भोजपुरी के अन्य कारकों में व्यवहृत 'मों' सर्वनाम भी आदर्श भोजपुरी में नहीं मिलता । इसी प्रकार मध्यम पुरूष के सर्वनाम 'तू' के अतिरिक्त, गोरखपुर में 'तैं' भी बोला जाता है, तथा अप्राणिबोधक, प्रश्नवाचक सर्वनाम 'केथी' (हिन्दी 'क्या') गोरखपुर में ''थुआ' बोला जाता है।

---

1. डा0 उदय नारायण तिवारी–भोजपुरी भाषा और साहित्य.
2. वही

2. **विशेषण–**[1] संख्यावाचक विशेषण में 11 से 18 तक को उत्तरी भोजपुरी में 'एगारे', 'बारे', 'तेरे' इत्यादि बोला जाता है और आदर्श भोजपुरी का इन शब्दों में व्यवहृत अन्तिम 'ह' का गोरखपुर की उत्तरी भोजपुरी में लोप हो जाता है। इसी प्रकार आदर्श भोजपुरी के "अर्तिस", "अर्तालिस", "सत्सठ", "अर्सठ" गोरखपुर में "अँड़तिस", "अँड़तालिस", "सँड़सठ" और "अँड़सठ" बोले जाते हैं ।

क्रियापद[2]: **(क) सहायक क्रियाएँ –**

आदर्श भोजपुरी का **"बाड़े"** गंगा के उत्तर **"बाटे"** हो जाता है। यद्यपि कहीं–कहीं **"बाड़े"** का भी प्रयोग होता है, इसी प्रकार उत्तम पुरूष पुल्लिंग में "बाटी", मध्यमपुरूष में "बाट", "बाटे", "आटे" तथा अन्य पुरूष पुल्लिंग में "बाटें", "आटें", "बाय", "आय" रूप मिलते हैं।

(ख) **क्रियापद वर्तमानकाल–** सारन की भोजपुरी में मध्यमपुरूष एक वचन में "देखुए", "देखुएस"; अन्य पुरूष एकवचन में "देखुए", "देखै" तथा अन्य पुरूष बहुवचन में "देखेन" रूप वैकल्पिक रूप में मिलते हैं ।

भूतकाल– भोजपुर की समस्त बोलियों में भूतकाल में "ल" वाला रूप मिलता है; किन्तु पलामू की भोजपुरी में उसने "उ" भी जोड़ दिया जाता है। गण्डककेपूरब की भोजपुरी पर मैथिली का भी प्रभाव पड़ने लगता है; यथा–

उत्तमपुरूष– हम देखलियैन । इसी प्रकार जब कर्म मध्यमपुरूष में रहता है तब "हम देखलियव" बोला जाता है; यथा– "हम रउरा के देखलियव" अर्थात मैंने आप श्रीमान को देखा ।

---

1. डा0 उदय नारायण तिवारी–भोजपुरी भाषा और साहित्य.
2. वही

मध्यमपुरूष– जब कर्म अन्य पुरूष का होता है तथा जब वह किसी निम्न श्रेणी के व्यक्ति का बोधक होता है तब 'तू देखलहुल' का प्रयोग किया जाता है; यथा–'तू मलिया के देखलहुस' । किन्तु जब अन्य पुरूष के कर्म के प्रति आदर प्रदर्शित करना होता है तब 'तू देखलहुन' का प्रयोग किया जाता है, जैसे– 'तू राजा के देखलहुन' अर्थात् 'तुमने श्रीमान् राजा को देखा'।

म0पु0ए0व0	अ0पु0ब0व0
देखतेन	देखतेस

उत्तरी भोजपुरी में दो विभाषाएं[1] हैं– 1. गोरखपुरी, 2. सरवरिया। गोरखपुरी की कतिपय विशेषताओं का उल्लेख ग्रियर्सन ने अपने लिंग्विस्टिक सर्वे के भाग 5, पृ0 229 में किया है। इनमें से सबसे अधिक जो विशेषता हमारा ध्यान आकर्षित करती है; वह है विवृत 'अ' को लिखने की प्रणाली। इसे दो बार लिखा जाता है, यथा– दअअ लअअ । उच्चारण सम्बन्धी विशेषता गोरखपुरी भोजपुरी में यह है कि 'ड़' के स्थान पर इसमें 'र' का प्रयोग होता है; यथा– पड़ल –– परल। बलिया की आदर्श भोजपुरी में परल तथा पड़ल, दोनों का प्रयोग होता है।

इसी तहर आदर्श भोजपुरी की सहायक क्रिया 'बाड़े' के लिए गोरखपुरी भोजपुरी में 'बारे' का ही प्रयोग प्रचलित है।

सरवरिया भोजपुरी का क्षेत्र बस्ती तथा पश्चिमी गोरखपुर है। इसकी निम्नलिखित विशेषताओं का उल्लेख ग्रियर्सन ने लिंग्विस्टिक सर्वे के भाग 5, पृ0 239 में किया है। गोरखपुर की भांति बस्ती में भी 'ड़' के स्थान पर 'र' का ही प्रयोग

---

1. ग्रियर्सन–लिंग्विस्टिक सर्वे, भाग–5, पृ0 229.
2. ग्रियर्सन–लिंग्विस्टिक सर्वे, भाग–5, पृ0 239.

होता है। इस प्रकार यहां भी लोग 'पड़ल' के स्थान पर 'परल' ही बोलते हैं। यहां सम्बन्ध कारक में परसर्ग के रूप में 'कई' तथा अन्य कारकों में 'के' का प्रयोग होता है। यह पश्चिमी भोजपुरी के प्रभाव का परिणाम है।

सरवरिया भोजपुरी के सर्वनाम के रूपों में भी कई विशेषताएं[1] दृष्टिगोचर होती हैं। यथा–सम्बन्ध कारक के रूपों के अन्त में 'ए' आता है; यथा– तुहरे, ओकरे, इन्हें,, अपने आदि ।

क्रियापदों के रूपों में इस बोली में एक विशेषता यह है कि इसके अन्यपुरूष, एकवचन, भूतकाल के रूप में–अस या–असि के स्थान पर–इस का उपयोग होता है। इस प्रकार आदर्श भोजपुरी के दिहलस या दिहलसि, लिहलस या लिहलसि, कइलस या कइलसि रूप सरवरिया भोजपुरी में दिहलिस, लिहलिस एवं कइलिस हो जाते हैं ।

सहायक क्रिया के रूप में 'ड़' से अन्त होने वाले रूप के बजाय यहां भी 'ट' से अन्त होने वाले रूपों का ही प्रयोग होता है। इस प्रकार यहां 'बाटे' आदि रूप ही प्रयोग में आते हैं ।

फैजाबाद, जौनपुर, बनारस, आजमगढ़, मिर्जापुर तथा गाजीपुर के पश्चिमी भाग में जो भोजपुरी बोली जाती है, वह आदर्श भोजपुरी की अपेक्षा कई बातों में भिन्न है। जैसे बिहारी भाषाओं की एक सबसे बड़ी विशेषता यह है कि 'अकारान्त' संज्ञापदों के रूप अन्य कारकों में भी वैसे ही रहते हैं, किन्तु इस पश्चिमी भोजपुरी में ये–'ए' में परिणत हो जाते हैं। वस्तुतः यह पश्चिमी भोजपुरी

---

1. ग्रियर्सन–लिंग्विस्टिक सर्वे, भाग–5, पृ0 229.

प्राच्य समूह की आर्यभाषाओं में से सबसे पश्चिम की है, अतएव इस पर इसकी पश्चिम की बोलियों का प्रभाव पड़ना सर्वथा– स्वाभाविक है।

इन बातों में पश्चिमी भोजपुरी आदर्श भोजपुरी से भिन्न है–

(क) संज्ञा :[1]

संज्ञापदों के रूप में, 'आदर्श भोजपुरी' तथा 'पश्चिमी भोजपुरी' में- निम्नलिखित अन्तर है :

आदर्श भोजपुरी (बलिया, शाहाबाद)	पश्चिमी भोजपुरी (आजमगढ़)
लकठो	लकठा
खोंच	खोंचा
भाट	भाँट
साँढ़	साँड़
जाब	जाबा
गाइ	गाय
आँखि	आँख
पाँखि	पाँख

आजमगढ़, बनारस तथा मिर्जापुर की पश्चिमी भोजपुरी में सम्बन्ध में कारक के परसर्ग के रूप में 'क' तथा 'कै' का प्रयोग होता है। यहां इस बात को भी सदैव स्मरण रखना चाहिए कि आदर्श भोजपुरी के अन्य कारकों के संज्ञापदों के अन्त में 'आ' आता है, किन्तु पश्चिमी भोजपुरी में यह 'ए' हो जाता है।

---

1. डा0 उदय नारायण तिवारी–भोजपुरी भाषा और साहित्य, पृ0 242.

बनारस तथा आजमगढ़ की पश्चिमी भोजपुरी में अधिकरण कारक का चिन्ह 'से' है। आदर्श भोजपुरी में यह 'से' अथवा 'सें' है, किन्तु शाहाबाद की भोजपुरी में यह 'लें' है; यथा–

पेड़ से पतई गिरत बाय —	बनारस
फेड़ सें पतई गिरतिया —	बलिया
फेड़ ले पतई गिरतिया —	शाहाबाद

'लिए' के अर्थ में परसर्ग के रूप में बनारस तथा मिर्जापुर की पश्चिमी भोजपुरी में खातिन, बदे तथा कभी–कभी खातिर का प्रयोग होता है, किन्तु बलिया की आदर्श भोजपुरी में केवल खातिर ही आता है; यथा–

तोरा बदे, तोरा खातिन (बनारस तथा मिर्जापुर)
तोहरा खातिर या खातिन (बलिया)।

इसी प्रकार 'बदले में' के अर्थ में पश्चिमी भोजपुरी में 'सन्ती' तथा 'सन्तिन' शब्दों का प्रयोग होता है, किन्तु आदर्श भोजपुरी में यह सँती हो जाता है।

(ख) विशेषण :[1]

आदर्श भोजपुरी में पहाड़ा पढ़ते समय दु पाँचे, दु साते, दु आठे आदि कहते हैं किन्तु आजमगढ़ तथा बनारस में दु पचे, दु सते, दु अठे आदि कहते हैं ।

---

1. डा0 उदय नारायण तिवारी–भोजपुरी भाषा और साहित्य, पृ0 242.

'नगपुरिया' और 'सदानी' की निम्नलिखित विशेषताएं हैं–

1. **उच्चारण** : इसमें एक विशेषता यह है कि यहां अन्तिम अक्षर के पूर्व वाले अक्षर में 'इ' का आगम होता है और इस प्रकार 'अपनिहिति' (Epenthesis) का रूप आ जाता है; जैसे 'सुअइर' । पड़ोसकी बंगला भाषा के कारण 'अ' का उच्चारण 'ओ' में परिवर्तित हो जाता है; उदाहरण–स्वरूप 'सब' का उच्चारण 'सोब' हो जाता है।

2. **संज्ञा** – एक वचन से बहु वचन बनाते समय संज्ञापदों में –मन प्रत्यय जोड़ दिया जाता है। इस प्रत्यय का छत्तीसगढ़ी में प्रयोग होता है और वहीं से यहां आया है। बहुवचन में प्राणिवाचक शब्दों के लिए ही इसका प्रयोग होता है। इसमें निम्नलिखित "परसर्गों" (POST POSITION) का प्रयोग होता है।

कर्मकारक– के; सम्बन्धकारक– के, क, केर तथा कर;

सम्प्रदान– ले, लैं, लगिन और लगे। अधिकरण–में, अपादान–से। कभी–कभी छत्तीसगढ़ी का प्रत्यय हर भी प्रयोग में आता है; जैसे 'बेटाहर'।

क्रिया – सहायक क्रिया [1]

	वर्तमान– मैं हूँ	भूत– मैं था ।	
एकवचन	बहुवचन	एकवचन	बहुवचन
1–अहों, हौ अथवा हौं	अही या हई	रहो	रही या रहली
2–अहइस, हइस, हिस	अहा या हा	रहिस	रहा या रहला
3–अहे या हैअहें या हैं	रहे या रहलक	रहैं या रहलैं	

टिप्पणी : 'अहों' आदि को कभी–कभी 'आहों' आदि के रूप में भी लिखते हैं। वर्तमान काल के निम्नलिखित रूप,[2] इसमें मगही से लिये गये हैं।

---

1. डा0 उदय नारायण तिवारी–भोजपुरी भाषा और साहित्य, पृ0 244.

एकवचन	बहुवचन
1– हे¯कों	हे¯की
2– हे¯किस	हे का
3– हे¯के	हे कैं

टिप्पणी :–अहौं या हौं का प्रयोग सहायक क्रिया के रूप में उस अवस्था में होता है जब विधेय में विशेषण पद होता है; यथा–पानी गर्म है; किन्तु हेकों का प्रयोग वहां होता है, जहां विधेय में संज्ञापद होते हैं। यथा–यह पानी है।

देख के रूप :

धातु– देखे ¯क्, इसका प्रयोग सम्प्रदान कारक में 'देखने के लिए' के अर्थ में भी होता है।

क्रियामूलक विशेष्य – देङ्ख्

विकारी रूप – देखे, देखल्

इनमें 'देखल्' का अर्थ 'देखने की क्रिया' भी होता है।

वर्तमानकालिक कृदन्तीय रूप – देखत्, देखते हुए।

भूतकालिक कृदन्तीय रूप – देखल्, देखा हुआ ।

सम्भाव्य वर्तमान के रूप वही होते हैं, जो भविष्यत् के; किन्तु इसमें अपवाद–स्वरूप अ0पु0, ए0व0 में देखोक् तथा ब0व0 में दखों रूप मिलते हैं। अन्य बोलियों में जहाँ सम्भाव्य वर्तमान के रूप प्रयुक्त होते हैं; वहाँ नगपुरिया में वैकल्पिक रूप से पुराघटित वर्तमान के रूपों का प्रयोग होता है।

भविष्यत्–[1] में दूखूँगा आदि, भूतकाल (सम्भाव्य) (यदि) में देखे होता।

वर्तमानकाल का रूप देखत्–हों, 'मैं देखता हूँ', होता है। इसके संक्षिप्त रूप दे¯खथों तथा दे¯खत्थों की वैकल्पिक रूप से प्रयुक्त होते हैं। इसी प्रकार घटमान अतीत का रूप देखत–रहों, 'मैं देखता था', होगा।

भोजपुरी की अन्य बोलियों की भांति ही यहां भी प्रेरणार्थक एवं कर्मवाच्य की क्रियाएं बनती हैं। यथा–दे खाएक, दिखाना (प्रे0), देखवाएक, दिखलवाना (क्रि0प्रे0), देखल् जाए् क्, देखा जाना (क0वा0)। इसमें अनियमित क्रिया–पद होए् क्, 'होना' मिलता है। इसके वर्तमानकालिक कृदन्तीय रूप होअत् या भेवत्, भूतकालिक कृदन्तीय रूप होअल् या भेल् होते हैं। इसी प्रकार जाएक्, 'जाना' तथा देएक् के भूतकालिक कृदन्तीय रूप गेल्; देवेक्, गया, दिया; वर्तमानकालिक कृदन्तीय रूप देत् या देवत् एवं भूतकालिक कृदन्तीय रूप देल् या देवल् होंगे।

असमाणिका के कृदन्तीय देइख् या देइख्–के होते हैं। अन्य भोजपुरी बोलियों से तुलना करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि इसका मूल रूप देखि था; किन्तु अपिनिहित (Epenthesis) के कारण उच्चारण में यह देइख् में परिणत हो गया । इस 'इ' के कारण ही इसके पहले आनेवाले 'आ' का उच्चारण भी 'ओं' में परिणत जो जाता है। इस प्रकार माइर, 'मारकर' का उच्चारण कभी–कभी मोइर हो जाता है ।

मथेसी [2] (भोजपुरी)– 'मथेसी' भोजपुरी में भी मैथिली की भांति ही मूर्धन्य 'ड़' का उच्चारण 'र' में परिणत हो जाता है। यथा–पड़ल →परल; कोढ़ी →

1. डा0 उदय नारायण तिवारी–भोजपुरी भाषा और साहित्य, पृ0 245.
2. वही पृ0 246.

कोरिही तथा बड़का —> बरका (बलिया की आदर्श भोजपुरी में पड़ल तथा परल दोनों का प्रयोग होता है। कोढ़ी के लिए आदर्श भोजपुरी में भी कोरिहि व्यवहृत होता है; किन्तु बड़ा के लिए बरका का प्रयोग नहीं होता ।)

मुजफ्फरपुर की मैथिली में 'उन लोगों' के लिए ओकनी सर्वनाम का प्रयोग होता है। मथेसी भोजपुरी में भी यह 'औकनीं' वर्तमान है।

इसी प्रकार सहायक क्रिया के रूप में मथेसी भोजपुरी में वारड (तुम हो) तथा बाटे (वह है), दोनों का प्रयोग होता है तथा सकर्मक क्रिया, ए0व0, अतीतकाल का रूप मैथिली की भाँति–अक प्रत्ययान्त होता है। यथा–कहलक्, उसने कहा, देलक्, उसने दिया, आदि। यहाँ 'वह आया' के भोजपुरी आइल् के स्थान पर मैथिली आएल का एवं 'उसने कहा' के लिए मैथिली कहल–कै का प्रयोग होता है।

थरूः भोजपुरी–[1] अपने लिंग्विस्टिक सर्वे भाग 5, अंड्.क 2 के पृ0 311 से 329 पर डॉ0 ग्रियर्सन ने थारू भोजपुरी का विवरण दिया है। ये आर्यभाषा–भाषी हैं और थारू नाम की इनकी कोई पृथक भाषा नहीं है। थारू लोगों की बोली की यह विशेषता है कि उसमें पड़ोस में बोली जानेवाली बोली का विशेष पुट रहता है ।

---

1. ग्रियर्सन–लिंग्विस्टिक सर्वे, भाग–5, अंक 2, पृ0 311–329.

नेपाली भाषा का स्वरूप

हिन्दी, बंगला, असमिया आदि की तरह नेपाली भाषा का जन्म संस्कृत से हुआ है। यह भाषा पहाड़ी से विकसित हुई है। ग्रियर्सन ने इसे आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं के भीतरी उप-शाखा के पहाड़ी वर्ग के पूर्वी पहाड़ी उपवर्ग के अन्तर्गत रखा है। "भारत के भाषा सर्वेक्षण" में ग्रियर्सन ने इसे मध्यवर्तीउपशाखा की केन्द्र की तरफ झुकी हुई भाषाओं के साथ वर्गीकृत किया है। डा० सुनीति कुमार चटर्जी इसे आधुनिक आर्यभाषाओं की पश्चिमी शाखा की भाषा राजस्थानी के साथ रखते हैं, तो डा० धीरेन्द्र वर्मा इसे मध्यदेशीय भाषाओं में राजस्थानी के साथ । केलाग ने अपनी "हिन्दी भाषा के व्याकरण" में नेपाली को हिन्दी की एक बोली के रूप में रखा है और अन्य बोलियों के साथ नेपाली भाशा के व्याकरणिक बिन्दुओं को भी छुआ है। डा० हरदेव बाहरी इस भाषा को आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं की हिन्दीतर वर्ग में उत्तरी उपवर्ग की भाषा मानते हैं।

हिन्दी की तरह ही उद्गम की दृष्टि से नेपाली भाषा के शब्द-तत्सम्, तद्भव, देशज तथा विदेशन-इन चार वर्गों में विभक्त हैं। नेपाली और हिन्दी की विशाल तत्सम् शब्दावली बिल्कुल समान है। अन्य शब्दावलियों में ध्वनिगत अन्तर भी परिलक्षित होता है। इस भाषा में हिन्दी की तरह ही अनेक शब्दों के तत्सम् तथा तद्भव रूप [1]साहित्य में प्रयुक्त होते हैं : जैसे-

हसत (हात), अश्रु (आंसु), रात्रि (राति), लक्षण (लच्छिन), कर्ण (कान) ओष्ठ (ओठ), जिह्वा (जिभ्रो), मित्र (मीत), पत्र (पात)।

---

1. देशी शब्दों का भाषा वैज्ञानिक अध्ययन-डॉ० चन्द्रप्रकाश त्यागी, लिपि प्रकाशन, दिल्ली-51, पृ० 24-25.

अनेक शब्द संस्कृत तथा प्राकृत से विकसित हुए[1] हैं जो तद्भव कहलाते हैं :–

संस्कृत	प्राकृत	नेपाली
हस्त	हत्थ	हात
भक्त	भन्त	भात
पत्र	पत्त	पात
कार्य	कज्ज	काज
धर्म	धम्म	धाम
कर्म	कम्म	काम
आत्मा	अप्पा	आफू
रात्रि	रन्ति	रात
वृक्ष	रूक्ख	रूख
मूल्य	मोल्ल	मोल इत्यादि

विकार के अनुसार नेपाली भाषा के शब्दावली विकारी एवं अविकारी होती है। संज्ञा, सर्वनाम, विशेशण एवं क्रिया विकारी श्ब्द है, जबकि अव्यय अविकारी। हिन्दी की तरह ही संज्ञा शब्दों के विभेद बनावट के अनुसर तीन (रूढ़ि, मौखिक एवं योगरूढ़ि) एवं व्यवहार के अनुसार पांच (जातिवाचक, व्यक्तिवाचक, द्रव्यवाचक, समुदायवाचक एवं भाववाचक) होते हैं।

संज्ञा[2]– हिन्दी की तरह ही नेपाली भाषा में भी व्युत्पत्ति के अनुसार संज्ञा के तीन– रूढ़ि, यौगिक तथा योगरूढ़ि एवं व्यवहार के अनुसर पांच भेद – जातिवाचक, व्यक्तिवाचक, भाववाचक, समुदायवाचक एवं द्रव्यवाचक होते

---

1. वही.
2. श्री चूड़ामणि उपाध्याय रेग्मी–नेपाली भाषा को उत्पत्ति, पृ0 140.

हैं। हिन्दी तथा नेपाली शब्दावली के स्रोत प्रायः समान हैं अतः विभिन्न संज्ञाओं के समान उदाहरण दिए जा सकते हैं –

क्रिया	**संज्ञा**
पढ़नु (पढ़ना)	पढ़ाइ (= पढ़ाई)
लेखनु (लिखना)	लेखइ (=लिखाई)
चढ़नु (चढ़ना)	चढ़ाइ (चढ़ाई)

विशेषण	संज्ञा (भाववाचक)
समान (समान)	समानता (समानता)
सम (यम)	समता (समता)
सज्जन (सज्जन)	सज्जनता (सज्जनता)
वीर	वीरता
धीर	धीरता
गर्म	गर्मी।
जवान	जवानी

संज्ञा का रूपान्तर–[1] लिंग, वचन तथा कारक के प्रयोग द्वारा संज्ञा में परिवर्तन होता है ।

लिंग –नेपाली भाषा में पुल्लिंग तथा स्त्रीलिंग के अतिरिक्त नपुंसकालिंग तथा सामान्य लिंग (उभयलिंग) का प्रयोग भी होता है।

भाववाचक, समुदायवाचक तथा द्रव्यवचक संज्ञाएं तथा निर्जीव वस्तुओं को नपुंसकलिंग के अन्तर्गत रखा जाता है।

---

1. श्री चूड़ामणि उपाध्याय रेग्मी–नेपाली भाषा को उत्पत्ति, पृ0 140.

कुछ शब्द जैसे माचिस, मित्र, जानवर, दोपाय, चरो, मीरा, ह्रांस, मृग इत्यादि पुरूषत्व तथा स्त्रीत्व दोनों का बोध कराते हैं। ऐसे शब्दों को सामान्य लिंग के अन्तर्गत रखा जाता है ।

सामान्य या उभयलिंगी संज्ञाओं के साथ 'लोग्ने', 'भाले', 'झांक', 'वीर', 'जुर्रा' आदि पुल्लिंगवाचक शब्द जोड़कर तथा 'स्वास्नी', 'पोथी', 'भूनी', 'मुडुली', 'साही' आदि स्त्रीलिंग वाचक शब्द जोड़कर स्त्रीलिंग बनाते हैं। जैसे–

उभयलिंग	**पुल्लिंग**	**स्त्रीलिंग**
मानिस	लोग्नेमानिस	स्वास्नीमानिस
ह्रांस	भालेहॉस	पोथीह्रांस
कमिला	भालेकमिला	पोथीकमिला
मृग	झांकमृग	मुडुलीमृग
बनेल	बीरबनेल	भुनीबनेल
बाज	जुर्राबाज	साहीबाज

हिन्दी की तरह कुछ सजीव वस्तुओं के पुल्लिंग तथा स्त्रीलिंग द्योतक अलग–अलग शब्द नेपाली भाषा[1] में हैं जैसे–

पुल्लिंग	**स्त्रीलिंग**
बाबु	आमा
दाज्यू	भाउज्यू
ससुरा	सासू
वीर	थुनी
लोग्ने	स्वास्नो

---

1. गोपालनिधि तिवारी–नेपाली भाषा को बनोट।

भाले	पोथी
रांगो	भैंसी
झांक	गुडुली
जुरा	साही
राजा	रानी

अकारान्त, आकारान्त आदि शब्दों को ईकारान्त बनाकर अथवा 'अक' के स्थान पर 'इका' प्रत्यय जोड़कर या पुल्लिंग शब्दों के अन्त में 'वी' प्रत्यय जोड़कर स्त्रीलिंग बनाते हैं।[1] जैसे–

पुल्लिंग	**स्त्रीलिंग**
घोड़ा	घोड़ी
सुगा	सुगी
कछुवा	कछुवी
परेवा	परेवी
काका	काकी
पुत्र	पुत्री
कुमार	कुमारी
ब्राह्मण	ब्राह्मणी
देव	देवी
दास	दासी
सिपाही	सिपहिनी
भोटे	भोटिनी

1. गोपालनिधि तिवारी–नेपाली भाषा को बनोट।

पंत	पंतेनी
पंडित	पंडितनी
धोबी	धोबिनी
सरदार	सरदार्नी।
क्षेत्री	क्षेत्रिणी
लेखक	लेखिका
बालक	बालिका
गायक	गायिका
अध्यापक	अध्यापिका

इस भाषा में पुल्लिंग से स्त्रीलिंग बनाने के लिए कुछ विशेष प्रत्यय भी व्यवहार में आते हैं। जैसे–

स्त्रीलिंग	**पुल्लिंग**
गुरू	गुरूमा
गुरूड़	गुरूडसेनी

इस भाषा में दो वचन होते हैं,[1] जो हैं–

1. एकवचन   2. बहुवचन या अनेकवचन।

इस भाषा में व्यक्तिवाचक, समुदायवाचक, भाववाचक एवं द्रव्यवाचक संज्ञाएं प्राय: एकवचन के रूप में ही प्रयुक्त होती हैं।

यदि किसी संज्ञा के साथ (खासकर निर्जीव जातिवाचक संज्ञा के साथ) अनेकता या अधिकता बोध कराने वाला कोई विशेषण जुड़ा होता है तो वह

---

1. डा0 हेमाड.गराज अधिकारी–समसामयिक नेपाली व्याकरण, पृ0 79.

संज्ञा के एक वचन के रूप में ही प्रयुक्त होती है। जैसे– हजार जना, एघार रूपिया, घेरै गर्मी आदि ।

सामान्य नाम बोधक जातिवाचक संज्ञाओं का एकवचन तथा बहुवचन दोनों रूप प्रयुक्त होते हैं। जाति की विशेषता बतलाते समय केवल एकवचन रूप प्रयोग में आता है। जैसे–मानिस मरणशील छ।

नेपाली भाषा में बहुवचन के तीन भेद[1] होते हैं, जो निम्नलिखित हैं–

(क) अनेकार्थी। जैसे– गाइस्क (गायें), मनिसहक इत्यादि।

(ख) प्रकारार्थी : वस्तुओं या व्यक्तियों के भिन्न प्रकार का बोध कराने के लिए भी बहुवचन प्रयुक्त होता है, जैसे–
मोहनहरू (मोहन, सोहन, श्याम आदि)

(ग) आदरार्थी– मनुष्य, देवता आदि को आदर दिखाने के लिए बहुवचन का प्रयेग होता है। जैसे– गुरू आए ।

नेपाली भाषा में एकवचन को बहुवचन में बदलने के लिए 'हरू' शब्द जोड़ते हैं। जैसे–

एकवचन	**बहुवचन**
मानिस	मानिसहरू
पुस्तक	पुस्तकहरू
परेवा	परेवाहरू

1. डा0 हेमाङ्गराज अधिकारी–समसामयिक नेपाली व्याकरण, पृ0 79.

घर	घरहरू
छोरा	छोराहरू
कलम	कलमहरू

कभी–कभी उकारान्त या ओकारान्त शब्दों को आकारान्त बनाकर "हरू" शब्द जोड़ते हैं। जैसे–

एकवचन	**बहुवचन**
मानु	मानाहरू
पाठो	पाठाहरू
केटो	केटाहरू

सर्वनामों को एकवचन से बहुवचन में बदलने के पहले उनका रूप बदल जाता है,[1] जैसे–

एकवचन	**बहुवचन**
म (मैं),	हामी
तं (तुम)	तिमी
त्यो (वह)	तिनी

होकर उसके साथ "हरू" शब्द जुड़ता है।

एकवचन	**बहुवचन**
म, हामी	हामीहरू
तं, तिमी	तिमीहरू
त्यो, तिनी	तिनीहरू

---

1. श्री चूड़ामणि उपाध्याय रेग्मी–नेपाली भाषा को उत्पत्ति।

एकवचन शब्दों के साथ 'गण' वर्ग, वृन्द, जन, समूह, मंडल आदि शब्द जोड़कर भी बहुवचन बनाते हैं। जैसे–

एकवचन	**बहुवचन**
देव	देवगण
छात्र	छात्रवर्ग
पाठक	पाठकवृन्द
गुरू	गुरूजन

कारक[1] – हिन्दी की तरह ही इस भाषा में आठ कारक होते हैं–

विभक्ति	**कारक**	**कारक चिन्ह**
प्रथमा	कर्ता	ले
द्वितीया	कर्म	लाई
तृतीया	करण	ले, बाट
चतुर्थी	सम्प्रदान	लाई
पंचमी	अपादान	देखि, बार
षष्ठी	सम्बन्ध	को, का, की
सप्तमी	अधिकरण	मा
	सम्बोधन	हो ।

सकर्मक क्रिया में भूतकाल के प्रयोग की स्थिति में कर्ताकारक का विभक्ति चिन्ह "ले" प्रयुक्त होता है।

वर्तमान तथा भविष्यत्काल की क्रिया के साथ 'ले' का प्रयोग प्रायः नहीं होता है ।

1. डी0पी0 भट्टराई 'प्रकाश'–नेपाली व्याकरण र अभिवयक्ति, पृ0 212–216.

निर्जीव वस्तु के साथ कर्मकारक की विभक्ति 'लाई' प्रयुक्त नहीं होती है। प्राणीवाचक कर्म के साथ तथा विशेषण का प्रयोग कर्मकारक की तरह होने पर उसके साथ कर्मकारक की विभक्ति प्रयुक्त होती है। जैसे–

मैले चिट्ठी लेख्यो ।

बाबुले छोरालाई पिट्यो।

गरीबलाई नमार ।

क्रिया के साधन के अर्थ में करण कारक की विभक्ति 'ले' प्रयुक्त होती है। जैसे–

कलमले लेख ।

परिचय चिन्ह के अर्थ में ले तथा बाट दोनों का प्रयोग होता है। जैसे पहिरनले (पहिरनबाट) उ चोर बुझिन् छ ।

का, को, की, रा, रो, री एवं ना, नो, नी सम्बन्धकारक की विभक्तियां हैं। ये विभक्तियां सम्बन्धी शब्द के लिंग तथा वचन के अनुसार बदलती हैं। रा, रो, री तथा ना, नो, नी का प्रयोग सर्वनाम के साथ ही होता है, जैसे– मेरा, मेरो, मेरी, अपना, आपनो, आपनी।

एकवचन पुल्लिंग य नपुंसकलिंग के साथ "को" विभक्ति का प्रयोग होता है। जैसे–

मोहन को भाई ।

सम्बन्धी शब्द यदि स्त्रीलिंग हो तो 'की' विभक्ति का प्रयोग होता है। जैसे–

मोहन की आमा ।

बहुवचन या आदर का बोध कराते समय 'का' प्रयुक्त होता है। जैसे–

राम का छोरा हरू ।

मोहन का पिता ।

हिन्दी के 'में' के अर्थ में स्थान, काल या भाव विशेष का बोध कराने के लिए अधिकरण कारक की विभक्ति 'मा' प्रयुक्त होती है और उसे काल, अधिकरण, स्थान अधिकरण तथा भाव अधिकरण कहते हैं। जैसे–

दस मिनट (दस मिनट में) या

गाउँ मा (गांव मे)।

क्रमशः काल अधिकरण तथा स्थान अधिकरण का बोध कराते हैं।

सम्बोधन कारक की विभक्ति 'हो' के अतिरिक्त 'में' तथा 'हे' भी हैं ।

छोरो शब्द की रूपावली इस प्रकार है–

कारक [1]	एकवचन	बहुवचन
कर्ता	छोरा, छोरोले, छोराले	छोरहरू, छोराहरूले
कर्म	छोरोलाई, छोरालाई	छोराहरू, छोराहरूलाई
करण	छोरोले, छोराले, बाट	छोराहरूले, बाट

1. डी0पी0 भट्टराई 'प्रकाश'–नेपाली व्याकरण र अभिवयक्ति, पृ0 212–216.

सम्प्रदान	छोरोलाई, छोरालाई	छोराहरूलाई
अपादान	छोरो, छोरा देखि, बाट	छोराहरू देखि, बाट
सम्बन्ध	छोरा, छोराको, का, की	छोराहरू, का, की
अधिकरण	छोरो, छोरामा	छोराहरूमा
सम्बोधन	ए छोरा	ए छोरा हरूहो।

नेपाली भाषा में पुरूष के तीन भेद – उत्तम, मध्यम एवं अन्य पुरूष होते हैं।

सर्वनाम[1]– हिन्दी की तरह ही नेपाली भाषा में सर्वनाम छः प्रकार के होते हैं, जो निम्नलिखित हैं :–

क) पुरूषवाचक

ख) निश्चयवाचक

ग) अनिश्चयवाचक

घ) सम्बन्धवाचक, जैसे–जो, जे, जुन

ड.) प्रश्नवाचक, जैसे– को, के

च) निजवाचक, जैसे– आफु (आप, निज, स्वयं)

हिन्दी की तरह ही पुरूषवाचक सर्वनाम तीन तरह के होते हैं, जो निम्नलिखित हैं :–

क) उत्तम पुरूष : जैसेः म (मैं), हामी (हम)

ख) मध्यम पुरूष : जैसेः तँ (तुम), तिमीहरू (आपलोग)

ग) अन्य पुरूष : जैसेः त्यो (वह), ती (वे), तिनी, उ, उनी

निश्चयवाचक सर्वनाम : अन्य पुरूष के यो (यह), त्यो (वह), यी (ये), ती (वे) सर्वनाम विशेषण के रूप में प्रयुक्त होने पर या किसी वस्तु के निर्देश करते समय निश्चयवाचक सर्वनाम होते हैं।

अनिश्चयवाचक सर्वनाम : जैसे– कोही (कोई सजीव), केही (कोई निर्जीव), कुने, सब आदि ।

सर्वनामों के साथ सम्बोधन कारक का प्रयोग नहीं होता है।

कुछ सर्वनामों की रूपावलियां इस प्रकार हैं–

पुरूषवाचक उत्तमपुरूष 'म' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्ता	म, मैले	हामी (हरू) ले
कर्म	मलाई	हामी (हरू) ले, बाट
करण	मैले, मबाहट	हामी (हरू) ले, बाट
सम्प्रदान	मलाई	हामी (हरू) लाई
अपादान	मदेखि, बाट	हामी (हरू) देखि, बाट
सम्बन्ध	मेरो, मेरी, मेरा	हाम्रो, हाम्री, हाम्रा हामी हरूको, का, की हामी (हरू) मा
अधिकरण	ममा	हामी (हरू) मा

मध्यम पुरूष 'तँ' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्ता	तँ, तैले	तिमीहरू, तिमी हरूले
कर्म	तँलाई	तिमीहरूलाई
करण	तैले, तंबाट	तिमीहरूले, बाट
सम्प्रदान	तँलाई	तिमीहरूलाई
अपादान	तँबाट	तिमीहरूदेखि, बाट
सम्बन्ध	तेरो, तेरी, तेरा	तिमीहरूको, का, मी
अधिकरण	तँमा	तिमीहरूमा ।

अन्यपुरूष 'त्यो' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्ता	त्यो, त्यसले	ती, तिनीहरू, तिनीहरूले
कर्म	त्यो, त्यसलाई	ती, तिनीहरूलाई
करण	त्यसले	तिनीहरूले
सम्प्रदान	त्यसलाई	तिनीहरूलाई
अपादान	त्यानदेखि, बाट	तिनीहरूदेखि, बाट
सम्बन्ध	त्यसको, का, की	तिनीहरूको, का, की
अधिकरण	त्यसमा	तिनीहरूमा

अन्यपुरूष 'उ' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्ता	उ, उसले	उनीहरूले
कर्म	उ, उसलाई	उनीहरूलाई
करण	उसले	उनीहरूले
सम्प्रदान	उसलाई	उनीहरूलाई
अपादान	उसदेखि, उसबाट	उनीहरूदेखि, बाट
सम्बन्ध	उसको, उसका, उसकी	उनीहरूको, का, की
अधिकरण	उसमा	उनीहरूमा

नोट:– आदरार्थ मध्यम एवं अन्य पुरूष के तिमी, तिनी, उनी, मिनी सर्वनामों के स्थान पर तपाई, उहां, यहां शब्द प्रयुक्त होते हैं ।

सम्बन्धवाचक 'जो' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्ता	जो, जसले	जुन, जुनले
कर्म	जो, जसलाई	जुन, जुनलाई
करण	जसले, जसलेबाट	जुनले, जुनलेबाट
सम्प्रदान	जसलाई	जुनलाई
अपादान	जसदेखि, बाट	जुनदेखि, बाट
सम्बन्ध	जसको, जसका, जसकी	जुनको, जुनका, जुनकी,
अधिकरण	जसमा	जुनमा

प्रश्नवाचक 'को' शब्द

कारक	एकवचन	बहुवचन
कर्ता	को, कुन, कसले	को, कुन, कुनले
कर्म	को, कसलाई	को, कुनलाई
करण	कसले, कसबाट	कुनले, कुनबाट
सम्प्रदान	कसलाई	कुनलाई
अपादान	कसदेखि, कसबाट	कुनदेखि, कुनबाट
सम्बन्ध	कसको, कसका, कसकी	कुनको, कुनका, कुनकी
अधिकरण	कसमा	कुनमा

नोट :– 'के' तथा 'जे' का प्रयोग केवल नपुंसकलिंग एकवचन में होता है, जिसका रूप के, केले; के, केले; केलाई; "के दिखि, बाट", "के को, का, की"एवं केमा होत है।

निजवाचक 'आफू' शब्द

कारक	**एकवचन**	**बहुवचन**
कर्ता	आफू, आफूले	आफू (हरू) ले
कर्म	आफूलाई	आफू (हरू) लाई
करण	आफूले, आफूबाट	आफू (हरू) ले बाट
सम्प्रदान	आफूलाई	आफू (हरू) लाई
अपादान	आफूदेखि, आफूबाट	आफू (हरू) देखि, बाट
सम्बन्ध	आफूको, का, की आपनो, आपना, आपनी	आफू (हरू) को , का, की
अधिकरण	आफूमा	आफू (हरू) मा

विशेषण : नेपाली भाषा में विशेषण चार तरह के होते हैं–

गुणवाचक विशेषा, जो विशेषण के रंग, रूप, आकार आदि का बोध कराते हैं। जैसे–

रंग – कालो, रातो, सेतो, नीले आदि

रूप – टेढ़ो, सीधा, कुरूप आदि

आकार – समतल, गोलो

गुण – राम्रो, नराम्रो, उदार, उचित, धनी, गरीब

स्थान – ऊँचो, भित्रो

अवस्था – कठोर, नरम, मोटो, पातलो

काल – भूत, वर्तमान, भविष्यत्, नया, पुरानो

दिशा – उत्तरी, दक्षिणी, देब्रे, दाहिने

मूलावस्था	उत्तरावस्था	उत्तमावस्था
उच्च	उच्चतर	उच्चतम
निम्न	निम्नतर	निम्नतम
गुरू	गुरूतर	गुरूतम

'भन्दा' तथा 'मा' शब्दों के प्रयोग द्वारा उत्तरावस्था का बोध कराया जाता है। जैसे– मोहन – सोहन भन्दा बुद्धिमान छ। मोहन र सोहन मा सोहन चलाक छ ।

सबभन्दा शब्द के प्रयोग द्वारा उत्तमावस्था का बोध कराया जाता है। जैसे–सोहन सबभन्दाराम्रो छ ।

विभिन्न उपसर्गो[1] या प्रत्ययों के प्रयोग द्वारा संज्ञा, सर्वनाम, क्रिया तथा अव्यय से विशेषण बनाये जाते हैं । जैसे–

प्रत्यय	संज्ञा	विशेषण
वान्	विद्या	विद्यावान्
	कोच	कोचवान्
	धन	धनवान्
मान्	बुद्धि	बुद्धिमान्
	श्री	श्रीमान्
मन्त	दया	दयमन्त
	गुण	गुणमन्त
इक	कल्पना	काल्पनिक
	स्वाभाव	स्वाभाविक
	धर्म	धार्मिक

1. डा0 हेमाङ्गराज अधिकारी–समसामयिक नेपाली व्याकरण, पृ0 245.

प्रत्यय	संज्ञा	विशेषण
	समाज	सामाजिक
	दिन	दैनिक
	पक्ष	पाक्षिक
	मास	मासिक
	वर्ष	वार्षिक
	भूगोल	भौगोलिक
	हृदय	हार्दिक
	इच्छा	ऐच्छिक
	नगर	नागरिक
	प्रकृति	प्राकृतिक
ईय	जाति	जातीय
	आत्मा	आत्मीय
	स्वर्ग	स्वर्गीय
	स्थान	स्थानीय
इया	शहर	शहरिया
इन/इण	कुल	कुलीन
	ग्राम	ग्रामीण
लु/आलु/ले/ली/लो	खर्च	खर्चालु
	विष	विषालु
	माया	मायालु
	दूध	दूधालु
	घर	घरेलु
	ठिमी	ठिमिले
	गोरखा	गोरखाली
	रस	रसिलो

क्रिया से बने विशेषण : जैसे–पढ़ेको (पाठ)

संज्ञा का सम्बन्ध कारक रूप : जैसे– जंगली, शहरी, भारतीय, नेपाली आदि ।

परिमाणवाचक विशेषण :– जो निश्चित परिमाणवाचक तथा अनिश्चित परिमाणवाचक में विभक्त होते हैं ।

संख्यावाचक विशेषण : इसके दो भेद होते हैं:–

क) निश्चित संख्यावाचक

ख) अनिश्चित संख्यावाचक

निश्चित संख्यावाचक विशेषण पांच तरह के होते हैं, जो निम्नलिखित हैं–

क) गणनावाचक : जैसे– एक, चार, पांच आदि

ख) क्रमवाचक : जैसे– चौथो, पांचो

ग) आवृत्तिवाचक : जैसे– दुगुना, चौगुना, दोबर, तेबर

घ) समुदायवाचक : जैसे– चारै, सातै

ड.) प्रत्येकवाचक: जैसे– एकेक, प्रत्येक, हर एक, दुइ–दुइ, तीन–तीन।

अनिश्चित संख्यावाचक सर्वनाम– जैसे– थोड़े, घेरै, सबै आदिका प्रयोग अनिश्चित परिणामवाचक विशेषण की तरह भी हो सकता है। हजारौ, अनेक आदि अनिश्चित संख्यावाचक विशेषणों के साथ ऐसा नहीं होता ।

सर्वनाम विशेषण – सर्वनाम से बने होते हैं। ये दो तरह के होते हैं जो निम्नलिखित हैं –

क) मूल सर्वनामिक विशेषण – जैसे: यो, त्यो, उ, जो आदि।

ख) यौगिक सर्वनामिक विशेषण– जैसे: यति, यत्रो; त्यति,त्यत्रो; कति, कत्रो, उति, उत्रो, यस्तो, त्यस्तो, कस्तो, उस्तो, जस्तो आदि।

प्रयोग के अनुसार विशेषण के निम्नलिखित दो भेद होते हैं–

क) उद्देश्य विशेषण– जैसेः मीठो ऑंप; राम्रोमानिस

ख) विधेय विशेषण– जैसेः ऑंप मीठो छ

जिस विशेषण के अन्त में आकार या ओकार होता है उसका रूप विशेष्य के स्त्रीलिंग होने पर बदल जाता है। जैसे–कालो गोऊ; काली गाई; राम्रो मालिक, राम्री मालिक्नी ।

जिस विशेशण के अन्त में 'वान' या 'मान' प्रत्यय जुड़ा होता है वे बत्ती एवं मत्ती प्रत्ययों में बदल जाते हैं। जैसे–

रूपवान पुरूष, रूपवती स्त्री, बुद्धिमान पुरूष, बुद्धिमती स्त्री आदि।

जिन विशेषणों के अन्त में आकार या ओकार नहीं होता, उनका रूप नहीं बदलता है। जैसेः दयालु पुरूष, दयालु स्त्री ।

हिन्दी की तरह ही नेपाली भाषा में भी विशेषण की मूलावस्था, उत्तरावस्था एवं उत्तमावस्था– ये तीन अवस्थाएं होती हैं।

तत्सम् शब्दों को मूलावस्था से उत्तरावस्था एवं उत्तमावस्था में बदलने के लिए संस्कृत की तरह ही क्रमशः 'तर' एवं 'तम' प्रत्यय प्रयुक्त होते हैं। जैसे–

प्रत्यय	संज्ञा	विशेषण
इत	हर्ष	हर्षित
ई/ए	खून	खूनी
	गफ	गफी

प्रत्यय	संज्ञा	विशेषण
	उत्साह	उत्साही
	भात	भाते
	पहाड़	पहाड़े
इयार	होश	होशियार इत्यादि

इनमें से अधिकांश प्रत्यय हिन्दी में भी इसी प्रकार प्रयुक्त होते हैं। ति, त्रो, स्तो आदि प्रत्यय लगाकर सर्वनाम से विशेषण बनाते हैं । जैसे–

सर्वनाम	विशेषण
उ	उति, उत्रो, उस्तो
को	कति, कत्रो, कस्तो
त्यो	त्यति, त्यत्रो, त्यस्तो
यो	यति, यत्रो, यस्तो

संख्यावाचक विशेषण से विशेषण बनाने के लिए उसमें ता, ओटा, बर, हरो आदि प्रत्यय जोड़ते हैं ।

संख्यावाचक विशेषण	विशेषण
एक	एउटा, एकवटा, एकोहरा
दुइ	दुउटा, दुइटवटा, दोबर, दोहरो, दोहोटो
तीन	तीनवटा, तेबर, तेहरो
चार	चारओटा, चौबर, चौगुना, चौथो

क्रिया की धातु में अक्कड़, आहा, इलो, उवा, ऐया आदि प्रत्यय लगाकर विशेषण बनाते हैं ।

क्रिया	**विशेषण**
बुझ्नु	बुझक्कड़
घुम्नु	घुमक्कड़
पोल्नु	पोलाहा
सुत्नु	सुताहा
हास्नु	हँसिलो
हार्नु	हरूवा
खानु	खवैय, खाने
गाउनु	गवैया
हुनु	हुने
पढ्नु	पढ़ने, पढ़न्ते
उड़्नु	उड़न्ते
लड़्नु	लड़ाकू

अव्यय से विशेषण बनाने के लिए 'ई', इरी, ल्लो आदि प्रत्यय जोड़ते हैं।

अव्यय	**विशेषण**
बाहिर	बाहिरी
भित्र	भित्रे
पर	पराई
ऊपर	उपल्लो
पछि	पछिल्लो

क्रिया – इस भाषा में क्रिया की धातु में 'नु' प्रत्यय लगाकर क्रिया के साधारण रूप बनता है। जैसेः खानु, दिनु, राख्नु, देख्नु, गर्नु आदि ।

हिन्दी की तरह ही इस भाषा में क्रिया के दो भेद– अकर्मक तथा सकर्मक होते हैं ।

अकर्मक क्रिया – पूर्ण सकर्मक जैसे : सुत्नु, हस्नु आदि तथा अपूर्ण सकर्मक जैसे : हुनु, लाग्नु, आदि दो तरह के होते हैं।

सकर्मक क्रिया भी पूर्ण सकर्मक (जिसका एक ही कर्म होता है) तथा अपूर्ण सकर्मक (द्विकर्मक तथा कर्मपूर्तियुक्त क्रियाएं) दो तरह की होती हैं।

अर्थ के अनुसार हिन्दी की तरह ही क्रिया के दो भेद (समापिका तथा असमापिका) होते हैं।

समापिका क्रिया के तीन भेद– साधारण क्रिया, संभाव्य क्रिया एवं विधि क्रिया या विध्यर्थ होते हैं।

पूर्वकालिक कृदन्त असमापिका क्रिया का ही एक रूप है। यह 'ई' (जैसे खाई, गरी आदि), एर जैसे (खएर, गरेर); कन (जैसे करीकन), इ वरी (जैसे गरी बरी) प्रत्ययों के प्रयोग द्वारा बनता है। पूर्वकालिक क्रिया अकर्मक क्रिया (जैसे उठेर, गएर आदि) तथा सकर्मक क्रिया (जैसे खएर, लेखेर आदि) दोनों से बनती हैं।

व्युत्पत्ति के अनुसार क्रिया के दो भेद— मूल क्रिया (जैसे गर्नु, दिनु, खानु, बस्नु आदि) तथा यौगिक क्रिया (जैसे गरि, दिनु, लजाउनु आदि) होते हैं ।

यौगिक क्रिया प्रेरणार्थक क्रिया या संयुक्त बनाकर या नाम धातु के प्रयोग द्वारा बनाई जा सकती है ।

प्रेरणार्थक क्रिया निम्नलिखित तरीके से बनाई जा सकती है—

क) 'आउ' प्रत्यय के प्रयोग द्वारा

क्रिया	**प्रेरणार्थक क्रिया**
गर्नु	गराउनु
बस्नु	बसाउनु
रूनु	रूबाउनु

ख) जानु, पार्नु, सक्नु, हुनु, रोक्नु, ठान्नु आदि क्रियाओं के अन्त में 'लाउनु' शब्द जोड़कर—

क्रिया	**प्रेरणार्थक क्रिया**
जानु	जानलाउनु
रूक्नु	रोक लाउनु

ग) कुछ क्रियाओं के धातु के साथ 'आउन लाउन' शब्द जोड़कर—

क्रिया	**प्रेरणार्थक क्रिया**
आउनु	आउन लाउनु
पठाउनु	पठाउन लाउनु
समाउनु	समाउन लाउनु
पाउनु	पाउन लाउनु

संयुक्त क्रिया : क्रिया के साथ सहायक क्रिया जोड़कर संयुक्त क्रिया बनाई जाती है ।

सहायक क्रिया	संयुक्त क्रिया
गर्नु	लेख्दैगर्नु, जांदैगर्नु
दिनु	गरिदिनु; भनिदिनु
जानु	निजानु, भन्नजानु
सम्नु	गर्नसम्नु, भन्नसक्नु
पाउनु	भन्नपाउनु, लेख्नपाउनु
हेर्नु	भनिहेर्नु, लेखिहेर्नु, गरिहेर्नु
हाल्नु	लेखिहाल्नु, भनिहाल्नु
छोड़नु	गरिछोड़नु, लेखिछोड़नु
राख्नु	लेखिराख्नु, भनिराख्नु

संज्ञा, विशेषण, अव्यय आदि के साथ 'इ, आउ' आदि प्रत्यय जोड़कर नामधातु बनती है। जैसे–

शब्द	नामधातु	क्रिया
डर	डराउ	डराउनु
लाज	लजाउ	लजाउनु
लोभ	लोभि, लोभ्याउ	लोभिनु, लोभ्याउनु
लामो	लमि	लमिनु
भित्र	भित्रि	भित्रिनु
घिन	घिनाउ	घिनाउनु
दोबर	दोबरि	दोबारिनु

काल, वाच्य, लिंग, वचन, पुरूष एवं अर्थ के परिवर्तन द्वारा क्रिया का रूपान्तर होता है ।

काल : [1] हिन्दी की तरह ही इस भाषा में काल तीन– भूतकाल, वर्तमानकाल एवं भविष्यकाल होते हैं। अलग–अलग प्रत्ययों के प्रयोग द्वारा विभिन्न कालों का निर्धारण होता है। कालों द्योतक प्रत्यय निम्नलिखित दो प्रकार के होते हैं–

क) करण प्रत्यय, जैसे: छु, छौ, छस, छ, छन आदि। स घरमा थिए । म स्कूल जानछु आदि प्रयोग इसके उदाहरण हैं।

ख) अकरण प्रत्यय (निषेधात्मक प्रत्यय) जैसे: छैन, छैनों, छैनस, छैनों, छैन्न आदि। म घरमा थिइनँ। म स्कूल जादिनँ आदि प्रयोग इसके उदाहरण हैं।

नेपाली भाषा में भूतकाल चार तरह का– सामान्य भू, पूर्णभूत, अपूर्ण भूत एवं संदिग्ध भूत होता है। नीचे **'बस्नु'** क्रिय (बसना) का रूपान्तर इस प्रकार है–

सामान्य भूतकाल

	एकवचन	**बहुवचन**
उ0पु0	म बसिनँ	हामी बसेनौं
मध्यम पुरूष	तँ बसिनस	तिमीहरू बसेनौ
अन्य पुरूष	त्यो बसेन	तिनीहरू बसेनन्
(स्त्री0)	त्यो बसिन	

---

1. डी0पी0 भट्टराई 'प्रकाश'–नेपाली व्याकरण र अभिवयक्ति, पृ0 76–83.

अकरण (निषेधवाचक) सामान्य भूत

	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पु0	म बसिनँ	हामी बसेनौं
म0पु0	तँबसिनस	तिनीहरू बसेनौ
अ0 पु0	त्यो बसेन	तिनीहरू बसेनन्
(स्त्री0)	त्यो बसिन	

पूर्व भूतकाल

	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पुरूष	म बसेको थिएँ	हामी बसेका थियौं
(स्त्री0)	म बसेकी थिएँ	
मध्यम पुरूष	तँ बसेको थिइस	तिमीहरू बसेका थियौ
(स्त्री0)	तँ बसेकी थिइस	
अन्य पुरूष	त्यो बसेको थियो	तिनीहरू बसेका थिए
(स्त्री0)	त्यो बसेकी थिई	

अकरण (निषेधवाचक) पूर्वभूत

	एकवचन	बहुवचन
उ0पु0	म बसेको थिइनँ	हामी बसेका थिएनौं
(स्त्री0)	म बसेकी थिइनँ	
म0पु0	तँ बसेको थिइनस्	तिमीहरू बसेका थिएनौ
(स्त्री0)	तँ बसेकी थिइनस्	
अ0पु0	त्यो बसेको थिएन	तिनीहरू बसेका थिएनन्
(स्त्री0)	त्यो बसेकी थिइन	

अपूर्ण भूतकाल

	एकवचन	बहुवचन
उ0पु0	म बसतो थिएं/बस्तथें/बस्थें	हामी बस्ता थियौं
(स्त्री0)	म बस्ती थिएँ	बस्तथ्यौं/बस्थ्यौं
मध्यम पुरूष	तँ बस्तो थिइस/ बस्तथिइस/बस्थिस्	तिमीहरू बस्ताथियौ/ बस्तथ्यौ/बस्थ्यौ
(स्त्री0)	तँ बस्ती थिइस्	
अ0पु0	त्यो बस्ती थियो/ बस्तथ्यो/बस्थ्यो	तिनीहरू बस्ताथिए/ बस्तथे/बस्थे
(स्त्री0)	त्यो बस्ती थिई/बस्तथी/बस्थी	

अकरण (निषेधवाचक) अपूर्ण भूत

	एकवचन	बहुवचन
उ0पु0	म बस्तिनथें/बस्तैनथे	हा बस्तैनथ्यौं
म0पु0	तँ बस्तैनथिस	तिमीहरू बस्तैनथ्यो
(स्त्री0)	तँ बस्तिनथिस्	
अन्य पु0	त्यो बस्तैनथ्यो	तिनीहरू बस्तैनथे
(स्त्री0)	त्यो बस्तिनथी	

संदिग्ध भूत

	एकवचन	बहुवचन
उ0पु0	म बसे हुँला	हामी बसे होला
(स्त्री0)	म बसें हुँली	
म0पु0	तँ बसिस् होला	तिमीहरू बस्यौ होला
(स्त्री0)	तै बसी होलिस	

अ0पु0	त्यो बस्यो होला	तिनीहरू बसे होलान्
(स्त्री0)	त्यो बसी होली	

इस भाषा में वर्तमान काल[1] के चार भेद– सामान्य वर्तमान, तात्कालिक वर्तमान, पूर्ण वर्तमान तथा संदिग्ध वर्तमान होते हैं जिनकी रूपावली इस प्रकार है–

सामान्य वर्तमान

	एकवचन	बहुवचन
उ0पु0	म बस्छु/बस्तछु	हामी बस्छौं/बसतछौं
म0पु0	तँ बस्छस्/बस्तछस	तिमीहरू बस्तछौ
(स्त्री0)	तँ बस्छेस/बस्तछेस	
अन्य पु0	त्यो बस्छ/बस्तछ	तिनीहरू बस्छन्
(स्त्री0)	त्यो बस्छे/बस्तछे	बसतछन्

अकरण (निषेधवाचक) सामान्य वर्तमान

	एकवचन	बहुवचन
उ0पु0	मैं बस्तिनँ	हामी बस्तैनौं
म0पु0	तँ बस्तैनस	तिमीहरू बस्तैनौं
(स्त्री0)	तँ बस्तिनस्	
अन्य पु0	त्यो बसतैन	मिनीहरू बस्तैनन्
(स्त्री0)	त्यो बस्तिन	

1. डा0 हेमाड.गराज अधिकारी–समसामयिक नेपाली व्याकरण, पृ0 115.

तात्कालिक वर्तमान

	एकवचन	बहुवचन
उ0पु0	म बसिरहेछु/रहे कोछु	हामी बसिरहे छौं
(स्त्री0)	म बसिरहिछु/बसिरहेकीछु	रहेका छौं
म0पु0	तँ बसिरहे छस/रहे कोछस्	तिमीहरू बसिरहे छौ/रहेका छौ
अन्य पु0	त्ये बसिरहेछ/रहेको छ	तिनीहरू बसिरहेछन्
(स्त्री0)	त्यो बसिरहिछ/ बसि रहे कि छ	रहेकाछन्

अकरण तात्कालिक वर्तमान

	एकवचन	बहुवचन
उ0पु0	म बसिरहेको छैनँ	हामी बसिरहेका छैनौं
(स्त्री0)	म बसिरहेकी छैनँ	
म0पु0	तँ बसिरहेको छैनस्	तिमीहरू बसिरहेका छैनो
(स्त्री0)	तँ बसिरहेकी छैनस्	
अन्य पु0	त्यो बसिरहेको छैन	तिनीहरू बसिरहेका छैनन्
(स्त्री0)	त्यो बसिरहेकी छैन	

पूर्ण वर्तमान काल

	एकवचन	बहुवचन
उ0पु0	म बसेको छु	हामी बसेका छौं
(स्त्री0)	म बसेकी छु	
म0पु0	तँ बसेको छस्	तिमीहरू बसेका छौं
(स्त्री0)	तँ बसेकी छस्	
अन्य पु0	त्यो बसेको छ	तिनीहरू बसेका छन्
(स्त्री0)	त्यो बसेकी छ	

अकरण (निषेधवाचक) पूर्ण वर्तमान काल

	एकवचन	बहुवचन
उ0पु0	म बसेको छैनँ	हामी बसेका छैनौं
(स्त्री0)	म बसेकी छैनँ	
म0पु0	तँ बसेको छैनस्	तिमीहरू बसेका छैनौ
(स्त्री0)	तँ बसेकी छैनस्	
अन्य पु0	त्यो बसेको छैन	तिनीहरू बसेका छैनन्
(स्त्री0)	त्यो बसेकी छैन	

संदिग्ध वर्तमान काल

	एकवचन	बहुवचन
उ0पु0	म बस्तो हुँ/हुँला	हामी बस्ता होऊँ/होउँला
(स्त्री0)	म बस्ती हुँ/हुँली	
म0पु0	तँ बस्तो होसँ/लोलिस्	तिमीहरू बस्ता होऊ
(स्त्री0)	तँ बस्ती होस्/होलिस्	
अन्य पु0	त्यो बस्तो हो/होला	तिनीहरू बस्ता हुन
(स्त्री0)	त्यो बस्ती हो/होली	होलान्

नोट– संदिग्ध वर्तमान के निषेधावाचक रूप के लिए क्रिया के पहले 'न' जोड़ते हैं। जैसे– म नबस्तो हुँ (हुँला)। तँ नवस्तो होस (होलास) इत्यादि ।

भविष्यत काल . नेपाली भाषा में भविष्यत् काल के दो भेद– सामान्य भविष्यत् एवं संभाव्य भविष्यत्–होते हैं। कोई–कोई वैयाकरण इसे पूर्ण तथा अपूर्ण भविष्यत् के नाम से भी अभीहित करते हैं ।

निषेधात्मक संभाव्य भविष्यत् काल के लिए क्रिया के पहले 'न' लगाते हैं। जैसे– म नबसुंला, तँ नबस्लास्।

हिन्दी की ही तरह नेपाली भाषा में तीन वाच्य[1]– कर्तृवाच्य, कर्मवाच्य एवं भाववाच्य– होते हैं। कर्मवाच्य का प्रयोग इस भाषा में बहुत ही कम होता है।

कर्तृवाच्य अकर्मक एवं सकर्मक दोनों ही क्रियाओं के साथ बनता है। जैसे– भाइ, सुन्छ (अकर्मक क्रिया), मोहन किताब पठ् (सकर्मक क्रिया)। कर्मवाच्य केवल सकर्मक क्रिया के साथ ही बन सकता है। जैसे– मोहनबाट पत्र लेखियो। इसी प्रकार भाववाच्य केवल अकर्मक क्रिया से बनता है। जैसे–

रामबाट सुतिन्छ् ।

सकर्मक तथा अकर्मक क्रिया के साथ "इकार या इन्" जोड़कर क्रमशः कर्मवाच्य तथा भाववाच्य बनाते हैं। जैसे–

कर्तृवाच्य	कर्मवाच्य
खान्छ	खाइन्छ
पठछ्	पठिनछ्
लेखछ्	लेखिनछ
गाउंछ	गाइन्छ
गर्छ	गरिन्छ
मोहन किताब पठ्छ	मोहन बाट किताब पठिन्छ
म पत्र लेख्नेछु	म बाट पत्र लेखिनेछ
हाँस्छ	हाँसिन्छ

---

1. पच्च प्रसाद शर्मा–अनिवार्य नेपाली को पाठ्यपुस्तक, पृ0 69.

कर्तृवाच्य	कर्मवाच्य
रून्छ	रोइन्छ
मर्छ	मरिन्छ
आउंछ	आइन्छ
बस्छ	बसिन्छ
जान्छ	जाइन्छ, गइन्छ
हुनछ	होइन्छ, भारन्छ
राम सुत्छ	रामबाट सुतिन्छ

अव्यय : नेपाली भाषा में अव्यय चार तरह के होते हैं, जो निम्नलिखित है–

क) क्रिया विशेषण

ख) सम्बन्ध वाचक या नामयोगी

ग) संयोजक

घ) विस्मयादि बोधक ।

क्रिया विशेषण के निम्नलिखित भेद हैं :–

क) स्थानवाचक– जैसे: यहां, उह्नं, कहां, यता, उता, त्यता, कता, जह्नं, तह्नं, नजीक, पारि, वारि, पर, वर, तल, माथि, अथि, पछि, बाहिर, भित्र इत्यादि ।

ख) परिमावाचक – जैसे: ढेर, थोर, किंचित्, कम, थेरै, थोरै, अति, अत्यन्त, जति, मति, खूब, प्रायः, लगभग इत्यादि।

ग) कालवाचक– अब, तब, जब, आज, हिजो, प्रतिदिन, निरन्तर, अहिले, कहिले, सदा, सर्वदा, बहुधा, तत्काल, यजिञ्जेल, उतिञ्जेल, हियो इत्यादि ।

घ) गुणवाचक – जैसेः राम्री, वेसरी, छीटो, जाडो इत्यादि ।

ड.) अनुकरणवाचक – दनादन, फनाफन, पटापट, खुसुखुसु, घुरू घुरू, टक्क, टपक्क, भुसुक्क, मुसुक्क, पुलुक्क, फतक्क, थपक्क, थमाथम, सरासर, थ्याच्च, प्याच्च, चिटिक्क, झिलिक्क इत्यादि ।

च) निषेधवाचक – जैसेः न, नाईं, नि, सिन्तै इत्यादि ।

सम्बन्धवाचक या नामयोगी – इसके निम्नलिखित भेद होते हैं–

क) कालवाचक : जैसे–अधि, पछि, पूर्व, उपरान्त इत्यादि

ख) स्थानवाचक : जैसे–निकट, नेर, बीच, माथि इत्यादि

ग) दिशावाचक : जैसे– तर्फ, तिर, पट्टि इत्यादि

घ) साधनवाचक : जैसे– द्वारा ।

ड.) हेतुवाचक : जैसे– निमित्त, निमृति

च) भिन्नतावाचक : जैसे–बिना, रहित, वाहेक इत्यादि ।

छ) साहश्यवाचक : जैसे–सम, समान, अनुरूप, तुल्य, भाँति इत्यादि।

कुछ शब्द विभिन्न प्रयोग द्वारा क्रिया विशेषण अथवा सम्बन्ध–वाचक अव्यय या संयोजक हो सकता है ।

संयोजक : इसके दो भेद :– सापेक्ष एवं निरपेक्ष होते हैं ।

सापेक्ष संयोजक निम्नलिखित दो तरह के होते हैं–

क) करणवाचक : जैसे– र , किनकी इत्यादि ।

ख) संकेतवाचक : जैसे–यदि, पो, भने, भनेदेखि इत्यादि।

निरपेक्ष अव्यय निम्नलिखित प्रकार के होते हैं:–

क) समुच्चयवाचक : जैसे– र, समेत, पनि इत्यादि ।

ख) विभाजक : जैसे– अथवा, वा, कि, किंवा

ग) परिणामदर्शक : जैसे– अतः, अतएव, यसैले, यसकारण इत्यादि।

घ) विरोधदर्शक : जैसे– किन्तु, परन्तु, वरन्, तर, नत्र, होइनभने इत्यादि।

विस्मयादिबोधक : इसके मुख्य भेद निम्नलिखित हैं–

क) हर्षबोधक : जैसे– अहा ! वाह–वाह ! धन्य ! श्यावस ।

ख) आश्चर्यबोधक : जैसे–अहो ! के ! क्या ! साँच्चै !

ग) तिरस्कारबोधक : जैसे– छिः ! धिक्कार !

घ) शोकबोधक : जैसे– हाय ! हा ! हरे ! राम–राम !

ड.) सम्बोधनबोधक : जैसे– रे, अरे, ए इत्यादि ।

संधि :– हिन्दी तथा संस्कृत की तरह ही इस भाषा में संधि तीन तरह की – स्वर संधि, व्यंजन संधि एवं विसर्ग संधि – होती है। संधि के नियम भी इस भाषा में समान हैं ।

समास :–[1]

हिन्दी की तरह ही नेपाली भाषा में भी समास के छः भेद – तत्पुरूष, कर्मधारय, द्विगु, द्वन्द्व, अव्ययीभाव एवं बहुब्रीहि होते हैं। समास एवं उनके विग्रह सम्बन्धी नियम इन दोनों ही भाषाओं में समान हैं ।

हिन्दी भाषा की तरह ही नेपाली भाषा में भी वाक्य के मुख्य दो खण्ड उद्देश्य एवं विधेय होते हैं । वाक्यों के भेद, वाक्य रचना एवं वाक्य विग्रह के नियम भी प्रायः समान होते हैं ।

हिन्दी एवं नेपाली विराम चिन्ह समान हैं ।

छन्द रचना में भी हिन्दी एवं नेपाली में प्रचुर समानता है ।

---

1. डा0 हेमाड.राज अधिकारी, "समसामयिक नेपाली व्याकरण", पृ0 311.

****

चौथा अध्याय

भोजपुरी और नेपाली का सांस्कृतिक बोध

भोजपुरी और नेपाली का सांस्कृतिक बोध

भौगोलिक रूप से भारत और नेपाल के जुड़े होने के कारण ये दोनों सांस्कृतिक रूप से भी गहरे जुड़े हुए हैं। भारत के दो प्रमुख भोजपुरी भाषी राज्यों विशेष रूप से उत्तर प्रदेश और बिहार से नेपाल जुड़ा हुआ है। हिन्दू राष्ट्र होने के नाते नेपाल का विशेषकर उत्तर भारत के गया, काशी, प्रयाग, हरिद्वार, अयोध्या, वृन्दावन, चित्रकूट आदि तीर्थस्थलों के साथ प्राचीन काल से ही अटूट सम्बन्ध रहा है । भारत के यह सभी तीर्थ स्थल बिहार और उत्तर प्रदेश में पड़ते हैं। बिहार और उत्तर प्रदेश भारत का भोजपुरी भाषी क्षेत्र तो है ही, हिन्दी के प्रायः मूर्धन्य व अनेक छोटे बड़े साहित्यकार भी इन्हीं दो राज्यों में हुए हैं। विद्यापति से लेकर कबीर, सूर, तुलसी तथा आधुनिक हिन्दी साहित्य के स्वल्प निर्माता भारतेन्दु हरिश्चन्द्र तक प्रायः सभी श्रेष्ठ साहित्यकार उसी हिन्दी भाषी क्षेत्र अथवा उपर्युक्त तीर्थस्थलों से किसी न किसी रूप में अवश्य सम्बद्ध रहे हैं। कबीर, तुलसी और भारतेन्दु हरिश्चन्द्र काशी से जुड़े रहे, तो सूर ब्रजभूमि से । वहीं दूसरी ओर विद्यापति मिथिला अंचल से जुड़े रहे। नेपाल पूरब से पश्चिम तक बिहार और उत्तर प्रदेश से घनिष्ठ रूप में लगा हुआ है तथा दोनों ओर की भाषिक स्थिति भी बिल्कुल एक है । इस समानता से तथा दोनों ओर के तीर्थस्थलों ने नेपाल और भारत के बीच ऐसा सहज सम्बन्ध और आत्मीय वातावरण पैदा कर दिया है, जिससे दोनों ही देश के लोग तीर्थस्थलों पर एक–दूसरे से सदा बंधु–भाव से मिलने का अवसर पाते रहे हैं। प्रयाग के संगम पर कुम्भ और माघ मेले, काशी में गंगा स्नान एवं विश्वनाथ दर्शन हेतु असंख्य नेपाली प्रायः नेपाल के प्रत्येक कोने से आते ही रहते हैं। प्रतिवर्ष बड़ी संख्या में सायुज्य मुक्ति के उद्देश्य से नेपाली वृद्ध काशी वास के लिए भी आते हैं, जिनके साथ वर्षों उनका परिवार

भी वहां रूका रहता है। इसी प्रकार वृन्दावन, मथुरा आदि स्थलों पर भी होली और झूला आदि अवसरों पर अथवा अन्य दिनों में दर्शनार्थ आने वाले लोग भी कम नहीं ।

बिहार के देवघर (वैद्यनाथ धाम) और हरिहर क्षेत्र में भी सावन और माघ में शिवलिंग पर जल अर्पित करने तथा हरिहर क्षेत्र में कार्तिक स्नान के लिए लाखों लोग प्रतिवर्ष आते हैं। इनके अतिरिक्त भी अनेक छोटे–बड़े धार्मिक स्थल शिलानाथ धाम, कल्याणेश्वर महादेव, सीतामढ़ी आदि धार्मिक स्थल भी उसी हिन्दी भाषी प्रदेश में पड़ते हैं जहां पर हर वर्ष नेपाल से लाखों लोग दर्शनार्थ आया करते हैं ।

भारत से भी नेपाल के तीर्थस्थलों पर जाने वाले लोगों की संख्या लाखों में होती है। काठमांडू उपत्यका में शिवरात्रि के अवसर पर पशुपति–नाथ दर्शन हेतु लाखों लोग भारत से जाते हैं। उसी प्रकार नेपाल के अन्य धार्मिक–तीर्थस्थलों जैसे जनकपुर धाम, वाराह क्षेत्र आदि में भी काफी बड़ी संख्या भारतवासी जाते हैं। जनकपुर में तो विवल्पचमी, रामनवमी और फाल्गुन पूर्णिमा के अवसर पर लाखों की संख्या में भारतीय लोग आते हैं। फाल्गुन शुक्ल में वहां जनकपुर क्षेत्र परिक्रमा पन्द्रह दिन तक चलती है और पूर्णिमा को समापन दिन पर नगर परिक्रमा होती है। इतने दिनों तक इस परिक्रमा में लाखों भारतीय–नेपाली साथ–साथ रहते हैं। जनकपुर को बिहार के जयनगर से जोड़ने वाली नेपाली रेल जो कि देश की एकमात्र रेल है, मुख्य रूप में भारतीय यात्रियों को ही ध्यान में रखकर चलायी जा रही है। इससे नेपाल को अच्छी आय हो रही है। इन धार्मिक स्थलों पर आने वाले अधिकांश भारतीय यात्री हिन्दी प्रदेश के ही होते हैं।

हम यह अच्छी तरह जानते ही हैं कि भारत और नेपाल के जनजीवन तथा संस्कृति–निर्माण में धर्म ने जितनी महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है, उतनी और किसी चीज ने नहीं । वस्तुतः धर्म ही वह मूल बिंदु है जिसने दोनों देशों के सांस्कृतिक सम्बन्ध को एक स्थिर और ठोस धरातल प्रदान किया है।

भारत के संस्कृत ग्रंथों में नेपाल का उल्लेख :

नेपाल के सम्बन्ध में भारत के संस्कृत ग्रन्थों में उल्लेख प्राचीन काल से ही प्राप्त होता है। दोनों देशों के पुरातन सांस्कृतिक सम्बन्ध पर इससे भी काफी प्रकाश पड़ता है। उन ग्रन्थों में सर्वाधिक "स्कन्दपुराण" के अन्तर्गत नेपाल का सविस्तार उल्लेख प्राप्त होता है। स्कन्दपुराण का समय विक्रम की आठवीं शताब्दी से भी पूर्व का ठहरता है। इस ग्रन्थ के हिमवत्खंड अन्तर्गत "नेपाल–महात्म्य" [1] नाम से नेपाल का विशद वर्णन हुआ है। नेपाल को महाक्षेत्र यानी महान तीर्थ की संज्ञा देते हुए कथा प्रारम्भ होती है ।

नेपाल : काशी और कैलाश से भी रम्य : [2]

स्कन्दपुराण के अन्तर्गत नेपाल –महात्म्य में तो नेपाल को काशी और कैलाश से भी श्रेष्ठ दिखाने की कोशिश की गयी है। इस क्षेत्र के प्राकृतिक सौन्दर्य और गरिमा को देखकर काशी और कैलाश से कभी अपने आपको अलग नहीं करने पाते। भगवान शिव तथा देवी पार्वती का मन भी उतना आनन्दमय और

---

1. "नेपाल माहात्म्य", प्रथम संस्करण, वि०सं० 2028 नेपाल राष्ट्रीय अक्षर प्रतिष्ठान प्रकाशन काठमाण्डू, पृ० 1.
2. वही, पृ० 3.

प्रभावित हुआ कि ये दोनों काशी एवं कैलाश को छोड़ उसी श्लेष्मांतक वन में आ गये और मृग और मृगी रूप में विचरण करने लगे। शिव और पार्वती के अदृश्य हो जाने से देवतागण, संसार व्याकुल हो गया । नारद आदि मुनि तथा ब्रह्मा आदि देवगणों ने तीनों लोकों में उन्हें ढूंढ़ा, शहर, गांव, नदी, वन, पर्वत कहीं भी उन्हें शंकर दिखाई नहीं पड़े । हिमालय पर्वत घूमते हुए अत्यन्त शान्त वे लोग हिमालय की गोद में आश्रित श्लेषमांतक वन में आये उसी समय उन्हें मृगों के झुंड में एक मृग तीन नेत्र तथा अत्यन्त पुष्ट सुन्दर शरीर वाले मृगरूपधारी शिव और मृगी रूप में पार्वती का दर्शन हुआ ।

शंकर द्वारा मृग रूप का त्याग नहीं करते देख इन्द्र, विष्णु और ब्रह्मा ने विचार किया कि उस मृग का सींग पकड़कर हम इसे वश में कर लें। इसके पश्चात् उन्होंने बलपूर्वक दोनों हाथों से मृग रूपी शिव का सींग पकड़ा देवताओं द्वारा सींग पकड़े जाने पर मृगरूपी महेश्वर जोरों से उछले जिससे सींग के चार टुकड़े हो गये। महारूद्र उछलकर उस पार बाग्मती नदी के मनोहर तीर पर पहुंच गये और पशुपति नाम से अब स्थित हो गये देवताओं ने तब शिव से हाथ जोड़कर प्रार्थना करते हुए कहा कि हे महारूद्र आप काशी या मनोहर कैलाश पर चलिए। आपके बिना हमें चराचर जगत शून्य सा लगता है। इतना सुनकर शिव ने देवताओं से कहा कि मैं इस रम्य वन में रहूंगा, कहीं नहीं जाऊंगा। इस श्लेषमान्तक वन में पशु रूप में स्थित हूँ इसलिए मेरा नाम संसार में पशुपति होगा मुझ पशुपति का जो देवता और पृथ्वी का मनुष्य दर्शन करेगा उसे मेरे अनुग्रह से पशु जन्म नहीं प्राप्त होगा[1] ।

---

1. "नेपाल माहात्म्य", वही, प्रथम संस्करण, पृ0 3.

शिव के साथ पार्वती ने भी जब वहीं वाग्मती नदी के तीर पर रहने की इच्छा प्रकट की तो शिव ने कहा कि – हे गिरिजे । मैं तुम्हें एक अत्यन्त गुप्त बात बताता हूँ। हे पार्वती, तुम पूर्व जन्म में सती नाम से देव की पुत्री थी। पिता के अपमान से तुमने प्राण त्याग कर दिया । तुम्हारे वियोग में शोकाकुल मैं स्नेहवश तुम्हारी तारा कन्धे पर लेकर सारी पृथ्वी पर घूमता फिर रहा था मुझे शोकाकुल देव विष्णु ने मेरे प्रति स्नेहवश तुम्हारे अंगों को अपने सुदर्शन चक्र से काट–काट कर गिराना शुरू कर दिया । मृगस्थली के उत्तर वाग्मती नदी के तीर पर तुम्हारा गुह्य अंग गिरा, वह पीठ अत्यन्त महिमायुक्त है। मेरे प्रेमवश तुमने यहां रहने की इच्छा प्रकट की इसलिए हे सुमुखी पार्वती तुम्हारा नाम वत्सला होगा। हे महेश्वरी, मेरी आज्ञा से तुम मेरी आग्नेय दिशा में सदावास करोगी। वाग्मती में स्नान कर तुम्हारे दर्शनोपरान्त जो मेरा दर्शन करेगा उसे कैलाश वास का फल प्राप्त होगा ।

स्कन्दपुराण के इस हिमवत्खंड अन्तर्गत नेपाल हिमालय में वर्णित सारे स्थल आज भी ज्यों के त्यों हैं। उन स्थलों की महिमा ने नेपाल को सदा शिवत्व से मंडित किये रखा। पशुपति और मृगस्थली देव के शान्त और रमणीय स्थल पर पहुंचने पर आज भी मनुष्य की पाशिवकता जैसे स्वतः दूर हटने लगती है। पाशिवक दुर्गुणों से मुक्ति के बाद ही मनुष्य का शुद्ध रूप निखरता है। उसके लिए पहले वत्सलता को अंगीकार करना पड़ता है। तभी पशुपति प्रसन्न होते हैं अर्थात् सभी पशुत्व से मुक्ति का द्वार खुलता है। वात्सल्य तभी पैदा हो सकता है जब हम दूसरों को आघात करने वाली भावना से अपने आपको अलग कर लें। वत्सल्य रूप में पार्वती को पशुपति के पास उपस्थिति के पीछे तार्किक दृष्टिकोण से भी यही अर्थ समझा जा सकता है ।

शिवत्व की महिमा से मंडित नेपाल में शिव के पशुपति रूप में व्यवस्थित हो जाने के बाद दूर से दूर अनेक देवी–देवता लोग उनकी सानिध्य–लालसा से वहां आकर बसने लगे। नेपाली लोगों का निष्कपट और स्वच्छ चरित्र तथा धार्मिक आचार में उदारता एवं सहिष्णुता देखकर उपयुक्त प्रसंग की सच्चाई में सहज ही विश्वास प्रकट किया जा सकता है ।

[1]काठमाण्डू के पश्चिम में वाग्मती अंचल से लगे हुए दोलागिर पर्वत का क्षेत्र पड़ता है। इस "दोलागिरि" को धौलागिरि के नाम से आज लोग जानते हैं। इसी के नाम पर वर्तमान नेपाल का धौला गिरि अंचल भी है। धौलागिरि पर्वत पर मुक्तिनाथ का प्रसिद्ध मन्दिर है.। यह बहुत पवित्र तीर्थ माना जाता है।

जब रामचन्द्र को सागर पर सेतु निर्माण करना पड़ा था तो उस समय वायुपुत्र हनुमान ने हिमालय शिखर तोड़कर ले जाने के लिए इसी प्रांत से होकर वीरभद्रा के संगम स्थल पर पर्वत को रखा था फिर दोनों हाथों से पर्वत उठाकर हनुमान वायु मार्ग से चले गये थे, तभी से यह स्थल हनुमत्तीर्थ के नाम से प्रसिद्ध हुआ । उसी संगम से कुछ ही दूरी पर वाल्मीकि ने भी वाल्मीकीश्वर नामक लिंग की स्थापना की थी। वाल्मीकीश्वर के दर्शन से वाग्विभूति प्राप्त होती है ।

स्कन्दपुराण में नेपाल के विभिन्न तीर्थस्थलों के महत्व उनका इतिहास और अवस्थिति पर विस्तृत रूप में सुन्दर प्रकाश पड़ा है। यहां प्राकृतिक सौन्दर्य

---

1. "नेपाल–महात्म्य", द्वितीय अध्याय, पृ0 11.

और रम्य वातावरण का भी भारत के प्राचीन संस्कृत ग्रन्थ ने बड़ा ही मनोहर चित्र प्रस्तुत किया है ।

इसके अतिरिक्त आधुनिक संस्कृत ग्रन्थों में भी अनेक में नेपाल का कहीं न कहीं किसी न किसी रूप में यथा अवसर या प्रसंग क्रम में उल्लेख मिल जाया करता है । सत्रहवीं शताब्ददी में हुए उदासीन मार्ग (मठ) के संस्थापक श्रीचन्द्र के जीवनीकार ने भी उनके जीवन के कई प्रसंगों को नेपाल से सम्बद्ध दिखाया है। श्रीचन्द्र जी उदासीन मठ में साक्षात् शिव के अवतार माने जाते हैं। हिन्दू जनता के उद्बोधन में उनका बहुत बड़ा हाथ रहा है। श्रीचन्द्र जी के जीवनीकार आखलानन्द शर्मा लिखते हैं – वर्तमान समय में जिन बातों का हिन्दू जनता में उद्बोधनात्मक आवेश होना चाहिए उन बातों का उल्लेख आज से तीन सौ वर्ष पूर्व विक्रम की सत्रहवीं सदी में जगदगुरू श्रीचन्द्रजी के जीवनकाल में श्रीचन्द्र द्वारा ही हो सका था ।

बौद्धों का सर्वनाश करने के लिए जिस प्रकार भगवान शंकर शंकराचार्य जी के रूप में अवतीर्ण हुए उसी प्रकार यवनों का उच्छेद करने के लिए भगवान शंकर श्री चन्द्र जी के रूप में अवतीर्ण हुए।[1]

आगे उनके सम्बन्ध में फिर लिखते हैं कि जिस समय सिंध प्रान्त के यवनों ने नगर ठठा की पवित्र भूमिमें दूसरा मक्का बनाने का आयोजन किया

---

1. अखिलानन्द शर्मा, "जगदगुरू–श्रीचन्द्र दिग्विजयम", प्रथम संस्करण, वि0सं0 1998, सन् 1942 ई, भूमिका, पृष्ठ "ख".

था उस समय चारों ओर हिन्दू संगठन का शंखनाद बजा कर आपने ही उनके शासन को छिन्न–भिन्न कर दिया था ।

श्रीचन्द्र दिग्विजय के लेखक ने श्रीचन्द्र जी के विभिन्न स्थानों के भ्रमण चर्चा क्रम में उनका नेपाल के प्रमुख धार्मिक स्थल जनकपुर आना भी लिखा है। जनकपुर प्रसंग की चर्चा "श्रीचन्द्र दिग्विजयम" के त्रयोदश सर्ग में हुई है। वह पूर्व दिग्विजय के अनन्तर अनेक शिष्यों के साथ जगन्नाथपुरी से प्रस्थित होकर जनकपुर पहुंचे। वहां पर अनेक मुनिजनों की प्रार्थना से आपने सनकादि मुनि प्रवर्तित उदासीन मार्ग का प्रचार किया ।

श्रीचन्द्र नेपाल के पार्वत्य–प्रदेश में भी पहुंचे थे और वहां के नरेश से पूजित हुए थे । ललितपुर, काठमाण्डू उपत्यका की एक प्रसिद्ध प्राचीन नगरी है। उसे पाटन या ललितपट्टन भी कहते हैं। सम्राट अशोक की पुत्री चारूमति ललितपुर में बौद्धधर्म के प्रचार के लिए आयी। वह ललितपुर के नरेश से ब्याही गयी थी । बौद्ध पाटनों के आधिक्य के कारण ही लोग इसे पाटन नाम से आज भी पुकारते हैं। यह नगरी नेपाली कला, कांस्य, पीतल आदि के बर्तनों तथा धातु के मूर्तियों के लिए प्रसिद्ध है। इसी नगरी में पुरेप्रस्तर का प्रसिद्ध कृष्ण मन्दिर है।

नेपाल के संस्कृत ग्रन्थों में भारत का उल्लेख :

आर्य भूमि नेपाल का संस्कृत साहित्य से बहुत प्राचीन काल से ही सम्बन्ध रहा है । आर्य संस्कृति के संरक्षण का यह बड़ा उत्तरदायित्व भी नेपाल, भारत की ही तरह, पर तुलनात्मक दृष्टि से अपनी छोटी भौगोलिक परिधि में, आज तक निभाता आया है। युगानुयुग से हिमालय के

समीप रहकर निरंतर साधनारत महर्षियों से प्रकाशित इस आर्यभूमि में देववाणी संस्कृत के उपासकों का होना कोई नवीन बात नहीं है। लिच्छवी काल में तो संस्कृत राष्ट्रभाषा के रूप में ही थी। मल्ल और शाहकाल के भी शिलालेख, ताम्र पत्र, कनक पत्र आदि संस्कृत में हैं। लेखन के साथ–साथ साहित्यिक कृतियाँ भी संस्कृत में रची जाने के कारण, संस्कृत राजकीय प्रतिष्ठा भाषा सिद्ध होती है। अतः संस्कृत के माध्यम से देश, समाज और मानवता की सेवा करने वाले लोगों की यहां कमी नहीं रही है। इस भूमि में संस्कृत वाङ्मय के उपासक कितने हुए और उनकी कैसी साधना रही यह एक अलग ही अनुसंधान का विषय है। अतः इस संदर्भ में यहां विशेष नहीं कहा जा सकता । फिर भी याज्ञवल्य, व्यास, वाल्मीकि, पराशर, भृगु, कपिल, अमरवाड़ा, भारवी प्रभृति श्रेष्ठ साधकों की साधना देखने पर पता चलता है कि उनका इस हिमालय क्षेत्र (नेपाल) से गहरा साहचर्य रहा है; जो किसी भी नेपाली को आहलाद एवं गौरवानुभूति से भर देता है ।

जिस देश में संस्कृत का इतने पुरातन का से प्रयोग चला आ रहा हो, वहां के संस्कृत ग्रन्थों में भारत का उल्लेख होना भी स्वाभाविक है। परन्तु एक तो यह विषय इस शोध का मूल उद्देश्य नहीं, दूसरे नेपाल के सम्पूर्ण संस्कृत ग्रन्थों की न तो सूची कहीं प्राप्त होती है और न सारे ग्रन्थ ही प्रकाशित हो सके हैं। इसलिए जो कुछ थोड़ी–बहुत सामग्री इस संदर्भ में उपलब्ध हो सकी है, उतने को ही इस चर्चा का आधार बनाया गया है। वास्तव में वहां के संस्कृत ग्रन्थों में भारत का और भारत के संस्कृत ग्रन्थों में नेपाल के उल्लेख का सीमित प्रसंग यहां केवल इसलिए लाया गया है ताकि दोनों देशों के बीच प्राचीन सम्बन्ध पर कुछ प्रकाश डाला जा सके । वस्तुतः भारत और नेपाल के बीच सांस्कृतिक आदान–प्रदान की जो प्राचीन काल से ही एक निरंतर प्रक्रिया चलती रही है उसका भी नेपाल में भोजपुरी के लिए आधारशिला एवं भूमि तैयार करने में प्रमुख हाथ रहा है।

पाँचवा अध्याय

भोजपुरी और नेपाली साहित्य

भोजपुरी और नेपाली साहित्य

भोजपुरी साहित्य का क्रमबद्ध इतिहास प्रस्तुत करने में सर्वप्रथम प्राथमिक स्तर पर जिस कठिनाई का सामना करना पड़ता है, उसका कारण वस्तुतः और कुछ नहीं वरन् इसकी स्वयं की परम्परा ही इसके लिए उत्तरदायी है।

वस्तुतः भोजपुरी साहित्य की परम्परा मौखिक रूपों में यथा लोकगीत, लोककथाओं तथा लोकगाथाओं के रूप में पायी जाती है औरइसी का संकलन करके ही साहित्य के विशाल भवनका निर्माण किया जा सकता है। भोजपुरी साहित्य के इन कठिनाईयों को निम्नलिखित शोध करने वाले विद्वानों (वीम्स, ग्रियर्सन, हर्नले, सुनिति कुमार चटर्जी) ने भी स्वीकार किया है कि– "भोजपुरी में साहित्य का अभाव है।"

उपर्युक्त तथ्यों की सत्यता को स्वीकार करते हुए साथ ही साथ भोजपुरी साहित्य में कतिपय विद्वानों के अपने अथक परिश्रम से पर्याप्त भोजपुरी साहित्य के बारे में प्राप्त विवरण से भोजपुरी साहित्य का स्वरूप प्रस्तुत कर रहा हूँ ।

हिन्दी साहित्य में (आदिकाल) चौरासी सिद्धों ने अपनी कविता में जिस भाषा का प्रयोग किया है, उसे निश्चित रूप से भोजपुरी कहना उचित न होगा, क्योंकि उस पर मागधी, अपभ्रंश से प्रसूत सभी भाषाओं एवं बोलियों का समानाधिकार है, किन्तु इन सिद्धों के बाद सन्त कवियों एवं तुलसी, जायसी आदि अवधी के कवियों ने भी भोजपुरी संज्ञा–शब्दों एवं कहीं–कहीं क्रिया–पदों तक का प्रयोग किया है । ये प्रयोग इस बात को स्पष्ट रूप से प्रकट करते हैं कि

उस प्राचीन युग में भी भोजपुरी पूर्णरूप से सजीव भाषा थी । इन कवियों में कबीर का स्थान सर्वश्रेष्ठ है। सच बात तो यह है कि कबीर की भाषा के सम्बन्ध में हिन्दी के लेखकों तथा विद्वानों ने गम्भीरता से विचर नहीं किया है ।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल[2] ने अपनी पुस्तक "हिन्दी साहित्य का इतिहास" में उद्धृत किया है– "इनकी भाषा सधुक्कड़ी अर्थात् राजस्थानी, पंजाबी मिली खड़ी बोली है, पर रमैनी और सबद में गाने के पद हैं, जिनमें काव्य की ब्रज भाषा और कहीं–कहीं पूरी बोली का ही व्यवहार है।" नागरी–प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित कबीर की भाषा पर पंजाबी का सर्वाधिक प्रभाव है। इसकी भाषा पर विचार करते हुए कबीर ग्रंथावली का सम्पादक अपना मन्तव्य स्पष्ट करते हुए लिखते हैं– यद्यपि उन्होंने (कबीर ने) स्वयं कहा है– "बोली मेरी पूरब की"[1] अर्थात् मेरी बोली पूर्वी है तथापि खड़ी, ब्रज, पंजाबी, राजस्थानी, अरबी आदि अनेक भाषाओं की पुट भी उनकी उक्तियों पर चढ़ा हुआ है। पूर्वी से उनका क्या तात्पर्य है यह नहीं कह सकते । उनक बनारस निवास पूर्वी से अवधी का अर्थ लेने के पक्ष में है परन्तु उनकी रचना में बिहारी की पर्याप्त मेल है, यहां तक की मृत्यु के समयय उन्होंने जो पद कहा है उसमें मैथिली का भी खूब संसर्ग दिखायी देता है।

इस पंचमेल खिचड़ी का कारण यह है कि उन्होंने दूर–दूर के सन्तों का सत्संग किया था जिससे स्वाभाविक है उस पर भिन्न–भिन्न प्रान्तों की बोलियों का प्रभाव पड़ा । पूर्वी शब्द से कबीर ग्रन्थावली के सम्पादकों ने तो स्पष्ट रूप से अवधी का अर्थ लिया है क्योंकि उनके अनुसार कबीर का बनारस निवास

---

1. कबीर ग्रन्थावली, पृ0 67.
2. पं0 रामचन्द्र शुक्ल "हिन्दी साहित्य का इतिहास" संशोधित और प्रवर्द्धित संस्करण, पृ0 98.

इसी ओर इंगित कर रहा है। यद्यपि पूर्वी शब्द से कबीर का क्या तात्पर्य था, यह कहना कठिन है किन्तु मध्य युग में इसका अर्थ अवध, बनारस तथा बिहार था।

यद्यपि प्राचीन काल से बनारस का सांस्कृतिक सम्बन्ध मध्यदेश से ही रहा है तथापि उसकी भाषा तो स्पष्ट रूप से मागधी की पुत्री है। यह बोली बनारस के पश्चिम मिर्जामुराद थाने से दो–तीन मील और आगे तमंचाबाद तक बोली जाती है। वस्तुतः यही बोली कबीर की मातृभाषा थी । यह प्रसिद्ध है कि कबीर पढ़े–लिखे न थे, अतएव अपनी मातृभाषा में रचना करना उनके लिए सर्वथा स्वाभाविक था । कबीर के अनेक पद आज भी बनारसी बोली अथवा भोजपुरी में उपलब्ध हैं। नीचे उदाहरण–स्वरूप इनके पद उद्धृत हैं–

तोर हीरा हिराइल बा किचड़े में [1]
कोई ढूढ़ै पूरब कोई ढूढ़ै पच्छिस, कोई ढूँढ़ै पानी पथारे में ।।1।।
सुर नर मुनि अरू पीर औलिया, सब भूलल बाड़े नखरे में ।।2।।
दास कबीर ये हीरा को परखै, बाँधि लिहलैं जतन से अचरे में।।3।।

ऊपर के पद वेलवेडियर प्रेस से प्रकाशित कबीर साहब की शब्दावली से लिये गये हैं। इन पदों की भाषा भोजपुरी है, यद्यपि इनमें कहीं–कहीं अवधी की भी पुट है किन्तु जैसा कि ऊपर कहा गया है : कबीर ग्रन्थावली की भाषा पर पंजाबी तथा राजस्थानी का प्रभाव है । अब प्रश्न यह उठता है कि ऐसा क्यों हुआ ? इस सम्बन्ध में "ग्रन्थावली" के विद्वान सम्पादक का अनुमान है कि चूँकि कबीर प्रयत्नशील व्यक्ति थे, इसलिए जिस प्रान्त में वे जाते थे, वहां की भाषा को अपनाकर उसमें पद रचना करने लगते थे ।

---

1. कबीर साहेब की शब्दावली, दूसरा भाग, पृ0 40, शब्द 28.

वस्तुतः यह कोरी कल्पना ही प्रतीत होती है। सच बात तो यह है कि कबीर की भाषा की भी ठीक वही दशा हुई है, जो आज से दो सहस्र पूर्व बुद्ध की भाषा की हुई थी । बुद्ध वचन की भाषा अर्थात् पालि को हीनयान-सम्प्रदाय के दक्षिणी बौद्ध मागधी मानते हैं । कतिपय विद्वानों के अनुसार बुद्ध की भाषा अर्द्धमागधी थी, किन्तु पालि भी मध्यदेश की ही भाषा थी ।

प्रसिद्ध फ्रेंच विद्वान सिल्वो लेवी तथा जर्मन विद्वान हेनरिख लूडर्स ने अपने लेखों में यह स्पष्ट रूप से दिखलाया है कि आधुनिक पालि में मागधी के अनेक शब्द मिलते हैं। इससे यह सहज ही सिद्ध हो जाता है कि बुद्ध वचन की भाषा पहले मागधी ही थी किन्त बाद में वह पालि के साँचे में ढाली गई। एक बात और है, मागधी में पालि में यह अनुवाद-कार्य केवल किंचित परिवर्तन से ही सम्भव था । उदाहरण-स्वरूप "सुत्तनिपात" के "धनि यसुत्त" की निम्नलिखित दो पंक्तियों में यह इस प्रकार है :-

पक्कोरनो युद्ध खीरो हमस्सि,[1]
अनुतीरे महिपा समान बासो ।
हन्ना कुटि उत्तहितो मिनि,
अथ चे पथ यसी पवस्व देव ।

इसका मागधी रूप इस प्रकार होगा :-
पक्कोदने दुद्ध खीले हमस्सि,
अनुतीरे भहिया समान वाशे ।

ऊपर के उदाहरणों से यह स्पष्ट हो जाता है कि किस प्रकार मागधी को पालि में सहज ही में परिवर्तित किया जा सकता है। कबीर की भाषा की

---

1. "सुत्तनिपाल" के धनियसुत्त पंक्तियां ।

भी यही दशा हुई है। वास्तव में कबीर की मातृभाषा बनारसी बोली थी, जो भोजपुरी का ही एक रूप है । प्राचीन काल में आज ही की भांति इस बोली की कोई साहित्यिक महत्व न था । अतएव जब कबीर की प्रसिद्धि हुई तो उनके पदों का यहां की साहित्यिक भाषाओं में रूपान्तर आवश्यक था । बहुत सम्भव है कि अवधी में यह कार्य कबीर ने स्वयं किया हो, क्योंकि अवधी भोजपुरी की सीमा की भाषा है, किन्तु ब्रजभाषा, राजस्थानी तथा पंजाबी आदि में तो कबीर की मूलवाणी को उन प्रान्तों के उनके अन्य शिष्यों ने ही बदली होगी। नीचे के प्रमाणों से मेरे इस बात की पुष्टि हो जाती है। यहां जो उदाहरण दिये जा रहे है, सभी नागरी प्रचारणी सभा द्वारा सम्पादित कबरी–ग्रन्थावली से ही किये गये हैं। यद्यपि इस संस्करण पर यहाँ की बोलियों तथा पंजाबी का अत्यधिक प्रभाव है फिर भी छन्द के कारण भोजपुरी के संज्ञा शब्द ही नहीं, अपितु कई क्रिया–पद भी अपनेमूल रूप में ही बचे रह गये हैं। ये शब्द पुकार–पुकार कर कह रहें हैं कि कबीर की मूल वाणी का क्या रूप था।

(क) अवधी में संज्ञापदों के तीन रूप मिलते हैं–

1. लघु 2. गुरू 3. अनावश्यक, जैसे–घोड़ा, घोड़वा।

भोजपुरी में तीसरा रूप नहीं मिलता, आरम्भ के दो ही रूप मिलते हैं। बोलचाल की भोजपुरी में प्रायः गुरू रूप ही प्रयुक्त होता है ।

(ख) भोजपुरी–क्रियाओं के भूतकाल में अल–अलें आदि प्रत्यय लगते हैं इस संस्करण के अनेक पदों में भी ये रूप मिलते हैं–जैसे–

1. जुलहे तनि बुनि पार न पावल [1] (पृ0 104)

2. त्रिगुण रहित फल रामि हम राखल[1]। (पृ0 104)

---

1. कबीर ग्रन्थावली, सम्पादित नागरी प्रचारिणी सभा, पृ0 104.

3. ना हम जीवत न मूँ वाले ।[1](पृ0 108)

चहुँ दिसि गगन रहाइले ।[2]

आनन्द मूल सदा पुरूषोत्तम,

घर विनसै मगन न जाइले ।

(ग) भोजपुरी–क्रियाओं के भविष्यतकाल के अन्य पुरूष एकवचन में इहें प्रत्यय लगता है, जो वस्तुतः संस्कृत–ष्यति, पालि–स्सइ का परिवर्तित रूप है। जैसे–करिष्यति → करिस्सइ → करिहई → करिहे । जैसे–

1. हरि मरिहैं तो हम हूँ मरिहैं (मरिहे ?)[3] (पृ0 102)

2. ॲन्द्री स्वादि विषै रस बार है,[4]

नरक पड़े पुनि राम न कहिहैं । (पृ0 134)

ऊपर के क्रिया–पद के "पावल", "राखल–, "मूवले", "परलै", "रहाइल", "जाइल" एवं भरिहैं, बहिहैं आदि रूप इस बात को स्पष्ट रूप से घोषित करते हैं कि कबीर की मूलवाणी का बहुत–कुछ अंश उनकी मातृभाषा बनारसी बोली में ही लिखा गया था ।

" धरमदास "

कबीर की परम्परा में ही उत्पन्न होने वाले धरमदास कबीर की ही भाँति एक सन्त कवि थे। इनके कतिपय पद भोजपुरी में उपलब्ध हैं। इनके जीवन के सम्बन्ध निश्चित रूप से कुछ भी ज्ञात नहीं है किन्तु कहा जाता है कि ये कबीर के शिष्य थे और उनकी मृत्यु के पन्द्रह वर्ष बाद तक जीवित रहे।

1, 2, 3, 4. वही पृष्ठ 108, 268, 102, 134.

कबीर ने कई पद धरमदास को सम्बोधित करते हुए लिखे हैं। इससे भी इन दोनों सन्तों का सम्बन्ध प्रमाणित होता है। कबीरदास के ग्रन्थों के साथ–साथ धरमदास जी की शब्दावली भी वेलवेडियर प्रिण्टिंग प्रेस, प्रयाग से प्रकाशित हुई। इनकी कविता का उदाहरण निम्नलिखित है –

सेमर है संसार, भुवा उधराइल हो । [1]
सुन्दर भक्ति अनुप, चले पहिताइल हो ।।1।।

नदी बहै अगम अपार, पार कस पाइब हो ।
सतगुरू बैठे मुख मोरि, काहि गोह राइब हो ।।2।।

सन्त नाम गुल गाइब, सत ना डोलाइब हो ।
कहे कबीर धर्मदास, अमर घर पाइब हो ।।3।।

कहँवा से जिव आइ, कहँवाँ समाइल हो ।
कहँवा कइल मुकाम, कहाँ कपताइल हो ।।4।।

" शिव नारायण "

सन्त परम्परा के कवि का जन्म उत्तर प्रदेश के गाजीपुर जिले के चन्द्रवार नामक गांव में हुआ था। इन्होंने अनेक ग्रन्थों की रचना की जो आज उपलब्ध हैं। इनके ग्रन्थों में प्रायः दोहा और चौपाई छन्दों का प्रयोग हुआ है। ये वही सुप्रसिद्ध छन्द हैं जिनकी मलिक मुहम्मद जायसी ने "पदमावत" में तथा गोस्वामी तुलसीदास ने "रामचरित मानस" में प्रयोग किया है। इन्होंने प्रधान रूप से पूर्वी अवधी का ही अपने ग्रन्थों में प्रयोग किया है। किन्तु जहाँ इन्होंने "जातसार" (जाते के गीत) और "छातो" (चैत में गाने के गीत) लिखे हैं, वहां भोजपुरी भाषा

---

1. धरनी धरमदास जी की शब्दावली–प्रकाशित वेलवेडियर प्रिंटिंग प्रेस प्रयाग, पृ0 45, शब्द 12

स्वाभाविक रीति से आ गयी है। इनकी कविता का एक उदाहरण नीचे दिया जाता है। सन्त कवियों ने परमात्मा को प्रीतम के रूप में देखा है और अत्यन्त रहस्यपूर्ण ढंग से उसके विरह का चित्रण भी किया है–

शिवनारायण का पद इस प्रकार है–

चलहु सखी खोजि लाउ निज सँइयाँ ।
पिया रहले अभी साथ में, हे, छोड़ि गइले कवन ढँइयां।
बेला से पूछों, चमेली से पूछों, पूछों मैं बन भटकोइयां ।
ताल से पूछों, तलैया से पूछों, पूछों मैं पोखरा कुंइयाँ ।
'शिवनारायण' सखि पिया नहि बेते, हरि लेले मन खदुरइयाँ।

" धरनीदास "

सन्त कवियों में धरनीदास का नाम प्रसिद्ध है। ये बिहार प्रान्त के सारन जिले के माँझी नामक गांव के निवासी थे। ये स्वभाव से ही साधु थे और भगवत भजन में ही अपना अधिकांश समय व्यतीत करते थे । ये अपने गांव के पास के जमींदार के यहां मुन्शी का काम करते थे। विरक्ति होने पर इन्होंने अपनी नौकरी छोड़ दी । इन्होंने अपने "प्रेम–प्रगास" नामक ग्रन्थ में सन्यास लेने की तिथि सन् 1656 ई0 (सं0 1713) दी है :

सम्वत् सत्रह सो चलि गयऊ ।[1]
तेरह अधिक ताहि पर भयऊ ।।
साहजहां होदी दुनियाई ।
पसरी औरंगजेब दुहाई ।।
सोच विचारि आतमा जागी ।
धरती धरेऊ भेस बैरागी ।।

---

1. "प्रेम प्रगास", धरनीदास, प्रकाशित छपरा से ।

इनके दो ग्रन्थ हस्तलिखित रूप में उपलब्ध हैं–

1. शब्द–प्रगास, 2. प्रेम–प्रगास ।

ये दोनों ग्रन्थ माँझी के पुस्तकालय में सुरक्षित हैं। प्रेम–प्रगास का प्रकाशन छपरा से हुआ था ।

माँझी वाली हस्तलिखित प्रति की पुष्पिका को देखने से विदित होता है कि यह 21 भादों, सन् 1281 फसली (सन् 1873 ई0) में लिखी गई थी। इसे माँझी के महन्त रामदास ने वहीं की निवासिनी जानकीदासी उर्फ वर्ताकुअरि के लिए लिखा था । इसकी भाषा अवधी मिश्रित भोजपुरी है। इसमें कहीं–कहीं बँगला के 'पयार' छन्द का भी प्रयोग हुआ है।

इनका एक पद उद्धृत किया जा रहा है–

धरनीदास कृत "प्रेम–प्रगास" से –

कि मोरे देसवा सखी मोरे देसवा ।[1]

एक अचर्ज बात मोरे देस ।।1।।

तर के उपर थैला, उपर के हेठ ।

जेठ लहुर होला, लहुरा से जेठ ।।2।।

आगु के पाछु होला, पाछु होला आगु ।

जागल सुतैला, सुतल उठि जागु ।।3।।

" लक्ष्मी सखी "

इनका पूरा नाम बाबा लक्ष्मीदास था, किन्तु लक्ष्मी सखी के नाम से ये बिहार में अधिक प्रसिद्ध हैं। ये भोजपुरी के प्रतिभा सम्पन्न कवि थे। इनका

---

1. प्रेम प्रगास, धरनीदास प्रकाशित छपरा से ।

जन्म बिहार प्रान्त के सारन जिले के अमनौर नामक ग्राम में हुआ था। इनका जन्मकाल उन्नसवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध है । ये सखी सम्प्रदाय के अनुयायी थे तथा इनके पिता का नाम मुन्शी जगमोहनदास था । कुछ विवरणों के अनुसार ये कायस्थ कुल में उत्पन्न हुए थे । इन्होंने जीवन के प्रारम्भ में ही संसार से नाता तोड़कर भगवान से सम्बन्ध जोड़ लिया था । इन्होंने अपने गांव अमनौर से थोड़ी दूर हटकर तरेआ नामक गाँव में एक आश्रम बनाया था । अपने जीवन के अन्तिम दिनों में ये भजन गा कर अपना समय बिताया करते थे । इनके निम्नलिखित चार ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं–

1. अमर सीढ़ी
2. अमर कहानी
3. अमर विलास
4. अमर फराश ।

इनका प्रधान ग्रन्थ अमर सीढ़ी है। इसमें भगवन–भक्ति विषयक पद हैं। कबीर की भांति ही इनके पदों एवं भजनों में कहीं योग–साधना का उल्लेख मिलता है और कहीं रहस्यवाद की झांकी मिलती है। अमर सीढ़ी से इनका पद यहां उद्धृत किया जा रहा है–

सखी तोरे पियवा देइ केइ एगा पतिया,[1]
बारहु दियवा जुड़ाइ लेहु हियवा ।
समुझि समुझि कै बतिया ।।1।।

सखी सम्प्रदाय में माधुर्य–भव की उपासना प्रचलित है। इसमें परमात्मा को पति और पत्नी मानकर भक्ति की जाती है। ऊपर के पद में इसी प्रेम–पद्धति का संकेत है ।

---

1. लक्ष्मी सखी, अमर सीढी, प्रकाशित छपरा।

लक्ष्मी सखी का दूसरा ग्रन्थ अमर कहानी है। इसमें भी भक्ति-विषयक पद हैं । झूमर, विवाह, जारी, कजली- इनके छोटे ग्रन्थ हैं। इनके शिष्य कामता सखी ने "छुहा दोहा" नामक ग्रन्थ लिखा है। इन सभी ग्रन्थों की प्रकाशन इनके शिष्य श्री महेश प्रसाद वर्मा छपरा ले किया है। इनकी कविता नीचे उद्धृत है-

मनै मनै करीले गुनावनि हो पिया परम के ढोर [1]
पाहनो पसीजि पसीजिके हो वहि चल वहि लोर ।।1।।

आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का अध्ययन आज से 60 वर्ष पूर्व बीम्स और भण्डारकर के अनुसंधानों के परिणामस्वरूप प्रारम्भ हुआ था। इस अध्ययन का सूत्रपात संस्कृत तथा प्राकृत के अध्ययन से हुआ था। भोजपुरी की वैज्ञानिक अध्ययन तो सर्वप्रथम श्री बीम्स ने ही प्रारम्भ किया था। इस सम्बन्ध में इनकी 'नोट्स आन द भोजपुरी डायलेक्ट्स आफ हिन्दी स्पोकेन इन वेस्टर्न बिहार शीर्षक निबन्ध "रायल एशियाटिक सोसाइटी" की पत्रिका, भाग 3, पृ0 483 से 508 में सन् 1868 ई0 में प्रकाशित हुआ था । यह निबन्ध रॉयल एशियाटिक सोसायटी के समक्ष 17 फरवरी 1867 ई0 में पढ़ा गया था ।

डा0 जार्ज ए0 ग्रियर्सन ने "रॉयल एशियाटिक सोसाइटी" पत्रिका में कतिपय बिहारी लोकगीत शीर्षक लेख प्रकाशित किया था। इन गीतों की संकलन बिहार प्रान्त के आरा, पटना आदि जिलों में किया गया है। इसमें प्रधानतया भोजपुरी लोकगीत ही आये हैं। इस लेख के प्रारम्भ में विद्वान लेखक ने बिहार की तीन प्रधान बोलियों- मगही, मैथिली एवं भोजपुरी - का परिचय दिया है। तत्पश्चात् सोहर, जँतासार, झूमर आदि गीत लिये गये हैं।

---

1. कामता सखी, "दुहा दोहा" प्रकाशक महेश शर्मा, छपरा से।

ग्रियर्सन का दूसरा लेख इसी पत्रिका में "कतिपय भोजपुरी लोकगीत" शीर्षक के अन्तर्गत प्रकाशित हुआ है ।

डा0 ग्रियर्सन ने बंगाल के एशियाटिक सोसाइटी की पत्रिका में भोजपुरी प्रान्त में सर्वाधिक प्रचलित विजयमल शीर्षक गीत नं0 3 प्रकाशित किया है। विजय मल" भोजपुरी का महाकाव्य है। इसकी ग्रियर्सन ने शाहाबाद जिले में संग्रह किया थ । "विजय मल" का यह सबसे अधिक प्रामाणिक संस्करण है। हाल ही में कलकत्ता के "दूधनाथ" प्रेस से "कुँअर विजयी' नामक पुस्तक प्रकाशित हुई है।

डा0 ग्रियर्सन ने इण्डियन ऐण्टीक्वेरी नामक बम्बई से प्रकाशित होने वाली शोध पत्रिका में "आल्हा के विवाह गीत" को प्रकाशित किया है। भोजपुरी प्रदेश में आल्हा के गीत अत्यधिक प्रचलित हैं। विद्वान लेखक ने इस गीत—संग्रह को प्रकाशित करके प्रशंसनीय कार्य किया है। इसमें केवल आल्हा के विवाह का वर्णन है ।

लन्दन की प्राच्य विद्या परिषद की पत्रिका में डा0 ग्रियर्सन ने "उत्तरी भारत की लोक साहित्य" शीर्षक लेख प्रकाशित किया है, जिसमें भोजपुरी भाषा के भी अनेक गीत सम्मिलित हैं। इस लेख में विद्वान लेखक ने उत्तरी भारत में प्रचलित तुलसीदास जी की "रामचरित मानस", बिहारी की "सतसई", सूर के पद और विद्यापति की "पदावली" का उदाहरण देते हुए आल्हा के सुप्रसिद्ध गीत का कुछ अंश उद्धृत है। ग्रियर्सन ने जर्मन भाषा की एक सुप्रसिद्ध पत्रिका में "नायकी बनजरवा" शीर्षक एक लेख लिखा है, जिसमें आपने नायकी नामक किसी बनजारे या सौदागर के गीत की संग्रह किया है। यह शाहाबाद जिले में संग्रह किया गया है।

ड्रा क्रेजर एक अंग्रेज सिविलियन थे तथा गोरखपुर जिले में मजिस्ट्रेट पद पर नियुक्त थे । इन्होंने "बंगाल की एशियाटिक सोसायटी" की पत्रिका में गोरखपुर जिले में प्राप्त भोजपुरी गीतों का संग्रह प्रकाशित किया है। इन गीतों की अंग्रेजी अनुवाद क्रेजर ने स्वयं प्रस्तुत किया है। इनका सम्पादन ग्रियर्सन ने किया है। ग्रियर्सन ने अपनी "हैप्पगियों" में भोजपुरी की विशेषताओं पर प्रचुर प्रकाश डाला है ।

जे0 बीम्स भी एक सिविलियन थे तथा आरम्भ में सारन जिले के डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट थे । इन्होंने भोजपुरी के सम्बन्ध में सर्वप्रथम एक लेख लिखा था जिसका उल्लेख अन्यत्र हो चुका है ।

ए0जी0 शिरेफ भी अंग्रेज सिविलियन थे तथा कुछ काल तक जौनपुर जिले के डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट भी थे। इन्होंने हिन्दी लोकगीत नामक पुस्तक सम्पादित किया है जिसमें भोजपुरी के कई गीतों का संग्रह है।

पं0 राम नरेश त्रिपाठी ने भी कविता–कौमुदी के भाग–5 में ग्राम–गीतों का संकलन किया है। इस पुस्तक में सोहर, जनेऊ, विवाह, जाँत, सावन, निरवाही, हिंडाला, कोल्हू, मेला और बारहमासा आदि गीतों का संग्रह किया है।

सोहर भी पं0 राम नरेश त्रिपाठी द्वारा संकलित और प्रकाशित की गयी है। यह पुत्र जन्म के अवसर पर गाये जने वाले गीतों–सोहर की सुन्दर संग्रह है ।

हमारा ग्राम साहित्य के भी संग्रहकर्ता और सम्पादक पं0 राम नरेश त्रिपाठी ही हैं। देहाती कहावतों, मुहावरों, कहानियों तथा जातीय गीतों एवं नृत्यों पर इस पुस्तक में प्रकाश डाला गया है। इस संग्रह में विविध संस्कारों के साथ

ही साथ विभिन्न जातियों द्वारा गाये जाने वाले गीतों का भी संकलन है ।

भोजपुरी ग्राम-गीत (प्रथम भाग)

इस ग्रन्थ का संग्रह और सम्पादन पं० कृष्णदेव उपाध्याय, एम०ए०, डी०फिल ने किया है। इसमें बलिया जिले के गीतों का ही संग्रह किया गया है। इस संग्रह में कुल 269 गीत हैं। ये गीत संस्कार और ऋतु–क्रम से निम्नलिखति 15 भागों में विभक्त हैं– सोहर, खेलवना, जनेऊ, विवाह, वैवाहिक परिहास, गवना जाँत, देवी माता, शीतला माता, झूमर, बारहमासा, कजली, चैता, बिरहा, और भजन ।

भोजपुरी ग्राम-गीत (द्वितीय भाग)

इस पुस्तक के भी सम्पादक और संग्रहकर्ता पं० कृष्णदेव उपाध्याय, एम०ए०, पी.एच.डी. ही हैं। इसमें 25 प्रकार के भोजपुरी गीतों का संग्रह किया गया है। इनकी कुल संख्या 430 है। इसमें निम्नलिखित प्रकार के गीतों का संग्रह हुआ है– सोहर, जोग, सेहरा, विवाह, बहुरा, पिंडिया, गोधन, नाग पंचमी, जँतसार, कजली, बारहमासी, होली, डफ, चैता, सोहनी, रोपनी, बिरहा, कंहार, गोंड, पचरा, निरगुन, देशभक्ति, पूरबी, पराती और भजन ।

भोजपुरी लोकगीत के व रूपरस के संग्रहकर्ता और सम्पादक कुमार दुर्गा शंकर प्रसाद सिंह है। इनमें निम्नलिखित 15 प्रकार के गीतों का संग्रह है– सोहर, जँतसार, झूमल, हँरूआ, भजन, बारहमासा, अलचारी, खेलवना, विवाह, पूरबी, कजरी, रोपनी और निराई, हिंडोले, देवीजी तथा मार्ग चलते समय के गीत ।

भोजपुरी ग्राम–गीत के संग्रहकर्ता और सम्पादक श्री डब्लू0जी0 आर्चर, आई0सी0एस0 तथा श्री संकठा प्रसाद हैं। भोजपुरी ग्राम गीतों का प्रकाशन आर्चर ने "बिहार–उड़ीसा–रिसर्च सोसायटी" पटना की पत्रिका के विभिन्न अंकों में किया था। इनमें गीतों की कुल संख्या 366 है। ये गीत बिहार प्रान्त के शाहाबाद जिले के कायस्थ परिवार से संग्रह किये गये हैं। इनका संग्रह–काल 1939–41 ई0 है। इस पुस्तक में 25 प्रकार के गीतों का संग्रह किया गया है, जिनके नाम इस प्रकार हैं– सगुन, तिलक, शिव–विवाह, प्रातकातन, हलदी, सेहला, जोग, टोना, विवाह–मंगल, सोहाग, परीछन, कोहवर, जेवनार, आवतैनी, झूमर, तापा, सोहर, मुण्डन, चैता, माता के गीत, कजली, बरसाती, जँतसार, रोपनी और सोहनी के गीत ।

"धरती गाती है" पुस्तक के लेखक श्री देवेन्द्र सत्यार्थी हैं। लोक गीतों के क्षेत्र में सत्यार्थी जी ने बहुत कार्य किया है ।

"बेला फूले आधी रात" नामक पुस्तक के लेखक भी श्री देवेन्द्र सत्यार्थी ही है। इसमें भी विभिन्न भाषाओं के गीतों का संग्रह किया गया है।

"धरती के गीत" संग्रह में खड़ी बोली, अवधी, ब्रजभाषा तथा भोजपुरी के गीतों का संग्रह किया गया है। ये गीत किसानों की समस्या से सम्बन्ध रखते हैं। पुस्तक की प्रकाशन "बम्बई कम्युनिस्ट पार्टी" द्वारा हुआ है।

भोजपुरी के आधुनिक कवि

बिसराम :

भोजपुरी के वर्तमान कवियों में बिसराम का स्थान ऊँचा है। अनपढ़

होने पर भी इस जन कवि ने ऐसे सरस तथा भावपूर्ण बिरहों की रचना की है कि उन्हें पढ़कर हृदय सहज भाव से रस-प्लावित हो जाता है ।

बिसराम का जन्म आजमगढ़ शहर से कुछ दूर हटकर सिरामपुर नामक गांव में एक क्षत्रिय परिवार में हुआ था । यह गांव टोंस (तमसा) नदी के किनारे स्थित है। बिसराम के माता-पिता ने उसे स्कूल में पढ़ाने का प्रयत्न किया किन्तु उसका मन पाठशाला में न लगा वह प्राकृति की विशाल पाठशाला का छात्र बन गया। युवा होने पर कवि का विवाह हुआ, वह पारिवारिक सुख अधिक दिनों तक न भोग सका । कुछ दिनों के पश्चात ही उसकी प्रियतमा का देहावसान हो गया । इस विरह-वेदना की अभिव्यक्ति उन्होंने भोजपुरी बिरहों में की है। पत्नी का शव शमशान जाते देखकर कवि की जो मनोदशा हुई थी उसका वर्णन इस प्रकार है-

आजु मोरी धरनी निकरली मोर घर से,
मोरा फाटि गइले आल्हर करेज ।
"राम नाम सत" ही सुनि मैं गइलो बउराई
कवन रुसवा गइले रानी के होखाई
सुखि गइले आँसू नाही खुलेले जबनियाँ,
करम के निकारो मैं त दु:खिया वचनियाँ।

तेग अली :

ये बनारस के रहने वाले मुसलमान थे। इनकी एकमात्र रचना "बदमाश-दर्पण" है, जो बनारसी बोली में लिखा गया है। ये बड़े ही मस्त जीव थे। काशी

---

1. डा० उदयनाराया तिवारी, भोजपुरी भाषा और साहित्य, पृ० 268.

और आशु कविता करते हुए लोगों का मनोरंजन करते थे। तेग अली की कविता में मुहावरों की सफाई है, उदाहरण–

> गौं चूमि लेइला, केहु सुन्नर जे पाइला, [1]
> हम तउ हईं जे ओल पर तरूआरि उठाइला।
> हम उनसे पूछली जे आँखि में सुरमा काहे बदे लगाइला,
> तऊ हँस के कहलन, छूरि पत्थर से चलाइला ।

बाबू रामकृष्ण शर्मा :

ये काशी के ही निवासी थे । सरसता तथा मधुरता इनके जीवन में कूट–कूटकर भरी थी । यही कारण है कि इनकी कविता में भी ये गुण विशेष रूप से पाये जाते हैं। इन्होंने बिरहा, नायिका भेद नामक पुस्तक लिखी है, जो अल्पकाय होने पर भी साहित्यिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। उदाहरण–

> भरली गगरिया उठौली जैसे गोइयाँ, [1]
> जैसे बिछलत गोड़ बा हमार ।
> जौ पै बलबिरवा न बहियाँ धरत,
> तौ पै बहितों जमुनवाँ के धार ।

पं0 दूधनाथ उपाध्याय :

इनका जन्म बलिया जिले के छया छपरा नामक गांव में हुआ था। ये बलिया डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के अन्तर्गत मिडिल स्कूल के हेडमास्टर थे। ये भोजपुरी के प्रतिभाशाली कवि थे । इनकी वाणी में ओज था और इनकी कविता का भोजपुरी

---

1. वही पृ0 269.

पाठकों पर अत्यधिक प्रभाव पड़ा। पिछली शताब्दी के अन्तिम चरण में उत्तर प्रदेश के भोजपुरी भाषा-भाषी पूर्वी जिलों में गो-रक्षा को लेकर एक प्रबल आन्दोलन का सूत्रपात हुआ था । उस समय विशेषतः बलिया तथा आजमगढ़ इन दो जिलों में अनेक गो-रक्षकी सभाओं की स्थापना हुई थी । उपाध्याय जी भी इस आन्दोलन प्रवर्तकों में से थे । आपने गो-विलाप सम्बन्धी अपने पदों की रचना भोजपुरी में की थी । उस समय की सरकार ने इन पदों को जप्त कर लिया था और आन्दोलन करने वाले को बड़ी सजा दी थी । पण्डितजी के ये छन्द आज अनुपलब्ध हैं। कहा जाता है कि पण्डित जी द्वारा रचित पद इतने उत्तेजनापूर्ण थे कि वे कायरों के हृदय में भी वीर रस का सञ्चार कर देते थे ।

इन्होंने प्रथम महायुद्ध के अवसर पर सन् 1914 ई0 में "भारती का गीत" नामक एक छोटी सी पुस्तिका लिखी थी जो आज भी उपलब्ध है। नीचे पद उद्धृत हैं-

हमनी की सब केहू बाम्हन क्षतिरि हो के,
रन में चलबि नाही तनीको डेराइबि ।
अब लें चूकली बड़ बाउर कइलिहों जा,
अब पुजरवनि के ना नइयाँ हँसाइबि ।
जरमन छुहुट के नाहत कईला बिना,
अब ना मानवि बलु भरि मिटि जाइबि ।
सगरे मुलुक लकारि के चलबि अब
दूधनाथ रत्न से ना पयर हटाइबि ।

उपाध्याय जी की दूसरी रचना "भूकम्प-पचीसी" है। इसमें बिहार के प्रलयंकारी भूकम्प का बड़ा ही सजीव चित्रण किया गया है।

---

1. वही पृ0 270.

बाबू अम्बिका प्रसाद :

ये बिहार प्रान्त के निवासी थे और आरा में बहुत दिनों तक मुख्तारी करते थे । इनकी कविताओं की अभी तक संग्रह तथा प्रकाशन नहीं हुआ है। नीचे इनके पद उद्धृत हैं :–

कवना गुनहिए चुकलोंए बालम,[1]
तोर नयना रतनार ।

रघुबीर नारायण :[2]

इनका जन्म एक सम्भ्रान्त कायस्थ परिवार में बिहार के अन्तर्गत छपरा शहर में बृहस्पतिवार 20 अक्टूबर, 1884 ई0 को हुआ था। इनके पिता बाबू जयदेव नारायण छपरा में ही वकील थे । इनकी शिक्षा–दीक्षा छपरा में ही हुई थी । इनकी "बटोहिया" शीर्षक कविता भोजपुरी भाषा–भाषी प्रान्तों में अत्यधिक प्रसिद्ध है। इसे यदि भोजपुरी प्रदेश की राष्ट्रपति कहा जाए तो इसमें अत्युक्ति न होगी । इस गीत में अखण्ड भारत का मनोरम चित्र खींचा गया है। इसमें एक ओर भारतीय एकता को अक्षुण्य रखने वाले पर्वतराज हिमालय, गंगा, यमुना आदि के प्राकृतिक दृश्यों का चित्रण है तो दूसरी ओर नानक, कबीर, शंकराचार्य तथा परमहंस रामकृष्ण की अमरवाणी की चर्चा है। कालीदास, जयदेव, विद्यापति तथा सूर एवं तुलसी की अमर कृतियों ने भी भारतीय संस्कृति एवं जीवन को समुन्नत बनाया है। श्री रघुबीर नारायण जी ने "बटोहिया" में इन अमर आत्माओं की ओर इंगित किया है। "बटोहिया" की कतिपय पंक्तियां ये हैं –

सुन्दर सुभूमि भैया भारत के देसवा से,
मोर प्रान बसे हिम खोहरे बटोहिया

---

1. सेवेन ग्रामर्स आफ द डायलेक्टस एण्ड सबडायलेक्ट्स आफ द बिहारी लैंग्वेज, पार्ट 2, भोजपुरी डायलेक्ट, पृ0 138.
2. भोजपुरी पत्रिका, वर्ष 1, अंक 1, पृ0 52–53.

एक द्वार घेरे रामा हिम कोतवलवा से,
तीन द्वार सिन्धु घहरावे रे बटोहिया ।

भिखारी ठाकुर :

भोजपुरी के कवियों में भिखारी ठाकुर का नाम उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिलों और बिहार के पश्चिमी जिलों में प्रसिद्ध है। भिखारी ने नाटक–मण्डली स्थापित कर "बिदेसिया" नाटक की अद्वितीय सफलता के साथ अभिनय कर, इस नाटक का एक सम्प्रदाय स्थापित कर दिया है। इनके नाटक के अनुकरण पर अन्य बिदेशिया नाटक भी तैयार हुए हैं।

यद्यपि भिखारी ठाकुर शिक्षित नहीं हैं किन्तु ये प्रतिभावान व्यक्ति अवश्य हैं। "बिदेसिया" नाटक में परदेसी पति के वियोग में उसकी पत्नी की विरह–वेदना की तीव्र अभिव्यंजना मिलती है– इस नाटक से एक गीत की कतिपय पंक्तियां निम्न हैं –

दिनवा न बीते रामा तोरी इन्तजरियमें,
रतिया नयनवा ना नींद रे, बिदेसिया
घरी राति गइली राम पिछली पहरवा से,
लहरे करेजवा हमार रे बिदेसिया ।

मनोरञ्जन प्रसाद सिन्हा :

ये प्रिंसिपल मनोरञ्जन के नाम से विख्यात थे और कई वर्षों तक राजेन्द्र कालेज छपरा में प्रिंसिपल रहे । इनका जन्म बिहार प्रान्त के शाहाबाद

1. डा० उदय नारायण तिवारी, भोजपुरी भाषा और साहित्य, पृ० 272.

जिले में डुमरॉव नामक स्थान में एक सम्भ्रान्त कायस्थ परिवार में हुआ था। मनोरञ्जन बाबू प्रयाग के कायस्थ पाठशाला – कालेज तथा हिन्दू विश्वविद्यालय, काशी में अनेक वर्षों तक अंग्रेजी के प्रोफेसर पद पर काम कर चुके थे। इनकी सर्वाधिक प्रसिद्ध रचना "फिरंगिया" है। इसकी रचना इन्होंने सन् 1921 ई0 के "असहयोग आन्दोलन" के तूफानी दिनों में बाबू रघुबीर नारायण जी के "बटोहिया" के वजन पर की थी। नीचे इसकी कुछ पंक्तियां उद्धृत हैं–

सुन्दर सुघर भूमि भारत के रहे रामा ।[1]
आज उहै भइल ससानरे फिरँगिया ।।
अन्न, धन, जन, बल, बुद्धि सब नाश भइल ।
कौनो के ना रहल निशान रे फिरंगिया ।।

राम विचार पाण्डेय :

ये उत्तर प्रदेश के बलिया जिले के निवासी हैं। ये नागपुर विश्वविद्यालय से एम0ए0 हैं। आजकल बलिया में ये वैद्यक करते हैं तथा डाक्टर पाण्डेय के नाम से प्रख्यात हैं । ये आयुर्वेद के अतिरिक्त होम्योपैथिक प्रणाली से भी चिकित्सा करने में दक्ष हैं ।

इनकी काव्य–भाषा बड़ी प्राञ्जल है। यद्यपि इन्होंने ठेठ शब्दों के माध्यम से ही अपने विचारों की अभिव्यक्ति की है, तथापि उसमें काव्य के उपकरण–स्वरूप विधि अलंकार नितान्त स्वाभाविक ढंग से आ गये हैं। इनकी भोजपुरी कविताओं का प्रकाशन "बिनिया–बिछिया" नाम से हुआ है। इसमें कुल 12 कविताओं का संग्रह है। पाण्डेय जी कुशल नाटककार और अभिनेता भी हैं। उन्होंने कुँवर सिंह नामक एक नाटक भी लिखा है– नीचे इनकी ऊँजोरिया शीर्षक कविता उद्धृत है–

1. डा0 उदय नारायण तिवारी, भोजपुरी भाषा और साहित्य, पृ0 273.

तिसुना जागलि सिरी किसुना के देखे केत,
आधी रतियै खाँ उठि चलली गुजरिया ।
पान का निपर मुँह चमकेला रधिका के,
चमचम चमके ले घरिके चुनरिया ।
चकमक चकमक लहरि उठे ले ओ मे,
मधुरे मधरे डोले कान के मुनरिया ।
गोखुला के लोग ई्तु देखि चिहइले कि,
राति में अमावसा का अगली अँजोरिया ।

प्रसिद्ध नारायण सिंह :

ये बलिया जिले के चीत–बड़ागांव के निवासी हैं। आरम्भ से ही इनकी प्रवृत्ति साहित्यिक रही है। इनकी प्रथम कृति बलिया जिले के कवि और लेखक नामक पुस्तक है, जिसमें इन्होंने अपने जिले के कवियों और लेखकों की कृतियों का बड़ा सुन्दर परिचय दिया है। ये बलिया चकहरी में मुख्तारी कर रहे थे। इन्होंने 1930 तथा 1942 के आन्दोलनों में बाबू प्रसिद्ध नारायण जी ने विशेष भाग लिया था । इन्हें कठोर कारावास का दण्ड भी भुगतना पड़ा। सन् 1942 ई0 के भयानक विद्रोह के पश्चात निरंकुश ब्रिटिश शासन की ओर से बलिया की जनता पर जो अत्याचार हुआ वह भारतीय इतिहास में एक असाधारण घटना है। बाबू प्रसिद्ध नारायण जी ने इसी विषय को अपने काव्य का आधार बनाया।

सन् 1942 में बलिया के विद्रोहियों द्वारा दिये गये वीरतापूर्ण कार्यो का वर्णन करते हुए लिखते हैं–

आइल अगस्त के आन्दोलन,[1]
फरके लागल सबके तन, मन,

---

1. डा0 उदय नारायण तिवारी, भोजपुरी भाषा और साहित्य, पृ0 276.

बिजुली दौड़ल जगाल बलिया,[1]
चलेले मुसलिम, हिनदू, हरिजन,
मचि गइल लड़ाई बस जुझार ।

पं0 महेन्द्र शास्त्री :

भोजपुरी के उन्नायकों और प्रचारकों में पं0 महेन्द्र शास्त्री का स्थान बहुत ऊँचा है। बिहार तथा उत्तर प्रदेश के पूर्वी जिलों में जहां समय-समय पर भोजपुरी सम्मेलन होते हैं, उनमें प्राय: शास्त्री जी की प्रेरणा रहती है। पटना से प्रकाशित होने वाली "भोजपुरी" नामक पत्रिका के ये ही सम्पादक थे । ये भोजपुरी गद्य तथा पद्य के सफल लेखक हैं। इनकी "आज की आवाज" नामक भोजपुरी कविताओं की एक छोटी सी पुस्तक प्रकाशित हुई है, जिसमें सामाजिक विषयों पर सुन्दर तथा सरस कतिवाएँ हैं ।

श्याम बिहारी तिवारी :

ये बिहार प्रान्त के बेतिया जिले के निवासी हैं। ये भोजपुरी में सुन्दर तथा सरस कविताएँ लिखते हैं। इनकी "देहाती-दुलकी" नामक पुस्तक तीन भागों में प्रकाशित हुई है। इनका उपनाम देहाती है और ये इसी नाम से प्रसिद्ध हैं। देहाती-दुलकी भाग 1 में इनकी चौदह चुनी हुई कविताओं का संग्रह है। जिनमें देहाती विषयों को लेकर कविता की गई है ।

इन्होंने पति का भँवरा से रूपक बांधकर उसका कितना सुन्दर उपालम्भ नीचे के पद में किया है-

1. डा0 उदय नारायण तिवारी, भोजपुरी भाषा और साहित्य, पृ0 277.

कइसे मानी उनकर बतिया,[1]
सुखले सूखल बीतल रतिया,
कहां जुड़ाइब आपन छतिया,
छतवर तुरले जाय,
भँवरा रसवा चूसले जाय ।

कविवर चञ्चरीक :

कविवर चञ्चरीक जी भोजपुरी के लब्ध प्रतिष्ठ कवियों में से हैं। ये गोरखपुर जिले के निवासी हैं। इनकी सर्वश्रेष्ठ रचना "ग्राम-गीतांजलि" है। यह गोरखपुर से ही प्रकाशित हुई है ।

ग्राम-गीताञ्जलि में कुल 240 पृष्ठ हैं, जिनमें चञ्चरीक जी ने राष्ट्रीय तथा सामाजिक विषयों को लेकर काव्य-रचना की है - यह पुस्तक दो भागों में विभक्त है-

1. राष्ट्रीय सोपान
2. सामाजिक सोपान

"राष्ट्रीय-सोपान" में इन्होंने राष्ट्रीय तथा देशभक्ति के विषयों को लेकर सोहर, विवाह के गीत, मेला, निसैनी, हिंडोला, जनेऊ, कहरवा आदि के गीत लिखे हैं ।

"सामाजिक सोपान" में इन्होंने आदर्श गारी, शिक्षाप्रद गीत, बेटी-बिदाई के समय के गीत आदि लिखे हैं।

---

1. डा0 उदय नारायण तिवारी, भोजपुरी भाषा और साहित्य, पृ0 277.

"ग्राम–गीताञ्जलि" की भाषा सरस, सरल और मधुर है। राष्ट्र के कर्णधार स्वर्गीय मोतीलाल जी की मृत्यु पर लिखते हैं–

भारत के नैया के डारि मॅंझधरवा में,[1]
असमय चलि गइले मोतीलाल नेहरू ।
कइसे के पार होइहे देसवा के नइयारे,
पतवार रहले मोतीलाल नेहरू ।

बाबू रणधीर लाल श्रीवास्तव :

ये भोजपुरी के उदीयमान कवियों में से हैं। ये बलिया जिले के सोनबरसा नामक गांव के निवासी हैं। आजकल ये बलिया के एल.डी. मेस्टन हाईस्कूल में अध्यापन कार्य करते हैं। इधर ये भोजपुरी में बरवै छन्द में काव्य–रचना करने में संलग्न हैं तथा "बरवै–शतक" नामक काव्य की रचना की है। यह ग्रन्थ अभी तक अप्रकाशित है। इनकी भाषा सरल और सुबोध होती है। इसमें भोजपुरी मुहावरों का सुन्दर प्रयोग होता है– उदाहरण–

पति के वियोग में विरहिणी के नेत्रों से आँसू गिर रहे हैं– इसका सुन्दर चित्रण कवि ने इस रूप में किया है–

बिरह अगिनिया छतिया धधके मोर,[2]
गलि गलि बहेला करेजवा, अँखियन कोर ।

आगे के पद में कवि कहता है कि यह कितने आश्चर्य की बात है कि पानी में पड़ने से आग तो बुझ जाती है, परन्तु आँसुओं के जल से विरहाग्नि और भी धधक उठती है ।

1. चञ्चरीक–ग्राम गीतांजलि।
2. डा0 उदय नारायण तिवारी, भोजपुरी भाषा और साहित्य, पृ0 279.

इ कतहू ना देखनी सुनली भाइ,
विरह अगिनिया धधके ला पनिया पाइ ।

स्वामी जगन्नाथ जी : :

स्वामी जी का जन्म स्थान ग्राम रामपुर पो0 भगवानपुर, थाना–बसन्तपुर जिला छपरा है। इनका जन्म एक सम्भ्रान्त वैश्य परिवार में संवत् 1959 की कृष्ण अमावस्या को हुआ था और गोलोक वास संवत 2002 भाद्र कृष्ण 11 को इनके शिष्य परमहंस श्रीशुकदेवजी ने इनके दो ग्रन्थ श्री सद्गुरू सागर प्रथम तथा द्वितीय भाग प्रकाशित किये हैं। कबीर, दादू, नानक आदि महात्माओं की भांति इन्होंने भी बड़े सरल शब्दों में जनता को उपदेश दिया है। अधिकांश पदों की भाषा सुबोध भोजपुरी है। ये पद आध्यात्मिक भावना से ओत–प्रोत हैं–नीचे कतिपय पद उत्द्धृत हैं–

भला रे समइया राम लागल बाटे बदरी,[1]
माघ महीना सुदी तिथि हउए पंचमी ।
हमहुँ पहुँच अइली सतगुरूजी का नगरी,
धरम के भटकी छोड़ मन मूरख,
नाहीं, तौं जन्हु धके तोहरा के रगरी।
हित कुटुम कोई काम ना अइहे,
धन दौलत तोर छूटी जाई सगरी ।
दीन दयाल सतगुरूजी हमारो
अधम जगन्नाथ के लखा देली डगरी ।

अशान्त :

भोजपुरी के कवियों में अशान्त भी एक हैं। इनकी भाषा प्राञ्जल और भाव उच्चकोटि के होते हैं। भोजपुरी में लिखित इनके गीतों को हम इतने

1. डा0 उदय नारायण तिवारी, भोजपुरी भाषा और साहित्य, पृ0 280.

सुन्दर ढंग से गाते हैं कि स्वाभाविक भाव से उसे सुनकर लोग आकर्षित हो जाते हैं। नीचे इनकी "ऋतु–गीत" उद्धृत है–

कुहुकि कुहिक कुहुकावे कोइलिया,
कुहुकि कुहुकि कुहुकावे ।
पतझर आइल उजड़ल बगिया,
मधु ऋतु में तुसियाइल फुनुगिया,
इन हरियर हरियर कलइन में,
सूतल सनेहिया जगावे कोइलिया ।

– कुहुकि0

अन्य पुस्तकें :

जैसा कि यह ज्ञात हो चुका है कि भोजपुरी एक जीवित भाषा है। अतएव भोजपुरी प्रदेश से बहुत छोटी–छोटी पुस्तकें प्रकाशित होती रहती हैं। भोजपुरी प्रदेश में सोनपुर में हरिहर क्षेत्र तथा बलिया में दद्री के मेले उत्तर भारत में प्रसिद्ध हैं। इन मेलों में स्त्रियों को लक्ष्य करके "मेला घुमनी", "गंगा–नहवनी" आदि पुस्तकें लिखी गयी हैं।

भोजपुरी क्षेत्र के बाहर भोजपुरियों का सबसे अधिक केन्द्रीकरण कलकत्ता में हुआ है। कलकत्ता में भोजपुरी क्षेत्रों में प्रचलित "लोरिकी", "सोभनयका" और "सोरठी" आदि लोक–कथाओं को भी यहां लोग गाते हैं।

बनारस से प्रकाशित पुस्तकें– 1.झरबेलाझरेलिया बहार, 2. मैना की जँतसार, 3. पूरबीपरी, 4. चम्पा–चमेली की बातचीत, 5. गारी–मनोरंजन, 6. बारहमासा, 7. प्यासी सुन्दरी वियोग, 8. सोरह सिंगार, 9. सीता हरण, 10. नन्ही भौजरया, 11. बड़ी गोपाल–गारी, 12. भिखारी नाटक, 13. बापू का हत्याकाण्ड, 14. सोरठी का गीत, 15. सोरठी–ब्रजभार, 16. बिहुला–

गीत, 17. सोभ नयका बंजारा, 18. बनवीर–गीत, 19. सास–पतोह का झगड़ा आदि ।

दूधनाथ प्रेस हावड़ा से जो पुस्तक प्रकाशित हुई हैं, उनमें से अधिकांश के लेखक बिहार प्रान्त के आरा जिले के निवासी बाबू महादेव प्रसाद सिंं है। इनमें कतिपय प्रसिद्ध पुस्तकों के नाम इस प्रकार हैं–

1. लोरिकायन 2. बिहुला–विषहरी 3. बाला–लखन्दर 4. नयकाबंजारा, 5. कुँवर विजयी 6. राजा ढोलन का गीत ।

ये अधिकांश वीरगाथाएं गावों में पायी जाती हैं। इन गाथाओं के कथानक भी लम्बे हैं। इन्हें एकत्र करने की अपेक्षा बाबू महादेव प्रसाद सिंह ने इनके कथानक तथा छन्द को लेकर स्वयं रचना कर डाली है। आज आवश्यकता इस बात की है कि इन भोजपुरी गीतों को गवाकर डिक्तो फोन की सहायता से एकत्र करके इनका सम्पादन किया जाय । इस प्रकर के संस्करण से भारत के लोग–साहित्य की अभिवृद्धि होगी ।

भोजपुरी लोकसाहित्य

भोजपुरी लोकसाहित्य को हम चार भाग में विभक्त कर सकते हैं-

1. लोकगीत
2. लोकगाथा
3. लोककथा
4. प्रकीर्ण साहित्य ।

भोजपुरी लोकगीतों में दो प्रकार हैं। प्रथम संस्कार सम्बन्धी गीत तथा द्वितीय ऋतु सम्बन्धी गीत। इसके अतिरिक्त देवी देवताओं से सम्बन्धित गीत भी हैं। भोजपुरी लोकगीतों के निम्नलिखित प्रकार हैः-

1. **सोहर**- पुत्र जन्म के अवसर पर गसए जाने वाले गीत ।
2. खेलवना - पुत्र जन्म के पश्चात् गाए जाने वाले गीत ।
3. जनेऊ के गीत - यज्ञोपवीत तथा मुन्डन संस्कार के गीत ।
4. विवाह के गीत - इसमें विवाह सम्बन्धी सभी संस्कारों के गीत रहते हैं ।
5. वैवाहिक परिहास के गीत - इसमें परस्पर हास-परिहास तथा गाली देने के गीत रहते हैं।
6. गवना के गीत - द्विरागमन के अवसर पर गाए जाने वाले गीत ।
7. छठी माता के गीत - कार्तिक शुक्ल में सूर्यषष्ठी व्रत के निमित्त गाये जाने वाले गीत ।

8. शीतला माता के गीत– चेचक निकलने पर शीतला माता को प्रसन्न करने के गीत ।

9. बहुरा– भाद्र कृष्ण चतुर्थीको बहुरा के अवसर पर गाये जाने वाले गीत ।

10. कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा को गोधन व्रत मनाया जाता है। गोवर्धनपूजा से सम्बन्धी गीत इसमें गाए जाते हैं ।

11. पिड़िया– गोधन व्रत के दिन कुमारी कन्याएं भाई की मंगल कामना के लिए गीत गाती हैं ।

12. बारह मासा– यह बिरह गीत है। सावन के गीत, चौमासे के गीत तथा झूले के गीत इसी श्रेणी में आते हैं।

13. चैता– बसंत के आगमन के साथ पुरूषों द्वारा गया जाने वाला गीत। इसे घांटो भी कहते हैं ।

14. कजली– वर्षा ऋतु का गीत ।

15. फगुआ– होलिकोत्सव पर गाए जाने वाले गीत।

16. नागपंचमी– नागपूजा से सम्बन्धित गी। वर्षा के गीत भी इसमें सम्मिलित रहते हैं ।

17. जंतसार– ग्राम बंधुओं द्वारा चक्की चलाते समय का गीत ।

18. बिरहा– अहीर लोगों कायह जातीय गीत है। वीर और श्रृंगार से ओत–प्रोत रहता है ।

19. झूमर– यह एक फुटकर गीत है। नवयुवतियाँ समवेत स्वर में गाती हैं।

20. सोहनी के गीत– वर्षा के प्रारम्भ में खेतों में हानिकर पौदों और क्रीड़ों को निकालते समय गाए जाने वाले गीत। इसे स्त्रियां ही विशेष रूप से गाती हैं ।

21. भजन– जीवन के रहस्यात्मक एवं क्षणभंगुरता पर प्रकाश डालने वाले गीत ।

22. विविध गीत–

क) अलचारी– लाचारी अवस्था में गाए जाने वाले गीत। इसमें विरह प्रधान रहता है ।

ख) पूर्वी– यह भी एक विरह गीत है। पूरब देश जाने का प्रसंग वर्णित रहता है ।

कुछ अन्य भी भोजपुरी लोकगीत अनेक अवसरों पर गाए जाते हैं।

भोजपुरी लोकगाथायें–

समस्त भोजपुरी जनपद में प्रधान रूप से नौ लोकगाथाओं का प्रचलन है, ये इस प्रकार हैं–

1. **आल्हा–** मूलतया और प्रधानतया यह बुन्देली लोकगाथा है।
2. **लोरिकी–** अहीर जाति का यह "जातीय काव्य" है।
3. **विजयमल–** मल्ल के क्षत्रियों का युद्ध वर्णन है ।
4. **बाबू कुंअर सिंह–** भोजपुरी वीरता का प्रतिनिधित्व करने वाली अमरगाथा है ।
5. **शोभानयका बनजारा–** यह लोकगाथा व्यापारी जाति से सम्बन्ध रखती है।
6. **सोरठी–** प्रेमियों का मिलन कितना कष्ट–साध्य होता है, इसमें यही चित्रित है ।
7. **बिहुला–** दूसरा नाम "बालालजन्दर" भी है। यह पतिव्रत धर्म की एक अमरगाथा है ।
8. **राजा भरथरी–** राजा भरथरी एवं रानी सामदेई की प्रसिद्ध कथा ही इस लोकगाथा का विषय है। इस गाथा को जोगी लोग ही जाते हैं।
9. **राजा गोपीचन्द–** गोपीचन्द के त्याग की गाथा ।

भोजपुरी के आधुनिक काल के कवि

आधुनिक काल के प्रमुख भोजपुरी कवि इस प्रकार हैं–

1. बाबा बुलाकीदास– यों तो भोजपुरी प्रंदेश में हजारों की संख्या में "चैता" के गीत उपलब्ध होते हैं परन्तु बुलाकीदास के गीतों में जो रमणीयता, सरसता, कोमलता और मधुरता है वह अन्यत्र कहीं नहीं है।

"पिया पिया मति करू पिया के सोहागिनि हो रामा ।
तोर पिया, लोभोले बारिनि, तमोलिया हो रामा ।।

2. बाबू रामकृष्ण वर्मा– बाबू रामकृष्ण वर्मा कविता में अपना उपनाम "बलवीर" लिखा करते थे। इनका एक विरहा इस प्रकार है–

भरली गगरिया उठवले जइसे गोइयाँ,
तइसे बिछवल गोड़वा हमार ।
जो पै 'बलबीरवा' ना बहियाँ धरत,
तो पै बहितीं जमुनवा के धार ।।

3. श्री तेग अली 'तेग'– इनकी एकमात्र रचना 'बदमाश–दर्पण' है। आंखों में सुरमा लगाने के कारण की सफाई–

"हम उनसे पुछली, आँखि में सुरमा काहे बदे लगाइला,
ऊ हँस के कहलन, छुरी पत्थर से चताइला ।।"

4. बाबू अम्बिका प्रसाद– इनकी "भजनावली" नामक पुस्तक प्रकाशित हुई है ।

5. बिसराम ।

6. पं0 दूधनाथ उपाध्याय ।

7. बाबू रघुबीर नारायण ।

8. पं0 महेन्द्र सिंह ।

9. भिखारी ठाकुर ।

10. मनोरंजन प्रसाद सिनहा ।

11. महाराज खड्.गबहादुर मल्ल ।

12. बाबू दुर्गा शंकर प्रसाद सिंह ।

13. बाबू प्रसिद्ध नारायण सिंह ।

14. डा0 राम विचार पांडेय ।

15. आचार्य महेन्द्र शास्त्री ।

16. श्याम बिहारी तिवारी 'देहाती' ।

17. कविवर 'चंचरीक' ।

18. अर्जुन कुमार सिंह "अशान्त" ।

19. महादेव प्रसाद सिंह 'घनश्याम' ।

20. श्री रामेश्वर सिंह 'काश्यप' ।

21. श्री विश्वनाथ प्रसाद "शैदा" ।

22. श्री रामनाथ पाठक 'प्रणयी' ।
23. श्री मोती बी0ए0
24. डा0 मुक्तेश्वर तिवारी 'बेसुध' ।
25. श्री 'राहगीर' ।
26. श्री भोलानाथ 'गहमरी' ।
27. श्री चन्द्रशेखर मिश्र ।
28. श्री जगदीश ओझा 'सुन्दर' ।
29. श्री श्याम सुन्दर ओझा 'मंजुल' ।
30. श्री राधा मोहन 'राधेश' ।
31. श्री सतीश्वर सहाय वर्मा 'सतीश'।
32. श्री विवेकी राय ।
33. श्री राम वृक्ष राय 'विधुर' आदि भोजपुरी के आधुनिक काल के प्रमुख कवि हैं ।

:: नेपाली साहित्य ::

नेपाली भाषा के प्रादुर्भाव और व्यवस्थित विकास के पीछे पृष्ठभूमि के रूप में प्राचीन साहित्यिक परम्परा रही है जो मुख्यतः संस्कृत के माध्यम से व्यक्त होकर फल-फूली । प्राचीन नेपाल का साहित्य संस्कृत भाषा में लिखे गये शिलालेखों और अभिलेखों में मिलता है। लिच्छवी राजाओं के शासनकाल में संस्कृत राजकाज और साहितय दोनों की भाषा रही । पहली से बारहवीं शताब्दी तक संस्कृत का प्रयोग विस्तृत रूप से साहित्य और शिलालेखों में हुआ। लिच्छवी वंश के पूर्व सोम वंश के राज्यकाल में भी भले ही किराती भाषा प्रमुख रही हो, संस्कृत का साहित्य की भाषा के रूप में प्रचलन था । चांगु नारायण मन्दिर में लिच्छवी वंश का सबसे पुराना शिलालेख संस्कृत में है और काव्यात्मक है। जब महायान बौद्ध धर्म का नेपाल में प्रचार हुआ तो बौद्ध साहितय पाली के अलावा संस्कृत में लिखा गया । कर्नाट राज्यवंश के राज हरिसिंह देव के शासनकाल में मैथिली भाषा का विकास शुरू हुआ और भक्तपुर में मल्ल राजाओं के शासनकाल में मैथिली साहित्य की प्रमुख भाषा बन गई ।

राज्याश्रय पाकर भक्ति रस और वीर रस प्रधान साहित्य की रचना संस्कृत और मैथिली दोनों में 18वीं शताब्दी के प्रारम्भ तक होती रही और भक्तपुर और कीर्तिपुर के कई राजाओं ने नाटक और कविता के क्षेत्र में न केवल रूचि ली बल्कि अपना विशिष्ट योगदान दिया । मल्लकालीन गीति-नाट्य की अमूल्य धरोहर आज भी अभिलेखागार की अनुपम निधि है जो शोधकर्त्ताओं के लिए वरदान सिद्ध होती रही है ।

उस समय साहित्यिक होना बड़े सम्मान और प्रतिष्ठा का विषय माना जाता था । कीर्तिपुर के राजा जय विजय मल्ल ने स्वरचित 'प्रबोध चन्द्रोदय'

नाटक में स्वयं को वाचस्पति की उपाधि दे डाली है :-

"कीर्त्या चन्द्र इव प्रतापनिकरौ चण्डां शुवत् संगरे
वीरः पार्थइव प्रबन्ध-कविता-शास्त्रेषु वाचस्पतिः।।"

नेपाल के इतिहास में मल्ल नरेशों का शासन काल साहित्य और ललित कला की दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय रहा है। कई विद्वानों का मत है कि मल्ल नरेशों का शासन-काल कला, संगीत और साहित्य के लिये स्वर्ण-युग था। इन दिनों अनेकानेक गीतिनाट्य लिखे गये और मंचित हुए। इतना ही नहीं कई मल्ल नरेश स्वयं जाने-माने कवि थे। उनकी रचना की भाषा मैथिली थी ।

उन दिनों इस क्षेत्र में भक्ति-भावना का विशेष प्रभाव था और देवी-देवताओं के प्रति श्रद्धा तथा भक्ति के पद विशेषण से रचे गये। मल्ल-नरेश प्रताप मल्ल की यह रचना देखें (जिसमें स्थानीय तथा तात्कालीन प्रभाव के कारण 'ख' की जगह 'ष' वर्ण का प्रयोग हुआ है)। यह पद पहाड़ी राग में गेय है:-

"हेरह हरषि दूष हरह भवानि । तुअ पद सरण कएल मने जानि।।[1]
मोय अति दीन हीन मति देषि । कर करूणा देवि सकल उपेषि।।
कुतनय करय सहज अपराध । तैअओ जननि कर वेदन बाध ।।
परताप मल्ल कहए कर जोरि । आपद दूर कर करनाट किशोरि।।

इस पद में करनाटक से लायी गयी अपनी कुलदेवी की वंदना प्रताप मल्ल ने की है ।

---

1. प्रताप मल्ल – कुलदेवी की वन्दना।

एक अन्य शिला–लेख पद में जितामित्र ने शिव की वंदना करते हुए भैरव राग में कहा है–

जय जय शंकर आदि महेश्वर सानन्द सहज स्वरूपे ।

त्रिभुवन नाथ विकट नट नायक भूषण फणि गण भूपे।।

... ...

सहज सबहि हित नृपति जितामित्र हर पद आन विभावे।

निय पद पंकज तरूण दिवाकर समुचित ई रस गावे ।।

मालश्री राज विजय की 'स्वर–लहरी' में इनकी दूसरी रचना शक्ति–आराधना में मुखरित हुई है :–

"जय भूप पालनि चंडिके ।

डिडिम डिम डिम डमरू वादिनि विकट कट कट हासिके ।।

... ...

विनत गोचर जननि पुनु पुनु श्री जितामित्र भूपति ।

कुमति दम्भ कुसंग तेजि कहुँ होअओ तुअ पद मन्मति ।।

इन शिलालेखों में अंकित पदों से यह भी प्रमाणित होता है कि उन दिनों यहां की राजभाषा मैथिली थी। वर्तमान नेपाली और भोजपुरी के स्वरूप निर्धारण में अन्य क्षेत्रीय भाषाओं के साथ मैथिली का विशेष योगदान रहा है। जनसंख्या की दृष्टि से नेपाल में आज भी मैथिली का द्वितीय स्थान है ।

नेपाल के मल्ल नरेशों में राजा जगज्योतिर्मल्ल, राजा प्रताप मल्ल, राज भूपतीन्द्र मल्ल, राजा रणजीत मल्ल के नाम उल्लेखनीय हैं: इन मल्ल नरेशों

में सर्वाधिक साहित्य स्रष्टा जगज्ज्योतिर्मल्ल हुए। ये शास्त्रीय संगीतबद्ध गीतों और नाटकों को लेकर अति प्रसिद्ध हैं। नेपाल के राष्ट्रीय अभिलेखागार में संग्रहीत इनकी अनेक कृतियाँ सुरक्षित हैं। इनकी सबसे पुरानी कृति–गीतावली है। दशावतार नृत्यम्, गीत पंचाशिका, नानाराग गीत संग्रह, गीत संग्रह, भाषा गीत संग्रह, राग भजन संग्रह आदि भक्तपुर शाखा के मल्ल नरेश जगज्ज्योतिर्मल्ल की रचनाओं के हस्तलिखित संकलन उपलब्ध हैं। इनके नाटकों के नाम हैं– 'कुंज बिहार नाटक', 'मुदित कुवलयाश्व नाटक' तथा 'हर गौरी विवाह नाटक'।

साहित्यक परम्परा की इतनी अनुपम पृष्ठभूमि में नेपाली भाषा का क्रमशः विकास हुआ । नेपाली भाषा में साहित्य व्यवस्थित रूप से पिछले दो सौ वर्षों में लिखा गया है। इन दो शताब्दियों में नेपाली भाषा की निरंतर उन्नति हुई है। नेपाल की बदलती ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का प्रभाव नेपाली भाषा की साहित्य–परम्परा और प्रवृत्ति पर बड़ा गहरा पड़ा है ।

नेपाली केवल सरकार कामकाज या कोर्ट–कचहरी की भाषा भर नहीं और न ही केवल नेपाल के संविधान में उद्घोषित राष्ट्र भाषा । वह तो अपना नाम सार्थक करती हुई नेपाल के एक बहुत बड़े भू–भाग में बोली जानेवाली जन–भाषा है। इस भाषा का व्यवस्थित रूप से साहित्य–सृजन में प्रयोग 18वीं शताब्दी से प्रारम्भ हुआ । जब इसे नेपाल में राज्याश्रय मिला, तभी से इसमें लेखन–क्रम शुरू हुआ और इसके व्याकरण और शब्द भण्डार का विकास हुआ । उसके पूर्व आर्यवंश की, पश्चिमी हिमालय के प्रदेशों में, प्रचलित बोली के रूप में यह पनप रही थी और इसका निकट सम्बन्ध पहाड़ी समुदाय की कुमायूँ बोली से था। नेपाल की घाटी में पहुँच कर इसका तिब्बती और बर्मी मूल की भाषाओं से भी

सम्पर्क हुआ और उनका प्रभाव इस पर पड़ा; लेकिन उतना नहीं जितना संस्कृत और संस्कृत से निकली भारतीय भाषाओं का विशेष कर भोजपुरी, बंगाली और उनकी विभिन्न बोलियों का। देवनागरी में लिखी जाने के कारण भी आधुनिक भारतीय भाषाओं और विशेषकर भोजपुरी से इसका सगी बहिन का सम्बन्ध है। भाषा विज्ञान और उद्भव की दृष्टि से नेपाली का आर्यभाषा संस्कृत से वैसा ही सम्बन्ध है जैसे लेटिन भाषा का इटालियन, फ्रेंच या स्पेनिश भाषाओं से है।

वैसे नेपाल में एक ओर आस्ट्रेलिया एशिया भाषा परिवार की दरभिया, व्यासी, खम्बू, लिम्बू, थामी, हायु आदि बोलियाँ बोली जाती हैं और दूसरी ओर हैं प्रचलित तिब्बती–बर्मी कुल की बोलियाँ जैसे गुरूंग, मगर, नेवारी, सुनवादी, मुर्मी आदि। परन्तु इन बोलियों से नेपाली का कोई भी प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं है। डा0 दीनानाथ शरण अपनी पुस्तक "नेपाली सहितय का इतिहास" में लिखते हैं कि इन बोलियों के कतिपय शब्द भले ही नेपाली में समाविष्ट हो गये हों, किन्तु इतना निःसंदिग्ध है कि नेपाली का मूल ढांचा आर्य भाषा संस्कृत और आधुनिक भारतीय भाषाओं जैसे भोजपुरी, मैथिली, गुजराती आदि के अनुकूल है, नेपाली और भोजपुरी के व्याकरण और वाक्य रचना में बहुत एकरूपता है।[1] अधिकतर स्वर, व्यंजन और उच्चारण में भी दोनों भाषायें मिलती जुलती हैं और सबसे महत्वपूर्ण बात तो यह है कि दोनों भाषायें एक ही लिपि–देवनागरी–में लिखी जाती हैं। नेपाली में संस्कृत के शब्द प्रचुर मात्रा में हैं– उसी तरह जिस तरह वे संस्कृत से निकली भारतीय भाषाओं में हैं। नेपाली भाषा और आर्य भाषा संस्कृत की ध्वनि और शब्द गठन में काफी साम्यता है जैसा निम्नांकित कतिपय शब्दों से स्पष्ट होता है। कई शब्द संस्कृत के मूल रूप में प्रयुक्त हैं और कई में थोड़ा परिवर्तन आ गया है:

---

1. डा0 दीनानाथ शरण – नेपाली अध्ययन.

संस्कृत	नेपाली	संस्कृत	नेपाली
देवता	देउता	पूजा	पुजा
सत्य	साँच	रम्य	राम्रो
वृद्‌ध	बुढा	काष्ठ	काठ
त्यौहार	तिहार	अवसर	ओसर
मध्यदेशी	मधेसी	स्वादिष्ट	स्वादिलो
भूमि	भुईं	नव	नयाँ
पवित्र	पबित्र	उपहार	उपहार
नि:सहाय	नि:सहाय	उपलक्ष्य	उपलक्ष्य
समारोह	समारो	प्रतिष्ठा	प्रतिष्ठा
चंचल	चांचर	राक्षस	राकस
जमाई	ज्वांई	हस्तान्तरण	हस्तान्तरण

भोजपुरी भाषा की तरह नेपाली में संस्कृत की विरासत स्पष्ट झलकती है। बल्कि कुछ हद तक तो नेपाली में संस्कृत का प्रभाव आज की सामान्य बोलचाल की भोजपुरी से अधिक है और संस्कृत पर आधारित शब्द अधिक मात्रा में सामान्य प्रचलन और प्रयोग में आ गये हैं ।

इनके अलावा आधुनिक भारतीय भाषाओं जैसे– हिन्दी, भोजपुरी, गुजराती, पंजाबी, बंगाली, मराठी, उर्दू, मैथिली, अवधी और बोली जैसे मारवाड़ी के कई शब्द ऐतिहासिक और निरंतर तथा व्यापक जनसम्पर्क की परम्परा के कारण नेपाली में स्वाभाविक रूप से आ गये हैं। सामान्य प्रयोग में सम्मान सूचक, आदर सूचक शब्द "तपाई" पर भोजपुरी की और "हुजूर" पर उर्दू की छाप स्पष्ट नजर

आती है। भोजपुरी की तरह नेपाली में भी कई उर्दू, फारसी और अरबी के शब्द भी प्रचलन में आ गये हैं। भारत के मुसलमान राजाओं के दरबारों में प्रचलित फारसी और अरबी के शब्द दरबारी और कोर्ट कचहरी की भाषा में आ गये हैं:

उर्दू : इनाम, जिरह, तारीफ, निशान, दरख्वास्त, फजूल, तर्जुमा, माफ हैजा, दलाल ।

आरबी : अखबार, अदालत, अमीर, नीयत, इज्जत, किफायत, गरीब, जुलूस, तजबीज, तलब, दौलत, फौज, मुश्किल, लायक, सनद, सवाल, साबित, हाजिर, दर्जा, दखल ।

फारसी : अन्दाज, कारबार, खूब, गर्दन, जमीन, दुरूस्त, दरबार, बन्दोबस्त, रोजगार, शहर, सरकार, सरदार, सलाम, एतबार, मार, सुब्बा, मीआद, मिहनत, दस्तूर, दस्तावेज, दम ।

नेपाली भाषा 'खस'[1] प्राकृत से निकली है और प्रारम्भ में खसकुरा पर्वतिया और गोरखाली के नाम से प्रचलित हुई। लेकिन श्री प्रबोध पंडित ने अपनी पुस्तक "लिंग्विस्टिक हिस्ट्री रिलेशनशिप इन लैंग्वेजेस" में लिखा है कि उत्तर–पश्चिम समूह की भाषाओं का निकट सम्बन्ध संस्कृत से अधिक है और प्राकृत से उतना नहीं। कर्नाली प्रदेश में पाये गये अशोक के शिलालेखों में नेपाली का सर्वप्रथम प्रयोग चौदहवीं शताब्दी में पाया गया है। पूर्वी नेपाल के करनाली प्रदेश से लोग नेपाल की गंडकी घाटी में आये और यहां उनका सम्पर्क उत्तरी भारत से आये हुए लोगों और उनकी "पहाड़ी भाषा" से हुआ। इस तरह नेपाली की बोलचाल का प्रारम्भ हुआ और साथ ही उसमें लेखानुक्रम का भी।

---

1. पारसमणि प्रधान, माडर्न नेपाली लिरेचर एंड इंडिया.

"भास्वती"[1] का संस्कृत से नेपाली में अनुवाद शायद नेपाली भाषा का सर्वप्रथम लिखित उदाहरण है। उनके अनुसार यह अनुवाद सन् 1343 ई0 या उससे कुछ पहले लिखा गया हो ।

स्वर्गीय राजा पृथ्वी नरायण शाह के राज्यकाल (सन् 1768-69 ई0) में नेपाली एक व्यापक राष्ट्रभाषा का रूप ले बैठी थी। उनके शासनकाल में शासकीय कार्य-कलाप, पत्र-व्यवहार और दस्तावेजों में इसका प्रयोग हुआ और साथ ही साथ विकास भी । स्वयं पृथ्वीनारायण शाह के भाषणों का और भक्ति प्रधन कविताओं में उसका उपयोग हुआ और उसके जरिये उसका प्रचलन । इस प्रकार नेपाल के राजनैतिक एकीकरण के साथ ही साथ नेपाली भाषा की साहित्यिक प्रगति का मार्ग प्रशस्त हुआ । सन् 1768 ई0 से पहले नेपाली साहित्य मुख्यतया धार्मिक ग्रंथों और सामाजिक विवरणों तक ही सीमित थी। उस साहित्य का "ऐतिहासिक संदर्भ" में महत्व था लेकिन "साहित्यिक संदर्भ" में नहीं। सही अर्थ में नेपाली भाषा में साहित्यिक परम्परा 19वीं शताब्दी में प्रारम्भ हुई। प्राचीन गोरखाली या पर्वतियों की तुलना में आधुनिक नेपाली में बोलचाल की भाषा की सरलता और स्वाभाविकता प्रचुर मात्रा में है। रोजमर्रा के व्यवहार की जनभाषा ही शिष्ट भाषा है; वही साहित्य की भाषा भी । यही कारण है कि प्रारम्भ से ही इस भाषा में साहित्य सृजन जनमानस के विचार दर्शन का बहुत करीब से और बड़ी स्वाभाविकता एवं सहजता से प्रतिनिधित्व करता आया है ।

भाषा का विकास और साहित्य की प्रगति विशेषकर नजदीक की और एक ही काल और प्रदेश की भाषाओं के बीच साहित्यिक सम्बन्ध और आदान-प्रदान से होती रहती है। एक ही लिपि-देवनागरी-का प्रयोग होने से नेपाली और

---

1. डा0 जे0सी0 रेग्मी – नेपाली अध्ययन.

भोजपुरी व अन्य उत्तर भारत की भाषाओं के बीच आदान-प्रदान सरल है। कई पुराने नेपाली लेखक, कवि और साहित्यकार नेपाली के साथ-साथ भोजपुरी और मैथिली में भी लिखते रहते हैं। इसलिए उस समय के रचित साहित्य में पारस्परिक प्रभाव स्पष्ट दिखता है। अभी सुवेदी ने अपनी पुस्तक "नेपाली लिटरेचर-बैकग्राउण्ड एण्ड हिस्ट्री" में मत व्यक्त किया है कि कुमायूँ के पहाड़ों में रहने वाले कवि मुमानी पंत ने, जो शायद खड़ी बोली के प्रथम कवि माने जाते हैं, नेपाली भाषा में भी कवितायें लिखीं। उनकी एक कविता में पहली तीन पंक्ति संस्कृत में हैं और अंतिम पंक्ति नेपाली में। उनकी भाषा में कुमायूँ, संस्कृत और नेपाली शब्दों का भी काफी आदान-प्रदान हुआ है।[1] वस्तुतः प्रारम्भिक काल में भोजपुरी भाषा के प्रख्यात कवियों और लेखकों का प्रभाव भाषा, शैली और विचार प्रतिपादन के दृष्टिकोण से नेपाली साहित्य पर काफी हुआ ।

साहित्य में काल विभाजन, ऐतिहासिक काल विभाजन की तरह सुगम नहीं होता । नेपाल की सांस्कृतिक परम्परा की तुलना में नेपाली साहित्य का इतिहास बहुत पुराना नहीं है। आदि कवि भानुभक्त का जन्म सन् 1814 ई० का है।उनके पूर्ववर्ती पंडित उदयानंद अर्ज्याल का समय सन् 1776 ई0 कहा गया है। इस तरह नेपाली साहित्य का इतिहास लगभग दो सौ वर्षों का ही है। श्री रत्न ध्वज जोशी ने सन् 1908 ई0 तक के समय को मध्यकाल और तदुपरांत के समय को आधुनिक काल माना है। डा0 दीनानाथ शरण ने काल विभंजन समय के अनुसार यों किया है: आदिकाल - सन् 1776-1841 ई0, पूर्व मध्यकाल सन् 1841-1882 ई0 उत्तर मध्यकाल - सन् 1883-1912 ई0, आधुनिक काल- सन् 1913 ई0। श्री यज्ञराज सत्याल ने प्रमुख साहित्यकारों को आधार मान कर काल विभाजन किया है जो उपरोक्त काल विभजन से मेल खाता है। उदयानंद अर्ज्याल

---

1. अभीसु देवी - नेपाली लिटरेचर - बैक ग्राउण्ड एण्ड हिस्ट्री.

के समय को आदिकाल, भानुभक्त के समय को पूर्व मध्यकाल, मोतीराम भट्ट के समय को उत्तर मध्यकाल और लेखनाथ पौड्याल के समय से लेकर अब तक के समय को आधुनिक काल की संज्ञा दी गई है। अपने विश्लेषण के लिए मैंने मोटे रूप से इसी काल विभाजन के आधार पर नेपाली कविता के इतिहास का अवलोकन किया है ।

। आदिकाल

राजनैतिक एकीकरण के बाद आधुनिक नेपाल के प्रारम्भ का काल नेपाली साहित्य का आदिकाल है, जो मोटे रूप से सन् 1776–1841 ई० तक लिया गया है। एकीकरण के बाद शांति, स्थायित्व और सर्वोन्मुखी प्रगति के वातावरण में साहित्य और ललित कलाओं का विकास स्वाभाविक था। आदि कवि का सम्मान यद्यपि स्व० भानुभक्त आचार्य को ही मिला है किन्तु नेपाली साहित्य के अनुसंधान के क्रम में उनसे पूर्व अनेक कवियों के नाम आते हैं। पंडित उदयानंद अर्ज्याल, सुवानन्द दास, इन्दिरस, विद्यानन्द केसरी, बसंत शर्मा, यदुनाथ पोखर्याल, रघुनाथ पोखर्याल, भट्ट और पतंजलि के नाम मुख्य रूप से उल्लेखनीय हैं।[1]

इस काल में उभरती हुई नेपाली भाषा पर ब्रज भाषा, मैथिली, भोजपुरी और हिन्दी का गहरा प्रभाव दिखता है। नेपाली भाषा परिष्कृत और परिमार्जित होकर बाद में निखरी लेकिन उसकी भूमिका इस काल में तैयार हुई। इस दृष्टि से इस काल की रचनाओं का अपना महत्व है । श्री यज्ञराज सत्याल[1] ने लिखा है– भाषा में परिवर्तन आना स्वाभाविक है फिर भी इस काल की रचनाओं की श्रेष्ठता

---

1. यज्ञराज सत्याल, "नेपाली साहित्य को भूमिका".

को स्वीकार करना पड़ेगा, क्योंकि इनके ही जरिये एक नवीन साहित्यिक भाषा की सृष्टि हुई और इसी ने क्रमशः एक बड़े अभाव की पूर्ति की और नेपालियों के लिए एक राष्ट्र भाषा को जन्म दिया ।

इस काल के कवियों की रचनाओं में मुख्यतः भक्ति की प्रवृत्ति देखने को मिलती है। इसलिए इसे किन्हीं मानों में भक्तिकाल की संज्ञा दी जा सकती है। अधिकांश कवियों ने भक्ति की रचनायें की हैं। भक्ति में कृष्ण–भक्ति, राम–भक्ति और संत धारा के कवि आते हैं । संत धारा में कबीर की निर्गुण भक्ति और अन्य कवियों की सगुण भक्ति की भी स्फुट रचनायें हैं। कृष्ण–भक्ति की कविताओं में रीति काव्य, की छाप है। यों राज्याश्रय मिने से वीर रस और राष्ट्रीयतापूर्ण रचनायें भी लिखी गईं। वीर रस की झलक विशेष कर उदयानंद अर्ज्याल और यदुनाथ पोखर्याल की रचनाओं में मिलती है।

इस काल के नेपाली भक्ति सहित्य का मूल आधार भारतीय भाषाओं के तत्कालीन साहित्य की तरह श्रीमद्‌भागवत, रामायण आदि मूल संस्कृत ग्रंथ रहे हैं।दोनों देशों की समान संस्कृति, धर्म और विश्वास होने के कारण यह प्रक्रिया स्वाभाविक भी थी। दूसरा एक और स्वाभाविक कारण नेपालियों का शिक्षण केन्द्र भारत होना भी रहा है। काशी जो भारतियों के लिए शिक्षा का केन्द्र था, नेपालियों के लिए भी उतने ही महत्व का था। कृष्ण पंथी विद्यानंद केसरी अपने पिताजी के साथ काशी में आकर पढ़े थे। राम पंथी श्री भानुभक्त आचार्य ने काशी में शिक्षा पाई थी। संस्कृत में विद्‌वत्ता प्राप्त करने के बाद इन महापुरूषों ने अपने देश की आम जनता को इन ग्रंथों का परिचय प्राप्त कराने के लिए इन ग्रंथों का प्रणयन नेपाली में किया। इससे नेपाली भाषा का रूप जो सामने आया वह मुख्य

रूप से संस्कृतनिष्ठ था । वह यहीं तक सीमित नहीं रहा, कुछ कवियों की रचनाओं में अवधी, भोजपुरी और नेपाली का मिलाजुला प्रयोग भी देखा जा सकता है।

वर्तमान शाह वंश के अधिष्ठाता पृथ्वीनारायण शाह की एकमात्र कविता उपलब्ध है। यह रचना भक्तिगान के रूप में रेडियो नेपाल से भी प्रसारित होती रहती है :-

बाबा गोरखनाथ सेवक सुषदाये, भजहुँ तो मनलाये ।
बाबा चेला चतुर मछिन्द्रनाथ को, अधबुध रूप बनाये ।।
शिवको अंश शिवासन काये, सिद्धि माहा बनि आये।।1।।बाबा0।।
विधिनाद जटाकवरि, तुम्बी बगल दबाये ।
समृथन बाघ बघम्बर बैठे, तिनहि लोक वरदाये।।2।।बाबा0।।
मुन्द्रा कान में अति सोभिते, गेरूवा वस्त्र लगाये।
गालेमालं रूद्राच्छे सेली, तनमें भसम चढाये।।3।।बाबा0।।
अगम कथा गोरखनाथ कि महिमा पार न पाये ।
नरभूपाल साह जिउको नन्दन पृथ्विनारायण गाये ।।4।।बाबा0।।
बाबा गोरखनाथ सेवक सुष दाये, भजहुँ तो मन लागे[1]।।

रोचक होगा यदि इस क्षेत्र में शोध कार्य हो और उनकी अन्य कवितायें भी प्रकाश में आयें। इतने महान राजनैतिक व्यक्तित्व ने निश्चय ही भक्ति रस के अलावा राष्ट्रीयता के पुट भरी कवितायें जरूर लिखी होगी ।

इस काल की नेपाली कविता में कहीं-कहीं वीर रस और धार्मिक भावना का सुन्दर सम्मिश्रण देखने को मिलता है।

---

1. जनकलाल शर्मा, जोसमनी हीन परम्परा साहित्य-पेज 427.

विश्वेश्वर के दर्शन और ढाल तलवार दोनों साथ हैं। यह सुवानंद की कविता कवित्त के रूप में है जो नेपाली में सांढ़े का कवित्त के रूप में बहुत लोकप्रिय हुई। नेपाली कवित्त लोक-गीत है। सांढे के कवित्त वीरों के यशगान गाने की लोक-शैली है। वीर रस में सुवानन्द दास[1] की कवितायें इस काल की अनुपम उपलब्धि है । राजा पृथ्वीनारायण की विजय से संबंधित निम्नांकित कविता वीर रस और राष्ट्रीयता का सुन्दर उदाहरण है और भाषा का भी जो हिन्दी और व्रज भाषाओं के नजदीक है । लेकिन साथ ही विषय-वस्तु की मौलिकता, लय का नेपालीपन और भाषा की सरलता भी निखर आती है ।

उदयानंद अर्ज्याल ने सन् 1777 में चितवन पर हुए आक्रमण का विवरण अपनी रचना में दिया है। इनकी रचना में ठेठ नेपाली शब्दों का अत्यधिक प्रयोग है। यों कहीं-कहीं उर्दू शब्दों की झलक भी मिलती है। अब तक उपलब्ध नेपाली रचनाओं में इनकी कविता को ही सबसे पुरानी नेपाली कविता माना गया है। जिस प्रकार चन्दरबरदाई की रचना में महाराज पृथ्वीराज चौहान की प्रशस्ति गाई गई है, उसी प्रकार उदयानंद अर्ज्याल की रचना में गोरखा राजा पृथ्वी नारायण शाह के यश-गौरव का गान है ।

पृथ्वी नारायण शाह का व्यक्तित्व कवि के लिए प्रेरणा का स्रोत था। साथी ही उन्होंने पृथ्वीनारायण के पुत्र सिंह प्रताप शाह के गौरव गान में भी कवितायें लिखीं और उसमें भानुभक्त की शैली का आभास मिलता है।

इनकी भी भाषा सरल और सरस है और बड़े स्वाभाविक रूपसे पड़ोसी भाषाओं से प्रभावित है।

---

1. ताना शर्मा, "नेपाली साहित्य को इतिहास".

इन्दरस की कृति 'गोपिका–स्तुति' श्रीमद्भागवत के दशम स्कंध के पूर्वार्द्ध का अनुवाद है। इसमें संस्कृत के वर्णवृत्त का प्रयोग किया गया है और भाषा की दृष्टि से मैथिली, भोजपुरी और अवधी के शब्दो के प्रयोग भी हुए हैं। अरबी और फारसी शब्दों का प्रयोग भी इनकी रचना की विशेषता है। भक्ति काव्य का श्री गणेश इनके द्वारा ही माना जाता है।

विद्यारण्य केसरीकी शिक्षा–दीक्षा वाराणसी में होने के कारण भोजपुरी के प्रति भी इनकी रूचि स्वाभाविक थी। हिन्दीमें 'बंशी चरित्र' और नेपाली में 'युगल–गीत' और 'द्रोपदी–स्तुति' इनकी प्रसिद्ध कृति है। "द्रोपदी स्तुति" के प्रथम श्लोक में हिन्दी का प्रभाव स्पष्ट है और महाभारत से सीधी प्रेरणा प्राप्त की है।

"युगल गीत" श्रीमद्भागवत के दशम स्कन्ध के अध्याय पर आधारित है। मूल ग्रन्थ में प्रयोग हुए शार्दूलविक्रीडित छन्द का प्रयोग ही कवि ने अपनी रचना में किया है।

वसन्त शर्मा ने 'कृष्ण चरित' और 'समुद्र लहरी' की रचना की थी। 'कृष्ण चरित्र' श्रीमद्भागवत तथा महाभारत पर आधारित तो है किन्तु किसी ग्रंथ विशेष का अनुवाद नहीं है। इस में बसंत शर्मा जी ने अपनी कल्पना का सफल समावेश किया है जिससे इसे मौलिक कृति कहना उपयुक्त है। नेपाली साहित्य में इनका महत्वपूर्ण स्थान है। इनकी शैली सरल है। ठेठ नेपाली शब्दों के प्रयोग से इन्होंने अपनी रचना को प्रभावशाली बना दिया है। 'कृष्ण चरित्र' नेपाली का प्रथम काव्य ग्रंथ माना जाता है। कवित्व तत्व की कमी होने पर भी इनकी इस कृति में विचार प्रवाह है और कृष्ण–भक्ति काव्य होने के कारण इसे महत्व दिया गया है ।

यदुनाथ पोखर्याल की कृतियों में "स्तुति पद्य" और "कृष्ण चरित" का उल्लेख है। इन कृतियों में सुन्दर शब्द–योजना, पद–लालित्य और वर्णन सामर्थ्य के अच्छे उदाहरण मिलते हैं। श्री कृष्ण की लीला का वर्णन संस्कृत के छंद में संगीतात्मकता पूर्ण है।

शैली पर असाधारण अधिकार और संस्कृत छंदों के प्रयोग में ये बड़े प्रवीण रहे हैं। राष्ट्रीय भावनाओं को प्रखरतापूर्वक व्यक्त करने में सिद्ध हस्त कवि के रूप में यदुनाथ पोखर्याल का नाम सदा ही लिया जायेगा ।

रघुनाथ भट्ट (पोखर्याल) ने संपूर्ण अध्यात्म रामायण का नेपाली में अनुवाद किया है। किन्तु केवल सुन्दर काण्ड का अनुवाद ही उपलब्ध हो सका है। राजनैतिक परिवर्तनों के वर्णन इन्होंने कूट शैली में किये हैं। इन्होंने नेपाली जनता को रामभक्ति की ओर आकृष्ट किया है। इनकी भाषा क्लिष्ट है संस्कृत शब्दों की भरमार इनकी रचना में देखने को मिलती है। नेपाली साहित्य के आदिकालीन कवियों में इन्हें स्थान दिया गया है ।

पतंजलि गजुर्याल जी को नेपाली में कविता लिखने की प्रेरणा बहुत पहले ही मिली थी। इनकी प्रथम कृति "चौर पंचाशिका" एक अनुवाद ग्रंथ है। 'मत्स्येन्द्रनाथ को कथा', 'हरि भक्त माला', 'बालगोपाल–वाणी' इनकी प्रसिद्ध रचनायें हैं। इनकी कृतियों का आधार पौराणिक और धार्मिक है। इनकी कतिवायें ऊपर से रूक्ष किन्तु भीतर से सरस सुमधुर होती हैं।

जोसमणि शाखा निर्गुण भक्तों की धारा है। हिन्दी में नाथ सम्प्रदाय से प्रभावित निर्गुण स्वरूप से प्रेरणा प्राप्त की । मूल शब्द ज्योतिर्मयी का रूप

बदलते हुए ज्योतिषमयी से जोसमणि रूप स्थिर हुआ। इनके आदे गुरू शशिधर माने जाते हैं। अन्य मुख्य कवियों में ज्ञान दिलदास, धर्म दिलदास, स्वामी अभयानन्द आते हैं।

सधुक्कड़ी भाषा और कबीर के लोकप्रिय दोहों और उतियों का प्रभाव यह हुआ कि उन्हें जोसमणि संतों ने हूबहू नेपाली में लिख दिया।

इन कवियों के अतिरिक्त इस काल के अनेक कवियों के नाम तो लिये जाते हैं किन्तु रचनायें उपलब्ध नहीं होने से उनके हत्व का मूल्यांकन करना संभव नहीं। ऐसे लेखकों और कवियों में जो उल्लेखनीय नाम मिलते हैं उनमें परमानंद, वीरशाली पंत, षडानंद लोहनी, बिहारी लाल छविला आदि हैं। शाहवंश के दूसरे कवि नरेश श्री 5 रणबहादुर शाह (सन् 1778–1807ई0) है जिन्होंने निर्वाणानन्द के नाम से कवितायें लिखी थीं ।

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि आदि कवि भानुभक्त आचार्य के पूर्व के कविगणों में धर्मोन्मुखी रचना की प्रवृत्ति ही प्रमुख स्थान रखती है। नेपाली कविता के क्रमशः विकास का रास्ता इस युग से खुला। इस युग की काव्य रचनाओं का बारीकी से विश्लेषण अभी तक नहीं हुआ है। इस पर शोध कार्य किया जाये तो यह और भी स्पश्ट होगा कि नेपाली कविता का प्रारम्भ न केवल प्रेरणात्मक था बल्कि शैली, शाब्द–विन्यास और भाषा के आकार–प्रकार की दृष्टि से बड़ा रोचक और प्रयोगात्मक था। कवियों के भाषा प्रयोग, शब्द चयन और लय में नेपाली भाषा साहित्य की सुदृढ़ नींव डालने का स्पष्ट अभाव मिलता है ।

।। पूर्व मध्यकाल
(भानुभक्त काल)

साहित्य के इतिहास में कभी–कभी ऐसा होता है कि किसी काल विशेष में ऐसा साहित्यकार अवतरित होता है जो न केवल उस काल में साहित्य सृजन का नेतृत्व करता है बल्कि जो साहित्य पर सीमित काल से परे संपूर्णता से छा जाता है और उसे विकास की नई दिशा, संवर्धन की प्रेरणा और गतिशीलता तथा अभिव्यक्ति का समार्थ्य प्रादन करता है। नेपाली साहित्य में आचार्य भानुभक्त का यही स्थान है। भानुभक्त ने संस्कृत को छोड़ लोक–भाषा नेपाली को साहित्य सृजन का माध्यम बनाया । इस युगान्तकारी घटना से जनभाषा को बड़ा प्रबल प्रोत्साहन मिला और वह बोल–चाल के साथ–साथ साहित्य की भाषा के पद पर भी प्रतिष्ठित हो गई। उनकी काव्य रचनाओं में अभिव्यक्ति का सौंदर्य है, रस है, लालित्य है साथ ही बोधगम्यता और भाषा सरलता है। उनकी साहित्य की भाषा और शैली का आधार लोकतांत्रिक है और साहित्य सृजन का उद्देश्य "कला के लिए कला" न हो कर व्यापक लोक हित और कल्याण है ।

भानुभक्त से ही वास्तव में नेपाली साहित्य के स्वतंत्र अस्तित्व का प्रारंभ हुआ। इसलिए भानुभक्त को "आदि–कवि" की प्रतिष्ठा मिली है। जब तक भाषा में रूप और शैली का स्तर और स्थिरता नहीं आती, तब तक उसमें विकास और प्रगति नहीं हो सकती, यही नेपाली भाषा को भानुभक्त की बहुत बड़ी देन है। नेपाली भाषा को आज जो वर्तमान रूप और शक्ति प्राप्त है, वह भानुभक्त की देन है। भानुभक्त ही इसके जन्मदाता हैं।

भले ही कोरी तिथियों के दृष्टिकोण से भानुभक्त नेपाली भाषा के प्रथम कविन न रहे हो, फिर भी यह तो एक निर्विवाद सत्य है कि भानुभक्त का नेपाली साहित्य में सर्वोपरि स्थान है। इस महान विभूति को "प्रथम कवि" कहना सर्वसंगत और उपयुक्त है। इनसे पहले कवि और कविता अवश्य थी, परन्तु भानुभक्त ने भाषा की दृष्टि से, शैली की दृष्टि से, विषय–वस्तु की दृष्टि से, लय और माधुर्य की दृष्टि से रामायण और अन्य ग्रन्थों की रचना कर बोल–चाल मात्र की नेपाली भाषा को साहित्यिक भाषा का ऊँचा दर्जा प्राप्त करवाया।

भानुभक्त कवि होने के साथ ही एक महान समाज सुधारक एवं राष्ट्रीय चेतना जगाने वाले अनन्य सेनानी थे। इतना ही नहीं उन्होंने अपने साहित्य में समाज के सभी वर्गों और अंगों का ध्यान रखा है। यही कारण है कि भानुभक्त की रामायण अमीर–गरीब, शहरी–ग्रामीण, पढ़े–लिखे, अपढ़ सभी वर्गों में लोकप्रियता एवं श्रद्धा से आज तक पढ़ी जाती है। वस्तुतः भानुभक्त राष्ट्रीय चेतना जगाने वाले कवियों में प्रमुख थे ।

भानुभक्त को नेपाल का तुलसीदास कहा जाता है। जितनी लोकप्रियता तुलसीदास को भारत में मिली उतनी ही लोकप्रियता भानुभक्त को नेपाल में मिली। भानुभक्त और तुलसीदास दोनों ही संस्कृत के बहुत अच्छे विद्वान थे। उस युग में संस्कृत में ही रचना करने से साहित्य के क्षेत्र में प्रतिष्ठा और गौरव प्रापत होता था। फिर भी दोनों में समाज सुधार की भावना प्रमुख रही और दोनों ही ने अपने–अपने देश की जनभाषा में महाकाव्य लिखे ।

भानुभक्त ने अध्यात्म रामायण का अनुवाद किया। उनकी भाषा और शैली इतनी सरल, सहज और कर्णप्रिय है कि उनकी रामायण नेपाल में घर–घर

में आज भी बड़े चाव और श्रद्धा से पढ़ी जाती है। भानुभक्त के पिता और गुरू राम–उपासक थे । अतः राम–भक्ति के प्रति उनकी श्रद्धा होना स्वाभाविक था। भानुभक्त के पूर्व किसी भी नेपाली कवि ने राम के आदर्श चरित्र को उतनी स्वाभाविकता से जनभाषा में प्रस्तुत नहीं किया था। भानुभक्त की रामायण के नायक राम भगवान होते हुए भी नेपाल के आदर्श पुरूष के व्यक्तित्व से बहुत दूर नहीं थे। यही कारण है कि भानुभक्त की रामायण से भक्ति की लहर नेपाल के जनमानस में जागी और आज भी उसे पढ़ कर और उसे सुनकर प्रेरणा मिलती है। भानुभक्त की रामायण का रचनाकाल सन् 1834 ई0 से 1853 ई0 तक है। 1841 ई0 में इन्होंने बालकाण्ड लिखा और 1853 ई0 में युद्धकाण्ड और उत्तराकाण्ड लिखे। रामायण की प्रमुख विशेषता है उसकी भाषा। यहीं से नेपाली भाषा साहित्यिक रूप में प्रतिष्ठित हो सकी । इसीलिए भानुभक्त को नेपाली के "आदि–कवि" की संज्ञा दी जाती है। भानुभक्त की प्रतिभा ने ही सामान्य बोलचाल की भाषा को साहित्यिक भाषा बना दिया। भानुभक्त की भाषा में विशुद्ध नेपालीपन है, इसीलिए नेपाली साहित्य के स्वतंत्र अस्तित्व का प्रारंभ भानुभक्त की रचनाओं से मानते हैं। इनकी भाषा की सरलता और माधुर्य ने ही रामायण को असाधारण ग्रंथ बना दिया। राष्ट्रीय चेतना जगाने में भानुभक्त की रामायण का महत्वपूर्ण स्थान है, जो काम भारत में रामचरित मानस लिखकर तुलसीदास ने किया था वही कार्य नेपाल में भानुभक्त ने रामायण के माध्यम से किया ।

इस काल के अन्य कवियों को मोटे रूप से तीन श्रेणियों में बांट सकते हैं। एक है रामभक्ति शाखा के कवि, दूसरे कृष्ण भक्ति शाखा के एवं तीसरे निर्गुण भक्ति से प्रभावित जोसमणि संप्रदाय के कवि ।

राम भक्ति शाखा के कवियों में कुलचन्द गौतम, खड्ग प्रसाद श्रेष्ठ एवं होमनाथ खतिवडा के नाम उल्लेखनीय हैं।

श्री कुलचन्द्र गौतम (जन्म सन् 1875 ई0) ने भारत में तुलसी कृत रामचरितमानस की टीका नेपाली में प्रस्तुत की ।

श्री खड्ग प्रसाद श्रेष्ठ (जन्म सन् 1882 ई0) ने भारत में बहुत लोकप्रिय राधेश्याम रामायण की तर्ज पर बालकाण्ड का नेपाली अनुवाद किया।

श्री होमनाथ खतिवड़ा (जन्म सन् 1845 ई0) के ग्रंथ "रामाश्वमेघ", का अपना विशेष महत्व है।

राम भक्ति धारा निरंतर बहती रही । सभी कालों में राम भकित को विषय–वस्तु बना कर नेपाली कवियों ने काव्य लिखे। इसी काल से आगे इस परम्परा में आने वाले कवियों में श्री लेखलाथ पौड्याल, रेवती रमण न्यौपाने, पद्म प्रसाद ढुंगाना, शिखर नाथ सुवेदी, हरदयाल सिंह हमाल के नाम उल्लेखनीय हैं।

श्री पद्म प्रसाद ढुंगाना की पुस्तक "रामायण शिक्षा सदन" और "रामायण सप्त रत्न" देखने में आई है।

श्री रेवतीरमण न्यौपाने ने अपनी पुस्तक "अग्निवेष रामायण" में तुलसी के रामचरितमानस के कुछ अंश का अनुवाद प्रस्तुत किया है। भोजराज भट्टराई ने सन् 1901 ई0 में "आनन्द रामायण" की रचना की थी ।

राम भक्ति परम्परा के उल्लेखनीय ग्रंथों में श्री लेखनाथ पौड्याल का "मेरा राम" बहुत अच्छा ग्रंथ है। इसके साथ ही वाणी विलास पांडेय का

"चित्रकूटोपाख्यान", शिखरनाथ सुवेदी का "रामाश्वमेध राजा" तथा हर दयाल सिंह हमाल द्वारा रचित "श्री राम बाल विलास" अच्छी रचनाएं हैं।

नेपाली साहित्य के आधुनिक काल में तुलसी प्रसाद ढुंगले ने नेपाली संगीत रामायण की रचना की परन्तु मौलिकता के अभाव में इसे विशेष स्थान नहीं मिला । इसी काल में सुब्बा ऋषि भक्तोपाध्याय ने "राम कीर्ति वर्णन" और उदय सिंह थापा ने "कैकेयी वर प्राप्ति" शीर्षक ग्रंथों की रचना की। परन्तु इनमें मात्र आख्यान प्रवृत्ति है। नवीनता एवं मौलिकता के अभाव में इन्हें मान्यता प्राप्त नहीं हुई ।

सुब्बा खड्ग प्रसाद श्रेष्ठ लिखित "राधेश्याम रामायण" स्पष्टतः हिन्दी की राधेश्याम रामायण का अनुवाद है। गणेशमान श्रेष्ठ रचित "सुन्दर काण्ड" में राधेश्याम रामायण का प्रभाव है परन्तु मौलिकता के अभाव में अनुवाद अपेक्षित प्रभाव उत्पन्न नहीं कर सका। पद्म प्रसाद ढुंगाना की पुस्तक "रामायण" पर तुलसी के रामचरितमानस का स्पष्ट प्रभाव है।

रामभक्ति परम्परा में आधुनिकता एवं मौलिकता लिए हुए नेपाली में बहुत अच्छा काव्य "आदर्श राघव" है। सोमनाथ शर्मा रचित इस ग्रंथ में पौराणिक लीक से हटकर आधुनिकता और नवीनता का पुट मिलता है। इस ग्रंथ को देखकर मैथिली शरण गुप्त रचित "साकेत" का स्मरण आता है जिसमें रामायण में विस्मृत उर्मिला और कैकेयी जैसे पात्रों को नये ढंग से प्रस्तुत किया है। "आदर्श राघव" में भी राम के इश्वरत्व से अधिक राम के मनुष्यत्व को उद्घटित किया है। इसके अलावा भोजराज लिखित "आनन्द रामायण" और रमाकान्त रचित "अद्भुत रामायण" भी नेपाली में मिलती है। शिवनाथ जोशी रचित "सीता भारत बाहून" और चूड़ामणि बंधु

रचित "बनवासिनी" में सीता की करूण कथा को मार्मिक ढंग से व्यक्त करने का प्रयास किया गया है।

हिन्दी और भोजपुरी में तो कृष्ण काव्य का अथाह सागर है जिसमें सूरदास, नन्ददास, अष्टछाप के कवि, विद्यापति, जयदेव, ब्रजभाषा के सैकड़ों कवित तथा रीतिकाल के अनेकानेक श्रेष्ठतम कवियों ने कृष्ण के अलग–अलग रूपों का विस्तार से वर्णन किया है। सूर द्वारा बाल–कृष्ण को लेकर रचा गया साहित्य तो विश्व साहित्य में अद्वितीय है तथा कृष्ण की भक्तिपरक रचनाओं एवं काव्यात्मक विलक्षणता की दृष्टि से भ्रमर गीत भी अनुपमेय है। यानी हिन्दी साहित्य में तो कृष्ण के विविध पक्षों को लेकर अपनी काव्य प्रतिभा प्रतिष्ठित करने का सैकड़ों कवियों प्रयत्न किया जिसमें भक्ति और श्रृंगार रस के वृहद् साहित्य का सृजन हुआ परन्तु नेपाली साहित्य में कृष्ण भक्ति की परम्परा में वैसा कुछ नहीं है। कवियों ने कृष्ण के ईश्वर रूप को ही मान्यता दी एवं श्रीमद्भागवत जैसे ग्रंथों का अनुवाद मात्र ही प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया।

इस काल के उत्तरार्द्ध में श्री केदारनाथ खतिवड़ा ने महाभारत के कुछ पर्वों का नेपाली में अनुवाद किया। इनके द्वारा किया गया गीता का नेपाली अनुवाद एक अच्छी रचना है। श्री ज्योति प्रसाद गौतम रचित "कृष्ण क्रीड़ा निकुंज" कुछ अच्छी रचना है। यह पौराणिक शैली का काव्य है। इसमें श्रीमद्भागवत के दशम स्कंध की कथा संक्षेप में कही गई है। श्री बैजनाथ सेढ़ाई की रचना "श्री काला प्रताप माला" भी तुकबंदी मात्र है परन्तु इसकी भाषा पर हिन्दी का प्रभाव काफी है।

हिन्दी के रीति कालीन कवियों जैसी रचना काठमाण्डू निवासी श्री अब्जनाथ ओझा की रचना "गोपिका–स्तुति" है ।

नेपाली कृष्ण भक्ति के कवियों में रहर सिंह राई का नाम उल्लेखनीय है। इनकी पुस्तक "गोपिनीको श्लोक" में सर्वप्रथम राधा की चर्चा हुई परन्तु वह मात्र ब्रह्म के साथ माया के रूप में। इस परम्परा को श्री गोविन्द बहादुर ने अपनी रचना "सर्वहरी" में आगे बढ़ाने का प्रयत्न किया परन्तु भोजपुरी काव्य जैसी कृष्ण की प्रेमिका राधा, नायिका भेद की राधा का वह काव्यात्मक श्रृंगार-रस-सिक्त रूप नेपाली कृष्ण साहित्य में नहीं उभर पाया।

कृष्ण भक्ति काव्य रचनाकारों में श्री मुरारी ढुंगाना का नाम भी उल्लेखनीय है। इनकी पुस्तक "श्रीमद्भागवत कथासार" एक अच्छी रचना है। भागवत की कथा को नेपाली में छंदोबद्ध करके इन्होंने एक बहुत बड़ा कार्य किया परन्तु इन्होंने भी मार्मिक प्रसंगों को अनदेखा करके धार्मिक और आध्यात्मिक प्रसंगों पर ही विशेष बल दिया है ।

श्री कृष्ण प्रसाद घिमिरे रचित "रूकमणी विवाह" कुछ श्रृंगार प्रधान रचना है। इसमें पौराणिक रूक्मणी कथा का सरस ढंग से प्रस्तुत करने का प्रयास किया है । रूक्मणी प्रसंग को लेकर काठमांडू निवासी श्री बद्रीदास ने भी एक पुस्तक "रूक्मणी हरण लीला" लिखी है ।

नेपाली में कृष्ण भक्ति काव्य के मूल प्रेरणा-स्रोत महाभारत और श्रीमद्भागवत रहे हैं और प्राय: सभी कवियों ने नेपाली में अनुवाद ही किया है। महाभारत के अनुवादकों में दीर्घमान, शंभू प्रसाद ढुंगेल और पद्म प्रसाद उपाध्याय के नाम उल्लेखनीय है। अत: यह स्पष्ट है कि नेपाली कृष्ण काव्य में काव्यात्मक सौंदर्य की कमी है और अधिकांश अनुवाद में भक्ति को प्रधानता है। हिन्दी साहित्य की तरह कृष्ण के विविध रूपों को लेकर नेपाली साहित्य में काव्यात्मक रचनाएं इस काल में नहीं की गई।

इस काल के शेष कवियों में निर्गुण भक्ति शाखा के जोसमणि संप्रदाय के कवि आते हैं। जोसमणि संप्रदाय के कवियों में भक्ति और वेदान्त का अद्भुत सम्मिश्रण्ण है। इन्होंने भारतीय वेदान्त से निर्गुण भावना ग्रहण की और उसको आम आदमी के लिए सरल ढंगसे ग्राह्य बनाने के लिए सूफी प्रेमतत्व का पुट दिया। इन्होंने रूढ़ि, परम्परा और कर्मकाण्ड का विरोध किया। ब्राह्मणवाद का विरोध किया। इन पर कबीर का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है।

जोसमणि संप्रदाय के संतों में अपने नाम के साथ "दिल" या "दिलदास" जोड़ने का प्रचलन था । जोसमणि संप्रदाय के आदि गुरू कौन थे, इस प्रश्न पर विद्वानों में मतभेद है परन्तु इस संप्रदाय की सुव्यवस्थित प्राचीनतम रचना श्री शशिधर की मिलती है ।

शशिधर का जन्म सन् 1747 ई0 में नेपाल के रेंगुआ ग्राम में हुआ था । वे जाति के ब्राह्मण थे और संस्कृत के प्रकांड पंडित थे। इनके पिता का नाम विष्णु उपाध्याय था और इनके गुरू श्री हरिभक्ति दिल कहे जाते हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि शशिधर से पूर्व भी जोसमणि संत हुए होंगे। परन्तु काव्यात्मक दृष्टि से व्यवस्थित रचनाकाल शशिधर से ही शुरू होता है। शशिधर उत्तरी भारत के संत श्री दरिया साहब से बहुत प्रभावित थे । उन्होंने जगन्नाथपुरी की यात्रा के बाद कुछ समय दरिया साहब के साथ भी बिताया था। इनकी पुस्तक "सच्चिदानंद लहरी" में अनेक अवसरों पर दरिया साहब का उल्लेख मिलता है।

पश्चिम नेपाल में जोसमणि मत का काफी प्रचार हुआ। काठमांडू में भी इसकी खूब चर्चा हुई। "अमर भाषा" नाम से शशिधर का विशाल ग्रंथ उपलब्ध है जो

उनकी प्रतिभा का परिचायक है। संस्कृत में "तत्व गीता" बहुत ही विद्वतापूर्ण ग्रंथ है। काठमांडू में इनके प्रमुख शिष्यों में जनरल रणवीर सिंह थापा थे जो जनरल भीमसेन थापा के भाई थे और आगे चल कर अभयानन्द के नाम से प्रसिद्ध हुए। कबीर का प्रभाव इनकी कृतियों में स्पष्ट दिखाई देता है।

शशिधर के शिष्यों में प्रेम दिलदास का प्रमुख स्थान है। इन्होंने पूर्वी नेपाल में जोसमणि संप्रदाय का प्रचार किया था। इस पंथ में आने से पूर्व वे पृथ्वी नारायण शाह के दरबार में नियुक्त थे। कबीर की तरह इनकी रचनाओं में भी उलटबासियों का प्रयोग मिलता है।

जोसमणि संप्रदाय के संतों में ज्ञान दिलदास सर्वाधिक जनप्रिय एवं प्रभावशाली संत हुए। इनका जन्म सन् 1821 ई0 में इलाम जिले के फिकल गांव में हुआ था और मृत्यु सन् 1883 ई0 में दार्जीलिंग के समीप गैलिंग में हुई। इन्होंने जनसाधारण की बोलचाल की भाषा में अपने मत का प्रचर किया जिसमें ब्राह्णवाद का विरोध तथा कर्मकांड एवं परम्परागत रूढ़ियों पर तीखा व्यंग्य और कठोर प्रहार किया। यही कारण था कि निम्न समाज में ये बहुत लोकप्रिय हुए और बहुत बड़ी संख्या में इनके अनुयायी हो गये । इनकी लोकप्रियता से जलकर राज्याश्रय प्राप्त ब्राह्मणों ने इन्हें जेल में डलवा दिया, अनेक यातनाएं दिलवाई जिसके फलस्वरूप ये दार्जिलिंग की ओर चले गये और अंत समय तक वहीं रहे । इनके प्रसिद्ध ग्रंथ "उदयलहरी" में इन्होंने ब्राह्मणवाद का घोर विरोध किया है।

ज्ञान दिलदास की रचनाएं नेपाली, नेवारी और हिन्दी में भी मिलती हैं। "उदयलहरी" इनका नेपाली में लिखा गया बहुत ही जनप्रिय ग्रंथ है।

विषय और शैली की दृष्टि से ज्ञान दिलदास और कबीर में काफी साम्य है। दोनों ही संत समाज सुधारक थे। धर्म के नाम पर फैले आडंबर, अनाचार और कुप्रवृत्तियों का दोनों ही सन्तों ने घोर विरोध किया। दोनों ही गण के ग्राहक रहे हैं, जहां से अच्छा लगा उसे अपने अनुयायियों को सीधे शब्दों में कहा । धर्म को अगम्य, जटिल, दु:साध्य और केवल कुछ लोगों की चीज बनाने का विरोध किया। इसी कारण दोनों ही संतों को ज्यादा से ज्यादा सम्मान प्राप्त हुआ। शैली की दृष्टि से भी ज्ञान दिलदास और कबीर में काफी नैकट्य है। दोनों ने ही जन-भाषा में आम जनता को धर्म और सदाचरण का उपदेश दिया। दोनों में प्रतीक शैली पाई जाती है तथा झूठ, आडम्बर पर कठोर व्यंग्य करने की प्रवृत्ति दोनों संतों में बराबर मिलती है। ज्ञान दिलदास को "नेपाली का कबीर" कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी ।

III उत्तर मध्यकाल

मोतीराम भट्ट काल

उत्तर मध्यकाल सन् 1883-1912 ई0 तक माना जाता है। इस काल के प्रमुख कवि मोतीरम भट्ट थे और उन्हीं के नाम पर इस काल को साहित्य के इतिहास में पुकारा जाता है। नेपाली साहित्य में मोतीराम भट्ट का आविर्भाव एक ऐतिहासिक घटना है। जनता की रूचि भाषा और साहित्य में बढ़ने लगी थी और साहित्यिक प्रवृत्तियों में नये-नये भावों और विचारों की अभिव्यक्ति उभरने लगी थी। धार्मिक और आध्यात्मिक के अलावा देश-प्रेम और राष्ट्रीयता की भावनाओं को प्राधान्य मिला। भूषण और मैथिली शरण गुप्त ने जिस प्रकार हिन्दी साहित्य में राष्ट्रीयता का पुट डाला, उसी तरह की प्रवृत्ति नेपाली साहित्य में भी इस काल में प्रारंभ हो गई थी।

इस काल में रीति काव्य भी लिखा गया। गोपीनाथ लोहनी ने "श्रृंगाराष्टक" और शिखरनाथ ने "श्रृंगार दर्पण" नामक ग्रंथ लिखे। इस युग की लेखन शैली में प्रायः छन्दबद्ध रचनायें देखने को मिलती हैं। यद्यपि व्याकरण पर उतना ध्यान नहीं दिया जाता था फिर भी कुछ लेखकों और कवियों ने भाषा की शुद्धता पर बहुत बल दिया। इस युग की विशेषता यह है कि नेपाली में पुस्तकों का प्रकाशन प्रारंभ हो गया। पहले पहल नेपाली पुस्तकों का प्रकाशन काशी में हुआ और उसके बाद काठमांडू में प्रेस खुले। नेपाली का पहला प्रेस पशुपति प्रेस सन् 1893 ई० में स्थापित हुआ। भारतीय नवजीवन प्रेस काशी में पहली नेपाली पुस्तक "भानुभक्त को रामाया" प्रकाशित की गई ।

इस काल के सबसे प्रतिभाशाली कवि थे मोतीराम भट्ट। इनका यज्ञोपवीत संस्कार और शिक्षा–दीक्षा काशी में हुई। इन्होंने संगीत और संस्कृत की शिक्षा ली। मोतीराम भट्ट कवि होने के अलावा नेपाली भाषा के प्रथम प्रकाशक भी हुए। मोतीराम भट्ट 31 वर्ष की अल्पायु में ही स्वर्ग सिधार गये, पर वे अपनी अमिट छाप छोड़ गये। पंचक–प्रपंच, स्वप्नाध्याय संग्रह, नीति–दर्पण, उषा–चरित्र, गफास्टक–संकलन, भानुभक्त को जीवनी, कमल–भ्रमर संवाद और पिकदूत आदि अनेक ग्रंथों का प्रणयन स्वर्गीय भट्ट ने किया। इनकी अनेक मौलिक कृतियां हैं जैसे गजेन्द्रमोक्ष और प्रल्हाद भक्ति–कथा। उषा–चरित्र सहित ये कृतियां पौराणिक आधार पर लिखी गई हैं। कालिदास का अनुकरण कर इन्होंने मेघदूत की भांति पिकदूत की रचना की । "पिकदूत", मेघदूत की शैली पर प्रकृति वर्णन और विरहिनी की विकल वेदना व्यक्त हुई हैः–

फैला पंख मयूर नाचते चन्द्र देखती रही चकोरी[1]

पी रस भ्रमर झूमते फूों पर मडराते 'भन–भन गाते'

---

1. मोतीराम भट्ट, "पिकदूत".

जूही बेली और चमेली प्रभृति पुष्प के सौख्य देखकर
मैं तो: दु:खी हुई हूँ मन में, उधर गये जो यों हो जाते
वे परदेस–सरस–रस लेकर––कभी अघाकर घर लौटेंगे
इस आशा में हुई दु:खी हूँ जाने मैंने क्या सुख पाया
यह पापी मन हुआ नहीं थिर अब भी है दर्शन की आशा
'कल, हाँ कल' कह रही भुलाती बहुत बड़ा धोखा है खाया

उनकी कृतियों की विषय–वस्तु को देख कर लगता है कि इस अर्थ में ये भानुभक्त से आगे निकल गये हैं। मोतीराम भट्ट को साहित्य साधना की प्रेरणा काशी में विद्वानों के संपर्क से प्राप्त हुई। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की मंडी ने उन्हें नेपाली साहित्य में नई परम्परा चलाने की ओर प्रोत्साहन और प्रेरित किया। उन्होंने विभिन्न रसों और विषयों में साहित्य रचकर अपनी बहुमुखी प्रतिभा का परिचय दिया ।

मोतीराम भट्ट पर भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का प्रभाव था। सन् 1884 ई0 के मार्च में काशी से श्री रामकृष्ण वर्मा जी ने "भारत–जीवन" नामक पत्र प्रकाशित किया था। इसका नामकरण भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने ही किया था और इसका नेपाली संस्करण मोतीराम भट्ट जी की प्रेरणा से प्रकाशित हुआ करता था। यही नेपाली का सर्वप्रथम समाचार–पत्र कहा जायेगा। सच पूछिये तो हिन्दी के उत्थान के लिए जो कार्य भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने किया वही कार्य मोतीराम भट्ट जी ने नेपाली के लिए किया ।

स्वर्गीय भट्ट जी ने नेपाली भाषा को बहुत ही प्रचार–प्रसार दिया और इनकी प्रेरणा से अनेक साहित्य सेवी आगे बढ़ पाये। मोतीराम जी अपनी मौलिक

कृतियों के माध्यम से अमर है। साथ ही उन्होंने कई साहित्यिकों को भी आगे बढ़ाया। भानुभक्त की व्यापक चर्चा का आधार भी, उनकी रामायण प्रकाशित कर तथा जीवनी लिखकर, मोतीराम जी ने ही दिया। सच पूछिये तो स्वर्गीय मोतीराम भट्ट जी ने नेपाली साहित्य को नये–नये दिशा–बोध देकर युगानतर उपस्थित कर दिया।

मोतीराम भट्ट ने जो दिशा बोध की विविधता प्रदान कर नेपाली साहित्य की व्यापक आधारशिला रखी, उस पर आज भी नित नये भवन निर्मित हो रहे हैं।

मोतीराम भट्ट युग के अन्य उल्लेखनीय कवि हैं– राजीव लोचन जोशी, होमनाथ खतिवड़ा, शिखरनाथ सुवेदी, गोपीनाथ लोहनी, कुलचंद गौतम, पंडितराज सोमनाथ सिग्देल, चक्रपणि चालिसे, लाल बहादुर, राममणि आचार्य, राजा जय पृथ्वी बहादुर सिंह, सिद्धि बहादुर बस्नेत और कृष्ण प्रसाद रेग्मी।

राजीव लोचन जोशी रूढ़िवादी कवि थे। वे नारी के उत्कर्ष का अस्वीकार कर उसे दासी मात्र समझते थे। उनकी रचनाओं में युगोन्मेष का अभाव है ।

लाल बहादुर ने वीर रस प्रधान सवाइयाँ लिखीं जिनमें युद्ध के प्रसंगों का प्रभावशाली वर्णन है।

होमनाथ खतिवड़ा का नाम रामभक्त कवियों की श्रेणी में लिया जाता है। रामाश्वमेध, कृष्ण चरित्र तथा नृसिंह चरित्र इनकी कृतियाँ हैं। इन्होंने भगवती स्त्रोत भी लिखा जो इनके जीवनकाल में ही लोकप्रिय हो गया था।

वाक्‌चातुरी और रसिकता के लिए ख्याति प्राप्त कवि शिखरनाथ सुवेदी ने यद्यपि हास्य और श्रृंगार रसों में भी रचनायें की हैं, फिर भी ये मूलतः भक्त रस के कवि ही कहे जाते हैं। श्रृंगार दर्पण के अतिरिक्त "बृहत कृष्ण चरित्र", "दुर्गा कवच" और "रामाश्वमेघ राजा" इनकी उल्लेखनीय रचनायें हैं। वाक्चातुरी तथा रसिकता की दृष्टि से इनकी कृति "शिखरनाथ भाष्य" विशिष्टता रखती है।

'सत्य दुर्गा कथा', 'ध्रुव चरित्र' और 'मृग चरित्र' आदि पुस्तकों के साथ "श्रृंगाराष्टक" रचना के प्रसिद्ध कवि गोपीनाथ लोहनी की रचनाओं में भक्ति-भावना ही प्रधान है। कहा जाता है कि हाल ही उनके द्वारा रचित एक महाकाव्य की प्रति मिली है। जब ऐसी रचनायें उपलब्ध होंगी तो इस युग के साहित्य का पूर्णरूप से विश्लेषण किया जा सकेगा ।

नेपाली साहित्य के मध्यकाल के अंत में जो कवि हुए हैं उनमें कुलचन्द गौतम जी का विशिष्ट स्थान है। इन्हें नेपाल सरकार ने कवि शिरोमणि की उपाधि दी थी। इन्होंने 'राघवालंकार' और 'अलंकार चन्द्रोदय' आदि अनेक ग्रंथ लिखकर नेपाली साहित्य की श्री वृद्धि की । 'अलंकार चंद्रोदय' इनका प्रमुख ग्रंथ है। तुलसी कृत रामचरितमानस की नेपाली में की गई इनकी टीका बहुत ही लोकप्रिय हुई। भारतीय राजूतवास द्वारा उपहार स्वरूप यह ग्रंथ सैकड़ों की संख्या में वितरित किये गये। चार-चार दिन तक पहाड़ों से चल कर यह ग्रंथ प्राप्त करने को लोग भारतीय राजदूतवास काठमांडू में आते थे। इसकी मांग अभी भी बनी हुई है।

सोमनाथ सिग्देल की कृतियों में 'सूक्ति-सिंधु', 'मध्य चान्द्रिका', 'साहित्य प्रदीप' और 'आदर्श राघव' अत्यधिक प्रशंसित हैं। नेपाल नरेश द्वारा इन्हें पंडितराज की उपाधि से सम्मानित किया गया था। इनकी कवितायें वीर रस से प्रेरित और अलंकारपूर्ण हैं ।

मौलिक तथा अनुदित रचनाओं से नेपाली साहित्य का विकास करने वाले चक्रपाणि चालिसे थे। वे भक्त कवि के रूप में माने जाते हैं। 'मछिन्द्रनाथ को कथा' इनकी भक्ति भावनापूर्ण कृति है। नेपाली गद्य को आधुनकि रूप देने वालों में चक्रपाणि का नाम अग्रगण्य है।

लेखनाथ पौड्याल और चक्रपाणि चालिसे की कविताओं का संकलन, 'लालित्य' का संपादन और 'माधवी' मासिक पत्रिका का सम्पादन करने वाले राममणि आचार्य दीक्षित भी मोतीराम भट्ट युग के उत्तरकाल में नेपाली साहित्यकारों में उल्लेखनीय बने ।

राजा पृथ्वी बहादुर सिंह ने बालोपयोगी साहित्य के प्रकाशन में और नेपाली भाषा की शुद्धता की ओर विशेष ध्यान दिया। साहित्य के अतिरिक्त भूगोल विद्या, पदार्थ तत्व विवेक, शिक्षा–दर्पण, भाषा कोष आदि के निर्माण का श्रेय इन्हें है। इनसे नेपाली साहित्य उपकृत हुआ है। भाषा और साहित्य के क्षेत्र में इन्होंने क्रांति का नया दौर आरंभ किया ।

'भोट को लड़ाई को सवाई' के रचयिता सिद्धि बहादुर बस्नेत सवैया छन्द के सफल प्रयोगकर्ता के रूप में मान्य हैं। भोजपुरी के रीतिकालीन कवियों की तरह इन्होंने भी शब्द विन्यास और अनुप्रासों के प्रयोग की नेपाली साहित्य में अनूठी परंपरा ला दी ।

कहा जाता है कि मोतीराम काल में शम्भू प्रसाद ढुंगेल ने सबसे सुन्दर कविता बड़ी परिष्कृत भाषा में लिखी। ये समाज सुधारक थे। शैली सरल, सरस और आकर्षक थी ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि मध्यकाल के नेपाली साहितय पर भक्ति और श्रृंगार रस की छाप तो है परन्तु विविध विषयों की भरमान में कमी नहीं हो पायी। राष्ट्रीयता, प्रगतिशीलता, प्रकाशन–कार्य, पत्र–पत्रिकाओं का प्रकाशन, पुस्तकों का प्रकाशन, वितरण और युग बोध की शुरूआत भी इस काल की देन है ।

आधुनि काल

इस काल में कविता साहित्य का व्यवस्थित रूप से विवेचन करने के लिए इस काल को क्रान्ति से पूर्व का काल (सन् 1913 से 1950 ई0), क्रांति–उत्तरकाल पूर्वार्द्ध (सन् 1950–1960 ई0), क्रांति उत्तर काल उत्तरार्द्ध (सन् 1960–1970 ई0) और सन् 1970 ई से अब तक को वर्तमान युग में विभाजित करना उपयुक्त और उपादेय होगा ।

इस काल के प्रारम्भ में नेपाल के विचार दर्शन में एक नयी संवेदनशीलता का प्रस्फुटन हुआ। प्रथम विश्व युद्ध से लौटे गोरखा सिपाहियों ने स्वतंत्रता का मंत्र सुन लिया था और स्वातंत्र्य संघर्ष की हवा को भारत और अन्य देशों में बहते हुए देख लिया था। उपनिवेशवाद के दिन लदने लगे थे और राष्ट्रीयता और सर्वांगीण राष्ट्रीय विकास की भावना विश्व में सशक्त हो चली थी। साथ ही साथ नेपाल का सम्बन्ध विश्व के अन्य देशों के साथ होने लगा था। भारत में होने वाले अनेक सामाजिक सुधार के आन्दोलनों की भनक नेपाल की जनता के कानों में बराबर पड़ रही थी। भारत में स्वराज्य के लिए हो रहे आन्दोलन से नेपाल की प्रबुद्ध जनता बेखबर नहीं थी। स्वतंत्रता की ललक हर व्यक्ति में आ पहुंची थी। राणा शासन के दमन चक्र से नेपाली जनता बुरी तरह त्रस्त थी और उसे समाप्त करने की भावना सर्वत्र व्याप्त हो रही थी ।

साहित्यिक दृष्टि से अंग्रेजी के रोमांटिज्म और हिनदी के छायावाद का प्रभाव इस काल के प्रारम्भ में नेपाली साहित्य पर पड़ा। भक्ति तथा श्रृंगार, जिस पर पुराने युग में साहित्य–सृजन आधारित था, अब धीरे–धीरे साहित्य रचना का प्रेरक केन्द्र बिन्दु नहीं रहा। आधुनिकता का पुट नेपाली साहितय में अब तीव्र गति से और स्थाई रूप से आ चला। नेपाली भाषा का रूप भी सरस निखर आया और साहित्य सृजन में सरल सहज अभिव्यक्ति ने भाषा के विकास का मार्ग प्रशस्त किया । श्री सिद्धिचरण श्रेष्ठ और स्व0 लक्ष्मी प्रसाद देवकोटा की कविताओं में स्वप्निल जीवन और कल्पित संसारकी झलक स्पश्ट है। परन्तु इस काल में विशेष प्रभावशाली और दिशा प्रेरक कवि स्व0 लेखनाथ पौड्याल थे जिनकी कविता में बौद्धिकता और आधुनिकता का प्राधन्य रहा। कविता के विषय युग की गंभीर समस्याओं से सम्बन्धित होने लगे। सामाजिक कुरीतियों को समाप्त करने के लिए स्व0 लेखनाथ जी ने "बुद्धि विनो" नामक पुस्तक लिखी। इस काल में स्व0 धरणीधर कोइराला जी ने 'नैवैद्य' लिखी जिस में गरीबों के प्रति गहरी सहानुभूति जमाई है। इसी काल में स्व0 बालकृष्ण 'सम' जी के नाटक 'ध्रुव' और मुटुको व्यथा' प्रकाशित हुए जिन्होंने नेपाली साहित्य को आधुनिक धरातल परला खड़ा किया ।

नेपाली साहित्य का आधुनिक काल देश के इतिहास का भी आधुनिक काल होने के कारण इस युग में साहित्य को राजनैतिक उथल–पुथल से नई प्रेरणा, दिशा–दर्शन, लक्ष्य और मोड़ मिला। इस काल की सबसे महत्वपूर्ण युगान्तकारी ऐतिहासिक घटना थी सन् 1950 ई0 की क्रान्ति, जिसने निरंकुश राणाशाही का अंत कर दिया और देश में जन जागृति, राजनैतिक चेतना और बौद्धिक विकास का नया वातावरण पनपने लगा। जन समाज की आकांक्षायें संजीवित हुई और प्रगति एवं विकास के लक्ष्य की ओर दृष्टि पड़ने लगी। कवि, लेखक, समालोचक और

समीक्षक इस वातावरण से प्रभावित और प्रेरित हुए। साथ ही साथ विचार प्रवृत्ति में और विचार अभिव्यक्ति में एक व्यापक दृष्टिकोण का आभास दिखने लगा क्योंकि इस काल में नेपाल का देश–विदेशों से एक नई चेतना की पृष्ठभूमि में सम्पर्क प्रारम्भ हुआ । साहित्य के क्षेत्र में प्रकाशन की व्यवस्था हो जाने से नई पत्र–पत्रिकायें प्रकाशित होने लगीं। शिक्षण संस्थाओं की स्थापना के कारण उच्च शिक्षा की व्यवस्था ने भी साहित्य में अधिक रूचि पैदा की । तत्कालीन भोजपुरी साहित्यकारों से निकट सम्पर्क, साहित्य सृजन और पुस्तक प्रकाशन में, विशेष रूप से सहायक रहा ।

नेपाली साहित्य को नई दिशा में अग्रसर करने में श्री 5 महाराजाधिराज त्रिभुवन का क्रान्ति से पूर्व के काल में बहुत महत्वपूर्ण योगदान रहा। राणा शासनकाल में नेपाली साहित्य की प्रेरणा का स्रोत सूख–सा गया था। लेकिन जैसे ही श्री 5 त्रिभुवन के राज्यकाल में प्रजातंत्र की हवा चलनी शुरू हुई, प्रबुद्ध वर्ग के राणा शासन को समाप्त करने का भाव मुखरित होने लगा। इस भावना ने लेखकों, कवियों और कलाकारों को निरशा, कुण्ठा, भय और अवसाद से धीरे–धीरे बाहर निकालकर और उन्हें निर्भीक होकर, अपने विचार और कल्पना को अभिव्यक्त करने की ओर प्रेरित किया । ऐसे परिवर्तन में स्वाभाविक ही था कि साहित्य सृजन में रूढ़िवादी परम्परा के प्रति लगाव कम हो गया और नवीनता के पति आकर्षण बढ़ता गया ।

—————

क्रांति से पूर्व
(सन् 1913 से 1950 ई0)

आधुनिक काल में कवि शिरोमणि श्री लेखनाथ पौड्याल सूर्य के तेज के समान साहित्य के क्षितिज पर उदित हुए। इनकी कृतियों में बौद्धिकता की प्रखरता के साथ कवि सुलभ तीव्र संवेदना है। इनकी शैली सहजता और कृत्रिमता के बीच की शैली है जिसमें भाषा के परिष्कार के साथ हृदयस्पर्शी स्वाभाविकता बनी हुई है। गहन दर्शन, चिन्तन में भी कवि ने साहजिक अनुभूति को बनाये रखा है।

इनकी रचनाओं में स्वामी विवेकानन्द, टाल्स्टाय, रवीन्द्रनाथ तथा महात्मा गांधी के दर्शन का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। संक्षेप में दार्शनिकता, सौन्दर्य एवं स्वाभाविकता लेखनाथ जी की कविता की विशेषता है। इनमें जीवन के नैतिक गुणों एवं आध्यात्मिक उन्मेष के प्रति जागरूकता भी बनी हुई है। राष्ट्रीयता के साथ-साथ विश्वबन्धुत्व एवं मानवतावादी दृष्टिकोण भी इनकी कविता की विषय-वस्तु है। इनकी कविता में समसामयिक जीवन के विभिन्न पक्षों का अच्छा चित्रण हुआ है। प्राचीन रूढ़िवादिता के विरोध के साथ-साथ नये विचारों को अपनाने का समर्थन भी किया है। इनकी प्रमुख कृति "पिंजरा को सुग्गा" में तोते के रूप में न केवल कवि की आत्मा ही अपितु तत्कालीन समस्त राष्ट्र की आत्मा छटपटाती है।

इनका 'तरूण तपस्वी' काव्य भी भाव, भाषा और शैली की दृष्टि से अच्छा ग्रंथ है जिसमें कवि युगद्रष्टा के रूप में उपस्थित हुआ है फिर भी सरलता, सहजता और तत्कालीन सामाजिक दृष्टि को ठीक-ठीक अभिव्यक्ति दे सकने की दृष्टि

से इनकी कृति "पिंजरा को सुग्गा" इनकी सर्वश्रेष्ठ रचना है। इसका अनुवाद इस ग्रंथ में दिया गया है। राणा शासन के पिंजरे में कैद नेपाली जनता के रूप में तोते का करूण क्रंदन है। तोते के माध्यम से कवि ने सामज के मन की बात कही है परन्तु कठोर शासन को यह सब सुनने समझने की फुर्सत कहां थी। कुछ समीक्षक दार्शनिक अर्थ में पिंजरा और तोता को क्रमशः तन और मन का प्रतीक मानते हैं जिससे आधुनिक भौतिकवाद से संत्रस्त मानव को कैसे त्राण मिल सकता है इसका समाधान ढूंढ़ा है। लोकप्रियता और साहित्यिक महत्व की दृष्टि से भानुभक्त की "रामायण", लक्ष्मी प्रसाद देवकोटा का "मुना मदन" और लेखनाथ पौड्याल का "पिंजरा को सुग्गा" नेपाली साहित्य की अमूल्य निधि हैं।

श्री लेखनाथ पौड्याल की पुस्तक "मेरा राम" भी उल्लेखनीय है। यह ग्रंथ कवि ने अपने आराध्य देवता राम की भक्ति एवं गुणगान में लिखा है। यह प्राचीन परम्परावादी शैली का है। इसमें आधुनिकता एवं सामाजिक चेतना का अभाव है। भाषा संस्कृतनिष्ट है और इसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रयोग बहुत हुआ है ।

इतना अवश्य है कि स्व0 श्री लेखनाथ पौड्याल नेपली की आधुनिक कविता के जन्मदाता हैं। "मेरा राम" के बाद की कविताओं में बौद्धिकता, सामाजिक जागरण की विषय–वस्तु मिलती है और भाषा भी तत्सम के जाल से निकलकर सहज, सुबोध होकर जन–मानस के निकट की है ।

स्व0 बालकृष्ण 'सम' :

स्व0 बालकृष्ण 'सम' का जन्म सन् 1902 ई0 में हुआ था और मृत्यु मई 1981 में हुई। इनकी राजकीय सम्मान के साथ अंत्येष्टी हुई थी। इनके अंतिम दर्शन के लिए जो अपार भीड़ एकत्र हुई थी उसमें नेपाल के हर वर्ग के

व्यक्ति विद्यमान थे। वह उनकी लोकप्रियता का बड़ा सबूत था। हजारों नर-नारी अश्रु विगलित नेत्रों से इन्हें अंतिम नमस्कार करने आए थे। 'सम' जी नेपाल के अत्यधिक लोकप्रिय साहित्यकार थे वे महान नाटककार एवं कवि के रूप में सर्वमान्य थे । इन्हें नेपाल का शेक्सपियर कहा जाता है। नाटक इन्हें विरासत में मिला था। इनके दादा का एक थियेटर था, ये स्वयं भी स्टेज के अच्छे अभिनेता भी रहे थे परन्तु कविता इन्हें प्रभु-प्रदत्त प्रतिभा के रूप में प्राप्त थी। इनका अध्ययन बहुत गंभीर था। संस्कृत में वेद व्यास से लेकर कालिदास तक का बहुत ही मनोयोग से अध्ययन किया था जिसका प्रभाव इनकी कविता में स्पष्ट दिखाई देता है। अंग्रेजी में शेक्सपियर एवं इलेयट इनके प्रिय लेखक थे। हिन्दी में महावीर प्रसाद से लेकर प्रसाद, पन्त, निराला, महादेवी, बच्चन और दिनकर इनके प्रिय कवि थे जिनकी कविता और विचारधारा का प्रभाव भी इनकी कविता में दिखाई देता है।

राणा शासन की कुछबातें स्वयं उनके वंशजों और उत्तराधिकारियों को भी खल गयीं और उनमें भी परिवर्तन की आकांक्षा जगी। वे भी जन-जीवन से एकाकार होने में गौरवान्वित होने की बात सोचनेलगे। स्व0 बालकृष्ण जी का उपनाम 'सम' इस भावना का द्योतक है।

स्व0 'सम' जी दार्शनिक कवि थे इनकी कविता में दर्शन और प्रौढ़ कवित्व का अद्भुत एवं दुर्लभ मणि-कांचन संयोग देखने को मिलता है। वे कवि पहले थे या दार्शनिक, पहले यह विवाद का विषय हो सकता है परन्तु उनका दर्शन कविता पर हावी होकर उसे क्लिष्ट, जटिल नहीं बना सका है। इनकी कविता में बौद्धिकता की प्रखरता होते हुए भी हृदय की अनुभूतिशीलता बनी रही है ।

इनकी शैली में सामासिकता का गुण अद्वितीय है। गागर में सागर भर देने की क्षमता, दर्शन और कवित्व का अद्भुत सम्मिश्रण एवं नाटककार के रूप में सफल कृतित्व के गुण हमें जयशंकर प्रसाद की याद दिलाता है जिनमें अनायास ये सभी गुण एक साथ विद्यमान थे। "आगो र पानी" तथा "चिसो चूल्हो" इनके प्रसिद्ध काव्य ग्रंथ हैं। "चिसो चूल्हो" बत्तीस सर्गों में लिखा महाकाव्य है जिसमें नायिका गौरी उच्चकुल की है और नायक संते नीच कुल उत्पन्न है। इनके प्रणय की परिणति विवाह में होती है। इस विचारधारा को समाज के वृहत् कैनवास पर विविध समस्याओं, कठिनाईयों, कुरीतियों पर प्रबल आघात–प्रत्याघात करते हुए विशाल रूप में प्रस्तुत किया है। इन्हें प्रगतिवादी काव्यधारा का उन्नायक कहा गया है ।

"इच्छा" 'सम' जी की एक प्रसिद्ध कविता है इसमें इनका देश–प्रेम मुखरित हुआ है। इन्हें काशी या काबा में मरना पसंद नहीं था, वे नितांत स्वदेशी थे और अपने देश की धरती पर अपने देश से बने कपड़ों को ओढ़कर अंतिम यात्रा पर जाना चाहते थे ।

"मर्नेमेला" 'सम' जी की उत्कृष्टतम कविता है। यहां भी कवि की देशभक्ति व्यक्त हुई है परन्तु इसमें वीर रस है जबकि "इच्छा" में करूण रस था। देशभक्ति और राष्ट्रीयता से ओतप्रोत इस कविता में कवि नेकामना की है– रणभूमि में मातृभूमि के लिए मृत्यु का वरण करने की।

वि0सं0 1986 (सन् 1923 ई0) में बालकृष्ण 'सम' जी का नाटक 'मुटुको व्यथा' प्रकाशित हुआ। इसमें राणा परिवार से ही विद्रोह की चिन्गारी फूटने का संकेत है। इस काव्य–नाटक में कवि ने भाव, भाषा और शैली का सर्वथा

नवीन प्रयोग किया है। कवि के अनुसार –"कविता बौद्धिक चेतना की कोमलता है"। यानी चेतना बौद्धिक होते हुए भी कविता में उसका प्रस्तुतीकरण कोमल ढंग से होना चाहिए। इसीलिए 'सम' जी की कविता पाठकों के हृदय की अपेक्षा मस्तिष्क को अधिक भाती है ।

इनकी सभी कृतियों में दृष्टि की तीव्रता झलकती है। कवि ने सभी प्रमुख दार्शनिकों के चिन्तन को पचाकर अपनी पैनी दृष्टि से उसे देखा, परखा है और अपने विचार और दर्शन को ठीक–ठीक वहनकर अभिव्यक्त करने वाली स्वस्थ स्पष्ट शैली में उेस प्रस्तुत किया है।

इस काल में नेपाल से बाहर रहकर राष्ट्रीय जागरण का जयघोष करने वाले तथा देशभक्ति की कविता करने वालों में स्व0 धरणीधर कोइराला और श्री महानन्द सापकोटा के नाम उलेखनीय है ।

इन्होंने अपने सरल गीत और कविताओं में विद्रोह की भावना को पर्याप्त अवसर दिया है। स्व0 धरणीधर कोइराला का राष्ट्रीय गीत–"जाग जाग अब जागन जाग" बहुत लोकप्रिय हुआ। 'अब त विधिको पनिआयु पुग्यो' कविता में राणा शासन की समाप्ति का संकेत था। इस प्रकार इन दोनों महान कवियों नेअपनी सरल कवितओं के माध्यम से देश के बाहर रह कर नेपाल की जनता को जागरण का संदेश दिया और नेपाल को प्रजातन्त्र की ओर बढ़ने को प्रेरित किया ।

स्व0 लक्ष्मीप्रसाद देवकोटा नेपाली के आशु कवि थे। प्रकृति से पूरी तरह मस्तमौला, अल्हड़ एवं मनमौजी थे। कविता इनका जीवन थी। इन्होंने अपनी कविता को कभी भी सजाया, संवारा नहीं, यहां तक कि लिखकर दूसरी

बार पढ़ा भी न हो । तरंग आते ही कविता करते थे और जिस रूप में फूल के साथ कांटे, आसपास में घासफूस भी निकल पड़ती है, इनकी कविता का वैसा ही अंतिम रूप होता था। यह रूप इनकी कविता में स्पष्ट दिखाई देता है।

इन्होंने नाटक, अनुवाद जैसी साहित्य की अन्य विधाओं पर भी कलम चलाई, परन्तु मुख्य रूप से ये कवि के रूप में पदस्थ हुए। देवकोटा जी पर हिन्दी की छायावादी कविता का प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगत होता है। विशेष रूप से प्रकृति चित्रण देवकोटा नेबहुत अच्छा किया है जो बहुत कुछ उन्हें सुमित्रानन्दन पंत के निकट ला देता है। भावना की प्रखर अभिव्यक्ति, कल्पना का अतिरेक, प्रकृति सौन्दर्य के प्रति मोह, नारी के प्रति श्रृंगारिक दृष्टिकोण एवं शैली की सुकुमारता इनकी कविता की विशेषता है ।

इनकी प्रकाशित रचनाओं में "मुना—मदन", "सत्यवान सावित्री", "कुंजिनी", "सुलोचना" और "शकुन्तला" काफी लोकप्रिय हैं। कुछ निबन्ध संग्रह भी प्रकाशित हुए हैं। इसके अलावा इनकी कुछ फुटकर कविताओं को भी काफी लोकप्रियता प्राप्त हुई है। "मुना—मदन" नेपाल का लोक कंठहार बन चुका है।

"मुना—मदन" देवकोटा जी की सर्वश्रेष्ठ कृति है। यह एक अत्यंत मार्मिक कथानक है। मूलरूप से नेवारी भाषा में सास—बहू के संवाद—रूप में लोक शैली में यह कथा पहले से प्रचलित थी। इसे ही कवि की लेखनी ने अमर कर दिया है। आर्थिक दुरावस्था ने मदन को अपनी वृद्धा माँ और नवोढा पत्नी को छोड़कर विदेश जाने को विवश कर दिया था। इध- पत्नी पति के वियोग में विदग्ध है साथ ही वह धन की विवशता स्वयं अनुभव करती है। न चाहते हुए भी विवशता में पति की मानसिक आकुलता, व्याकुलता, विह्वलता बहुत ही मर्मस्पर्शी।

ढंग से अभिव्यक्त हुई है। आदर्श और यथार्थ की टकराहट में यथार्थ की विजय होती है, मुना की मृत्यु, मदन की बूढ़ी माता की मौत और अंत में स्वयं मदन की आकस्मिक मौत पाठकों को हिला देती है ।

"मुना-मदन" में मदन की मृत्यु की परिस्थिति के वर्णन में संभवतः कवि ने अपनी असामयिक मृत्यु का आभास दे दिया था।

देवकोटा जी ने जहाँ अपनी रचनाओं का प्रारंभ मंगलमुखी कविताओं से किया है, वहीं कवि अपने जीवन के उत्तरार्द्ध में भयंकर क्रांतिकारी, विकराल और उग्र रूप धारण कर लेता है। पागल, सांढे, दाल-भात-ढुकु, बाघे बच्चा किन खान्छ, प्रभुजी मलाई भेड़ो बनाऊ, झंझावीर और हुरी को गीत इन कविताओं में कविका उपरोक्त बदला हुआ रूप देखा जा सकता है।

स्व0 भवानी "भिक्षु"- इनका जन्म सन् 1914 ई0 में कपिलवस्तु (नेपाल) में हुआ था और मृत्यु सन् 1980 ई0 में काठमाण्डू में। स्व0 "भिक्षु" नेपाली के प्रतिभावान साहित्यकार थे। नेपाली के साथ-साथ वे हिन्दी, उर्दू में भी उतनी ही अच्छी रचना करते थे। खड़ी बोली हिन्दी से पहले उन्होंने कुछ कवितायें ब्रजभाषा में भी लिखी थीं। कविता के साथ-साथ इनके निबंध, कहानी एवं उपन्यासों ने नेपाली साहित्य की श्री वृद्धि की है।

"छाया", "प्रकाश" और "परिष्कार" भिक्षुजी के उल्लेखनीय कविता संग्रह है। "छाया" में हिन्दी के छायावाद का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। "प्रकाश" में प्रगतिवाद की भावना व्यक्त हुई। "परिष्कार" में मिली जुली रचनाएं हैं।

स्व0 'भिक्षु' सौन्दर्य, प्रेम और वेदना के कवि थे। इनकी कविताओं में प्रकृति वर्णन बड़ा ही सजीव है। इन्होंने रूढ़िवादिता को छोड़कर प्रकृति का मानवीकरण करते हुए, प्रकृति को प्रेमिका और विरहिणी के रूप में चित्रित किया है।

इस काल में क्रान्ति और प्रकृति चित्रण के कुशल कवि के रूप में आते हैं **श्री सिद्धिचरण श्रेष्ठ** (सन् 1912 ई0)। इन्होंने 'आकृति हो तर रूप विहीन, भाषा हो तर भाव विहीन' इन कठोर और व्यंग्य वाणोंसे राणा शासन का घोर विरोध किया। इसके लिए इन्हें जेल की यातना भी झेलनी पड़ी। "नेपाली हूं' कठिन गरिमा चढ्नलाई सिपालु" जैसी ओजस्वी देशभक्तिपूर्ण कविताओं से इन्होंने देश के नौजवानों को ललकारा। इनकी क्रान्तिकारी प्रवृत्ति का चरम विकास "रण का बाजा" तथा "क्रान्ति बिना शान्ति संभव छैन"" इन कविताओं में देखने को मिलता है। "जीवन चलिरहे छ" जैसी कविता में इनकी पलायनवादी प्रवृत्ति की भी झलक मिलती है। इसमें कवि न केवल वर्तमान से असंतुष्ट है अपितु उसे भविष्य भी अंधकारमय दिखाई देता है।

नेपाली साहित्य में कालिदास और रवीन्द्रनाथ ठाकुर की काव्यकला को लेकर अवतीर्ण हुए **श्री माधव प्रसाद घिमिरे** (सन् 1919 ई0)। गीत लिखने की इनकी विशेष रूचि है।

नेपाल में प्रजातान्त्रिक अभियान को बढ़ाने में आपने काफी योगदान दिया है। "यात्री" कविता में आपने अथक साधना और अविराम परिश्रम का संदेश दिया है। "गौरी" और "पापिनी आमा" आपकी विशिष्ट कृतियां हैं। शोक काव्य "गौरी" में करूण रस का चरमोत्कर्ष देखने को मिलता है। खण्ड काव्य "पापिनी आमा" में विधवा नारी की सामाजिक विवशता का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत

किया है। नारी को प्रेयसी, मां, बहिन, पुत्री के विविध रूपों में प्रस्तुत किया है। घिमिरे जी सहृदय एवं संवेदनशील कवि हैं। कवि ने छोटी-सी बात को सूक्ष्मता से देखा-परखा और कवि मन से काव्यात्मक पुट देकर चमत्कारी बना दिया है।

श्री सोमनाथ सिग्देल : इन्होंने नेपाली साहित्य को "आदर्श राघव" महाकाव्य से उपकृत किया है। संस्कृत को परम्परावादी शैली में लिखा गया यह ग्रंथ बहुत गहन, गंभीर और अंकारपूर्ण है। माघ और भारवि की शैली का यह ग्रन्थ लक्षण-शास्त्र की पृष्ठभूमि में लिखा गया है।

नेपाली साहित्य में तेजस्विता लिए हुए **श्री केदार मान 'व्यथित'** (जन्म सन् 1914 ई0) का राजनीतिक-कवितामय व्यक्तित्व है। छायावादी एवं प्रतीक शैली से प्रजातांत्रिक स्वर को सशक्त बनाने में आपका महत्वपूर्ण योगदान रहा है। रोमांटिक कवि के रूप में भी आप सफल रहे हैं। जनाकांक्षा की पूर्ति में अनेकानेक बाधायें आयीं और इन सबका प्रभाव नेपाली काव्य साहित्य पर भी पड़ा, फिर भी इन कवियों की काव्य-साधना में विश्वास का अभाव हो गया हो ऐसी बात नहीं। भविष्य के प्रति आस्था के बीज अंकुरित होने को आकुल होते रहे।

स्व0 **भीमनिधि तिवारी** का जन्म सन् 1918 ई0 की फरवरी में काठमांडू में हुआ था। ये उच्चकोटि के कवि होने के साथ-साथ बहुत अच्छे नाटककार भी थे। इन्होंने नेपाली साहित्य को सर्वाधिक ग्रंथ दिए हैं। साहित्य की सभी विधाओं में इनकी कलम चली है। अब तक इनकी लगभग 40 पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं जिनमें काव्य, नाटक, कहानी, निबंध, उपन्यास, गीत, भजन, गजल, कवितायें आदि हैं। इनका "यशस्वी शव" (काव्य) और "शिलन्यास" (नाटक) काफी चर्चित रहा है। "विस्फोट" काव्य पर इन्हें नेपाल के सर्वोच्च साहित्यिक "मदन पुरस्कार"

से सम्मानित किया गया था। इनकी कुछ कृतियों का रूसी, हिन्दी और संस्कृत में भी अनुवाद हुआ है।

नेपाली साहित्य की कविता, नाटक, उपन्यास, कहानी, निबंध आदि सभी विधाओं में लिखने वाले स्व0 भीमनिधि तिवारी का अपना अलग स्थान है। अपने समसामयिक साथियों द्वारा कटु आलोचना के पात्र बनने पर भी ये अपनी साहित्य—साधना से कभी विचलित न हुए और बराबर लिखते रहे। इनका कविता—संग्रह "काम्यो लुग्लुग त्यो" में समसामयिक सामाजिक स्वर प्रच्छन्न रूप में मुखरित हुआ है। करूण रस की कविता में भी ये काफी सफल रहे है। क्रांति के प्रमुख योद्धा के रूप में दिवंगत श्री 5 त्रिभुवन के सम्मान में ".यशस्वी शव" काव्य लिखकर क्रांति में अपनी आस्थ का परिचय दिया था। इस काव्य पर इन्हें पुरस्कार भी मिला था ।

आधुनिक काल के सशक्त कवि श्री विजय बहादुर मल्ल जी ने देशों की विभाजक रेखाओं को अस्वीकार कर एक विश्व की परिकल्पना की है। इन में धरती के प्रति गहरा लगाव दीखता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि वर्तमान युग वास्तविकताओं का काल है। इन दिनें काल्पनिक लोक की अपेक्षा धरती पर पैर जमाने में ही गौरव दीखता है। यह समय कुछ ऐसा है जिसमें मृत्यु—भय नहीं सताता बल्कि संघर्ष में जूझने को जन—मानस तैयार है, पर संघर्ष के क्रम में मानव का रागात्मक भाव अंतर्मुखी होकर दबा रहता है ।

क्रान्ति–उत्तरकाल–पूर्वार्द्ध

इस काल में नये और तरूण कवियों ने अपनी रचनाओं में निराशा, भय और भविष्य कीअनिश्चितताको व्यक्त करना आरंभ किया।

श्री वासु शशि को समय–समयपर एकान्त में जाकर अपने रूदन को पचाना पड़ा पर्यटकों की छाप भी जन–मानस पर पड़ी और युवा समाज वास्तविकता से घबड़ाकर हिप्पीवाद की प्रवृत्तियों से आकर्षित हुआ ।

साहित्य में जीवन प्रवाद अवरूद्ध होने की झलक दिखाई देने लगी इन भावों को विभिन्न प्रतीकों और बिम्बों के माध्यम से कवियों ने प्रकट किया है।

कुंठा, निराशा और भय–त्रास का जीवन स्थायी नहीं होता और इसमें परिवर्तन आना स्वाभाविक ही है। क्रांति के उत्तर काल के पूर्वार्द्ध में फैली इस मानसिक स्थिति में क्रमशः अन्तर आया और प्रगतिशीलता की ओर साहित्यकारों का झुकाव बढ़ा। क्रांति–उत्तरकाल का उत्तरार्द्ध आस्था, विश्वास और नव–निर्माण की उत्कंठाओं से भरा दिखाई पड़ा। यही नेपाली साहित्य की वर्तमान काव्य धारा है।

क्रांति–उत्तरकाल–पूर्वार्द्ध ।।

नेपाली जनक्रान्ति सन् 1950 ई0 में हुई और इसी के फलस्वरूप राणा शासन का अंत हुआ। इसके साथ ही नेपाली साहित्य में भी नयी क्रान्ति के दर्शन हुए। राष्ट्रीय भावनाओं से ओतप्रोत वातावरण में नयी पीढ़ी के कवि नवीन शैली, कथावस्तु और अभिव्यक्ति से साहित्य कको संवारने लगे। स्व0 म0वी0वि0 शाह की रचना में सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन के स्वर मुखरित थे। श्री विजय

बहादुर मल्ल ने बेटी को मानचित्र भेजते हुए रचना में राष्ट्रीयता की दीवार लांघकर अन्तर्राष्ट्रीय को अंगीकार करने का स्वप्न देखा। श्री मोहन कोइराला ने छंद, अभिव्यक्ति, शैली, उपमा–उपमेय में और विषय–वस्तु के सभी क्षेत्रों में नवीनता ला दी । श्री भूमि शेरचंद ने हास्य–व्यंग्य के माध्यम से जनमानस को झकझोरने की सफल चेष्टा की । श्री ईश्वर बल्लभ ने एक पुरातन युग के अंत की घोषणा कर कहा– "सूर्य अस्त हो चुका है"। इस समय छन्दबद्धता की परम्परा शेषप्राय: हो रही थी परन्तु यदा–कदा कुछ छन्दबद्ध अच्छी कतिवायें भी दीखती थीं। मानवीय मूल्यों की नयी परख आरंभ हो गयी थी । क्रांति–उत्तरकाल का पूर्वार्द्ध विषय वस्तुओं की विविधताओं के साथ आया और हर दिशा तथा हर क्षेत्र में नित नूतन अनुभूतियों को अभिव्यक्ति देने लगा।

प्रगतिवादी विचारधारा को सशक्त करने वालों में अग्रगण्य श्री मोहन कोइराला अपनी कविता में विषय–वस्तु और अभिव्यक्ति की दृष्टि से सर्वथा नवीन प्रयोगों के साथ सामने आये। मार्मिकता में वे अपने समय के अन्य कवियों को काफी पीछे छोड़ गये हैं। परम्परागत आदर्शों की अपेक्षा बुद्धिवादी निष्कर्षों का आदर्श ही इन्हें स्वीकार्य है। "आम भलाई वाच्न दे" रचना में उनकी इस प्रवृत्ति का अच्छा परिचय मिलता है। उपमा–उपमेय की नवीनता की दृष्टि से इस संकलन के 'कार्टून का शहर' भी देख सकते हैं।

नेपाली साहित्य के इस आधुनिक काल में मनुष्य द्वारा ही मनुष्य के चिन्तन की बात करना यथार्थ युग–बोध का अद्‌भुत दृष्टांत है।

स्वर्गीय हरिभक्त कटुवाल जी वर्तमान को वेदना और व्यथा से खोखला हो गया मानते थे इनकी दृष्टि में कांच की चूड़ियों और सस्ते चप्पलों के तुल्य इस जिन्दगी को कभी भी टूटने का खतरा था।

श्री रिजाल जी ने हास्य और व्यंग्य के तीखे प्रहारों से राजनीति के व्यवसायियों को कभी नहीं बक्सा साथ ही मौन बने जन–साधारण को भी उन्होंने अपना निशाना बनाया ।

नेपाली साहित्य में हास्य–व्यंग्यपूर्ण रचनायें कम ही लिखी गयी हैं पर जो भी रचनायें लिखी गयी हैं । उनमें श्री रिजाल की रचनायें उत्कृष्ट मानी जायेगी ।

श्री रत्न थापा ने जीवन को नये परिप्रेक्ष्य में देखा है और आशावान विचार दर्शन अपनाया है। श्री रत्न थापा का विश्वास है कि "एक लम्बे युग के पश्चात, एक बड़ी प्रगति के पश्चात, उपकार का ऋण दुलवाने के लिए तेजस्वी दिन आयेगा ।"

पिछले दशकों में नेपाली साहित्य में निराशा की जो झलक मिलती है, उसी के साथ आशा की किरणों के आभास भी होने लगे थे। तेजस्वी दिन आने की बात इसी ओर संकेत करती है।

अति यथार्थवादी यौन–भावना से अनुप्राणित रचनाओं के कवि के रूप में श्री हरि अधिकारी की चर्चा भी की जा सकती है।

श्री विष्णु विभू घिमिरे की यह कविता वर्तमान काल की परिवर्तित मनोदशा का परिचय देती है। सहभागी विश्व की परिकल्पना भी अब जोर पकड़ती जा रही है।

श्री 'अनुभवी जीव' शीर्षक रचना में श्री महेश प्रसाई ने गरीबी के साथ समझौता करने वालों के प्रति अपने विचार प्रकट किये हैं, वहीं सृजना के नाम नयी पीढ़ी में आस्था पनपी है, विश्वास बढ़ा है और सृजनात्मक भावनाओं को बल मिला है। आधुनिक काल के इस उत्तरार्द्ध में नेपाली साहित्य में विश्वास के साथ विकास की ओर बढ़ने की प्रवृत्ति जगी है।

क्रांति–उत्तरकाल–उत्तरार्द्ध

नेपाली काव्य साहित्य में वर्णित भय, संत्रास, निराशा के भाव कुछ ही वर्षों तक व्याप्त रहे। चेतना ने नयी करवट ली। कवियों ने इन भावों को नकारा और इनके स्थान पर आशा, आस्था और विश्वास का उदय होना आरंभ हो गया। नेपाली काव्य साहित्य में परिवर्तन के लिए अकुलाहट व्यक्त होने लगी।

श्री दिनेश अधिकारी ने पहाड़ को प्रतीक बनाकर सत्ताधिकारियों के घमण्ड की चर्चा की ।

श्री द्वारिका श्रेष्ठ ने प्रगति और सफलता के लिए सतत् प्रयत्नशील बने रहने और संघर्षशील रहने में आस्था व्यक्त की है। वे लक्ष्य की प्राप्ति के लिए स्वीकृति देते हुए कहते हैं :–

जब तुम अवतरित होकर आये
वन, पहाड़ की तलहटी पर्वत श्रेणियों और
युग ककी वैतरणी लांघ कर आये
यह अवतरण मेरा भी है

कहीं दूर–दूर एक स्वीकृति का, एक अर्थ का ।
यह अर्थ है गीता का
और यह स्वीकृति है एक धर्मयुद्ध की ।

वर्तमान युग
(सन् 1970 ई0 से अब तक)

नेपाली साहित्य का वर्तमान युग कुण्ठा, भय–त्रास, निराशा से छुटकारा पाने के साथ आस्था, विश्वास और निर्माण का आकांक्षावादी हो गया है। वर्तमान युग में युग, समय और समाज की विचारधारा के अनुकूल साहित्य में एक नवीनता का प्रादुर्भाव हुआ। कवि की कलम और खुली और उसने खुले हृदय से अपने उद्‌गार व्यक्त करने का साहस पाया । युग के विश्वव्यापी परिवर्तनों का प्रभाव नेपाल के साहित्यकारों पर भी पड़ा और उन्होंने व्यथित जनजीवन को एक व्यापक राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय पृष्ठभूमि में देखा और परखा। इससे पहले तो अपने सीमित दायरे में समस्याओं में जकड़े रहने से और सामाजिक व आर्थिक शोषण से त्रस्त रहने के कारण साहित्य में भय, त्रास, निराशा, कुण्ठा और चिंता की भावना झलकती थी । लेकिन वर्तमान युग में इतिहास के पन्ने पलटे। युवा साहित्यकार ने आस्था, विश्वास, सिद्धांत प्रेम, राष्ट्रीयता और निर्माण तथा विकास की उदात्त, भावनाओं से प्रेरित होकर निर्भीक लिखना शुरू किया। कल्पना सूखी नहीं, उसे तो पनपने को एक नया धरातल मिला और भविष्य की ओर साहस से, आशा से और नई मंगलमयकामना से देखने की प्रवृत्ति सशक्त हो गई।

साथ ही साथ साहित्यकार समाज को बदलता देखने के लिए बेचैन हो उठा। उसमें युवा हृदय का जोश उमड़ा और रोष भी और वह सब कविता,

कहानी, गद्य और पद्य में अभिव्यक्ति होने लगा। इस प्रकार नेपाली कविता को नया रूप मिलना शुरू हुआ, जिसमें मार्मिकता और भावुकता के साथ-साथ प्रखरता और यथार्थवाद ने प्रमुख स्थान पाया । आज का कवि लिख रहा है और खूब लिख रहा है- लम्बी कविताएं जिनमें जीवन के संघर्ष के प्रति वह अपना हृदय उड़ेल देने पर भी जैसे अघाता नहीं। यह वर्तमान युग की संक्रमण अवधि है। धीरे-धीरे इस प्रवृत्ति में कला का पुट निखरेगा, लेखन शैली को संवारा जायेगा, अभिव्यक्ति में निखर आयेगा। आज हो रहे प्रयोग नेपाली कविता में आने वाले एक नये युग की आहट मात्र है। आज के कवियों में लिखने की चाह और आतुरता है, विषय-चयन की विविधता है, जीवन की कसक है, और एक जवाबदार सामाजिक दृष्टिकोण है जो सृजनात्मक और रचनात्मक है।

साहित्य जीवन के प्रति जागरूक है। आकुलता और छटपटाहट व्यक्त हो रही है लेकिन उसके पीछे उदासीनता का तत्व नहीं बल्कि परिवर्तन लाने की मांग और आशा है। जीवन की समस्याओं से सम्बन्धित रोष है लेकिन जीवन के प्रति गहरी अनुभूति और संवेदनशीलता है, अभिव्यक्ति और लेखन शैली चौराहे पर है और नई दिशा की खोज में है। अन्य भाषाओं के साहित्य की प्रवृत्तियों के बारे में जानकारी की जिज्ञासा बढ़ रही है और आदान-प्रदान की इच्छा तीव्र हो रही है।

श्रीमती बेंजू शर्मा की कविता में युगों से कर्तव्यनिष्ठा की मूर्ति बनी 'नारी' ने अब अपने अधिकार के लिए भी सचेष्ट होकर धर्मयुद्ध का प्रारंभ चाहा है। श्री देवज्ञराज न्योपाने धरती पर स्वर्ग उतारने को आतुर हैं। श्रीमती मंजू दुबे "कांचुली" एक नये युग लाने के लिए स्थिर तैयारी में लगी हैं। श्री अशेष मल्ल

एक नये कर्मयोग के आकांक्षी होकर एक नये कृष्ण के आगमन की प्रतीक्षा में है। मानवीय मूल्यों को श्रेष्ठतम सम्मान देने को आज का नेपाली साहित्य तत्पर है।

आज का युवा नेपाली कवि अन्न, वस्त्र, दवा आहेर वासस्थान की समस्या को सुलझाना चाहता है। युग की समस्याओं से परिचित पीढ़ी समस्याओं का समाधान खोज रही है। अब न उनमें निराशा है और न भय–त्रास । अपने पौरूष पर विश्वास करने वाली नेपाल की नयी पीढ़ी सफलता के लिए साहित्य के क्षेत्र में भी सक्रिय हो गई है। इसी मनोभूमि पर आज के युग में नेपाली काव्य–साहित्य का निर्माण हो रहा है ।

श्री गोविन्द गिरि 'प्रेरणा' ने पर्यटकों के पीछे हाथ फैलाते काठमाण्डू की दशा पर गहरी चिन्ता व्यक्त की है। "जाड़े में काठमाण्डू" शीर्षक रचना में इन्होंने अपने आर्थिक विकास करने की प्रवृत्ति के अभाव में विदेशों से आर्थिक सहायता की निर्भरता पर तीखा व्यंग्य किया है।

नयी पीढ़ी के तरूण कवि श्री जीवन आचार्य ने वर्तमान युग की राक्षसी प्रवृत्ति पर करारा वार किया है।

श्री कृष्ण भक्त श्रेष्ठ ने अपनी कविता में छिपकली के प्रतीक द्वारा बहुत कुछ गहन गंभीर बात कहने की चेष्टा की है। प्रकाश के भूखों पर दाव लगार आक्रमण किया जाता है और उन्हें निगल लिया जाता है ।

"मिरजई, चुस्त पायजाता, कोट–टोपी" शीर्षक रचना में भी इन्होंने प्रतीकार्थ में ही अपनी बात कह डाली है। परम्परागत आवरणों को लोग अपने युगानुकूल बनाकर व्यवहार में लायें – श्री कृष्ण भक्त श्रेष्ठ जी यही कहना चाहते हैं ।

श्री चेतन कार्की उर्दू शायरी से प्रभावित दीखते हैं। विषय–वस्तु और कहने के तर्ज से भी वे उर्दू के निकट ही लगते हैं। एक शराबी जिस प्रकार शराब न पीने की कसमें खाकर भी मायखाना तक पहुँच ही जाता है, उसी प्रकार रसिकगण प्रेमिका के द्वार तक न जाने की कसमें खाकर भी अनायास वहीं पहुंच जाते हैं।

श्री विनोद अश्रुमाली ने मुक्तकों की भांति लघु कविताओं के माध्यम से अपनी मान्यतायें प्रकट की हैं। वे मनुष्य के दोनों रूपों को निकट से देखकर उससे प्रेम और घृणा दोनों ही करते हैं। वस्तुतः ये दोनों ही एक ही सिक्के के दो पहलू की भांति हैं। अतः हम इन्हें मानवता के प्रति, मनुष्य के प्रति, साकांक्षी देखते हैं। श्री अश्रुमाली जी मानव की उन्मुकता और स्वतंत्रता के पक्षधर हैं।

श्री वैरागी कांइला जी मनुष्य का दैन्य खतला है और वे "मदहोश मनुष्य का भाषण : आधी रात के बाद सड़क से" शीर्षक रचना में इसे उद्धृत किया है । श्री कांइला जी वस्तुतः परिवर्तन के पक्षपाती हैं। नये बिम्बों और प्रतीकों के माध्यम से वे नयी आस्था की स्थापना करना चाहते हैं।

इस प्रकार श्री वैरागी जी आस्था और प्रकाश के कवि प्रतीत होते हैं।

इस शोध में वर्तमान युग की कुछ रचनाओं को सामयिक संकलन सुविधा न होने के कारण शामिल नहीं किया जा सका। उस वजह से उनकी साहित्य-साधना का संक्षिप्त परिचय के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है। ये सब कवि अपनी शैली और अभिव्यक्ति-सामर्थ्य से साहित्य के कविता भण्डार को समृद्ध कर रहे हैं ।

श्री ध्रुव दुवाड़ी (1918 ई0)

"ज्वाला" और "हिमालय चुली" कविता संग्रह के कवि श्री ध्रुव दुवाड़ी की भाषा सरल और प्रवाहपूर्ण थी ।

श्री रामकृष्ण शर्मा (सन् 1921 ई0)

समीक्षकके रूप में जाने माने रामकृष्ण शर्मा की काव्य-कृति "बलिदान" "झ्याउरे" छन्द, लोक-छन्द, में लिखा मर्मस्पर्शी विरह का उत्कृष्ट उदाहरण है। लौकिक विरह वेदनामय इस काव्य में उमंग और भावुकता की गहराई है।

श्री श्यामदास वैष्णव (सन् 1922 ई0)

रोमांटिक भावनाओं से काव्यारंभ कर श्यामदास वैष्णव बाद में लोक-समस्याओं के प्रति रूचि लेते दिखाई पड़े और व्यष्टि को समष्टि में समाने की कामना की ।

श्री धर्मराज थापा :

कोमल कंठ के कारण धर्मराज थापा ने बड़ी ही लोकप्रियता प्राप्त की । "रत्न जुनेली" उनकी कविताओं का प्रसिद्ध संकलन है। नेपाली में छायावादी

प्रवृत्ति के अंतिम चरण के कवि के रूप में थापा जी की चर्चा तो हुई है पर वे अपने देश और मिट्टी के प्रति भी सजग रहे हैं। अंतः वे लोककवि के रूप में भी जाने माने गये हैं।

श्री माधव लाल कर्माचार्य :

"खरानी को थुप्रो" कविता संग्रह के कवि माधव लाल कर्माचार्य उमंग, उल्लास, सौन्दर्य, प्रेम, आशा, आस्था और विश्वास के कवि हैं।

श्री भीम दर्शन रोक्का :

प्रेम विषयक कवितायें लिखते हुए भीम दर्शन रोक्का जी प्रयोग और नयी कविता की ओर बढ़ गये हैं। देश-प्रेम सम्बन्धी कविता भी इनके द्वारा लिखी गयी है ।

श्री माधव प्रसाद देवकोटा (सन् 1903)

"होरी तरंग" के लोकप्रिय कवि और "हुस्सु पथिक" के प्रणेता माधव प्रसाद देवकोटा गंभीर भावों को सरल ढंग से प्रस्तुत करने में निपुण हैं, वार्णिक और मात्रिक छन्दों के प्रयोग भी करते हैं।इनकी रचनाओं में युग-बोध के उन्मेष मिलते हैं ।

श्री युद्ध प्रसाद मिश्र (सन् 1907 ई0)

"चरी" नाम के कविता संग्रह देने वाले युद्ध प्रसाद मिश्र माधुर्य गुण सम्पन्नता के साथ प्रकृति के प्रति विस्मय व्यक्त करने वाले कवि कहे जाते हैं। यथार्थता और मार्मिकता इनकी कविताओं में यथेष्ट है।

श्री ऋषभदेव (सन् 1913 ई0)

ऋषभदेव जी अपनी रचनाओं में प्रकृति के प्रति अनुरक्त, परम्परागत छन्दों के साथ मुक्त छन्द में लिखने के सुभ्यस्त तथा शैली में गीतात्मकता और प्रवाह देने वाले हैं। "मध्यान्ह" और "फूल" इनकी प्रसिद्ध रचनायें हैं।

श्री लक्ष्मी नन्दन (सन् 1913 ई0)

लक्ष्मीनन्द जी आर्थिक विषमता और राजनैतिक अत्याचारों के विरूद्ध स्वर बुलंद करने वाले कवि होने के नाते राणाओं के कोपभाजन बनने वाले कवि की श्रेणी में आते हैं ।

श्री गोपाल पाण्डेय (सन् 1913 ई0)

श्री गोपाल पाण्डेय जी भावना प्रधान कवि के रूप में जाने जाते हैं जिन्होंने वार्णिक छन्द के साथ मुक्त छन्द को भी अपनाया। "बिजुली कविता", "कवि बसंत को बगैया" इनकी प्रसिद्ध कवितायें हैं ।

श्री श्यामराज (सन् 1913 ई0)

श्री श्यामराज की कविताओं में मानवीय जीवन दर्शन के उन्मेष मिलते हैं। इनकी अधिकतर कविताओं में वार्णिक छन्दबद्धता है।

श्री भेषराज पाण्डेय (सन् 1915 ई0)

श्री भेषराज पाण्डेय जी ने प्रकृति चित्रण को अपनी कविताओं का आधार बनाया है।

श्री गोविन्द प्रसाद ढुंगाना (सन् 1918 ई0)

ये अल्पायु हुए फिर भी ये पुरानी विचारधारा की बातें नये ढंग से कह गये । "बिजुली" और "अभिलाषा"इनकी अत्यधिक लोकप्रिय कवितायें हैं।

श्री कृष्ण चन्द्र सिंह प्रधान (सन् 1920 ई0)

श्री कृष्ण चन्द्र सिंह प्रधान की कवितायें मार्क्सवादी विचारों से प्रभावित तथा प्रचारात्मक हो गयी हैं ।

श्री जनार्दन सम :

श्री जनार्दन सम की कवितायें विचार प्रधान कही गयी हैं जिन पर सौंदर्य प्रेम, वेदना और निराशा की थोड़ी सी छाप पड़ी हुई है।

श्री कुलमणि देवकोटा :

श्री कुलमणि देवकोटा की कविताओं का संग्रह है– "छरिएका फूल– सुन्दर शब्द–विन्यास, विचार गांभीर्य और हास्योक्ति इनकी कविताओं की विशेषता कही गयी है। इन्होंने नेपाली साहित्य में अच्छा योगदान दिया है।

श्री आनन्द देव भट्ट :

श्री आनंद देव भट्ट की कवितायें ओजस्वी और आग उगलने वाली होती हैं। अनोखी अभिव्यंजनाओं और सटीक व्यंग्य से भट्ट जी झकझोर देते हैं। फड़कती हुई भाषा में अनुभूति को व्यक्त करने में ये सिद्धहस्त हैं। नेपाली जन–जीवन की जर्जरता को इन्होंने सबसे बढ़कर दिखा दिया है। हृदय की अपेक्षा

बुद्धि को ये अधिक स्पर्श करते हैं। इनकी कविताओं में देश–प्रेम, श्रृंगार और दार्शनिक चिन्तन के चिन्ह भी मिलेंगे ।

श्री टेक बहादुर नवीन :

श्री टेक बहादुर जी प्रगतिवादी कवि के रूप में आगे आ चुके हैं। "चोईटा" नाम से इनकी कविताओं का संग्रह प्रकाशित हो चुका है।

श्री कुमार नेपाल :

इन्होंने प्रतीकों में माध्यम से बहुत कुछ कहने की सफल चेष्ठा की है। इनी कविताओं का संग्रह है – "चर्की पर्खाल" । इनकी कविताओं में युग–बोध और कहीं–कहीं यौन भावनाओं की अभिव्यक्ति हुई है।

श्री वीरेन्द्र सुब्बा की कविताओं का संकन "मेघमाला" है। ये दार्जिलिंग के निवासी हैं। युग की निराशा और दुरव्यवस्थाओं का दिग्दर्शन इनकी रचनाओं में मिलेगा ।

श्री महानन्द सापकोटा ने अपनी कविताओं में नेपाली भाषा के प्रयोगको महत्वदेर विदेशी भाषा के शब्दों को बहिष्कार करने की नीति अपनायी है। इस कारण इन्हें शब्दों को काफी तोड़ना–मोड़ना पड़ा। इन्होंने व्यंग्य के माध्यम से बात साफ–साफ कह डाली है।

श्री चितरंजन नेपाली (सन् 1931)

श्री चितरंजन नेपाली केवल नेपाली भाषा ही के कवि नहीं बल्कि इन्होंने नेवारी भाषा में भी रचनायें की हैं। साहित्य के अतिरिक्त अन्य विषयों पर

भी इनकी पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। इनका वास्तविक नाम है एन0पी0 राजभंडारी।

श्री बालकृष्ण पोखरेल (सन् 1933)

बालकृष्ण पोखरेल "शान्ति–सेना" नामक कविता संग्रह के कवि हैं। नवीन विषय–वस्तु को सीधी सादी शैली में कहने वाले कवि पोखरेल की अपनी अलग ही विशेषता है ।

कवयित्री पारिजात :

कवयित्री पारिजात की "आकांक्षा" नामक कविता–संग्रह (सन् 1957 ई0) देने से पूर्व ही पत्र–पत्रिकाओं में आ चुकी है। इन्हें डा0 वासुदेव त्रिपाठी ने "व्यथा की मधुर कोयल" कहा है। मन को छूनेवाली पीड़ाओं को सरल प्रवाहपूर्ण ढंग से गानेवाली इस कवयित्री का जन्म दार्जिलिंग में हुआ है, पर ये काठमांडू में रहने लगीं। इनकी कविताओं पर बौद्ध धर्म का प्रभाव भी दिखता है।

श्री तुलसी दिवस के नाम से जाने–माने कवि का पूरा नाम तुलसी प्रसाद जोशी हैं। छात्र–जीवन में पुरस्कृत होने से कविता के क्षेत्र में ये अधिकाधिक उत्साह से आगे बढ़े । बुद्धिवादी रचनाओं में सामाजिक विषमताओं का उल्लेख इनकी विशेषता रही है।

श्री मोदनाथ प्रश्रित : सन् 1942 ई0 में "मानव" महाकाव्य के माध्यम से "मदन पुरस्कार" प्राप्त कर चुके हैं। वे विश्व–विभाजक रेखाओं को नहीं मानकर संपूर्ण मानवता के लिए अपनी रचनाओं में मुखर हैं।

श्री बटु कृष्ण खड़का (सन् 1941 ई0)

श्री बटु कृष्ण जी व्यवसायिक रूप से अभियंता हैं, फिर भी आप सुन्दर कवितायें लिखते हैं और यदा कदा पत्र-पत्रिकाओं में आपकी रचनायें देखने को मिलती हैं ।

आधुनिक काल में काव्य शैली

नेपाली साहित्य की गीति-विधा में लिखने वाले बहुत ही कम कवि हैं। इसका मुख्य कारण मुक्त छन्द में लिखने की सुविधाजनक नयी परम्परा है। गीति-विधा में सर्वथा गेय गीत और साहित्यिक गीत में थोड़ी भिन्नता है। इस ग्रंथ में कुछ ऐसे गीत अनुवाद के लिए चुने गये हैं जो साहित्यिक दृष्टि से भी उत्कृष्ट हैं और साथ ही उनमें गेयधर्मिता भी है। इन गीतों में कुछ रेडियो नेपाल से संगीतबद्ध होकर प्रसारित होते रहे हैं तो कुछ साहित्यिक कार्यक्रमों में प्रसारित हुए हैं।

श्री माधव प्रसाद घिमिरे की रचनाओं में, गीतों में, हम नेपाली लोककंठ में बसी "झ्याउरे" धुन की मधुरिमा पाते हैं। इनके छोटे-छोटे गीतों में भावनाओं की गहराई है। ये गेय गीतों में भी सहज ढंग से कुछ ऐसी बातें कह जाते हैं, कुछ ऐसे संकेत कर देते हैं जिस पर सोचने को मन बार-बार विवश होता है।

नेपाली की गीति-विधा में लिखने वालों में स्व0 म0वी0वि0 शाह का नाम विशेष गौरव के साथ लिया जाता है। रेडियो नेपाल से प्रसारित इनके गीत बड़े ही लोकप्रिय हुए हैं। इनके देश-प्रेम, लौकिक प्रेम तथा ईश्वर भक्ति के पद बड़े मर्मस्पर्शी हैं ।

साहित्यिक गीतों, गेय गीतों, संगीत रूपकों, संगीत कथाओं के कवि श्री अनन्त बिहारी लाल दास "इन्दु" ने रेडियो और फिल्म लेखन कार्य कर लोकप्रियता प्राप्त की है। रेडियो नेपाल से इनके साहित्यिक गीत प्रसारित होते रहे हैं। इन गीतों में मैथिली की लोक-धुन का मिश्रण माधुर्य और रस बखूबी ले आया है।

श्रीमती चाँदनी शाह के सुकोमल और सुमधुर गीत रेडियो नेपाल से बराबर प्रसारित होते रहे हैं। इनके गीतों में नारी हृदय की रागात्मक अनुभूति मुखरित होती रहती है। मातृत्व का स्नेह, देश-प्रेम की भावना और प्रकृति की सुन्दरता को इन्होंने अपने गीतों में मुखरित किया है।

श्री राजेन्द्र थापा का नाम लोकप्रिय गीतकार कवि के रूप में लिया जाता है। "पोहर सा खुशी फाट्दा..." शीर्षक गीत बहुत मर्मस्पर्शी बन पाया है।

संगीतबद्ध रचनाओं के विषय में बहुत कुछ कहा जा सकता है। इसकी चर्चा करते समय उसके साहित्यिक पक्ष को अधिक उजागर नहीं कर, संगीत पक्ष की विशद विवेचना युक्ति-युक्त होगी।

आधुनिक काल में यद्यपि मुक्तछन्द में ही लिखने की ओर अधिकांश कवि तत्पर रहे हैं, फिर भी यदा-कदा कुछ कविगण छन्दबद्ध रचना भी करते रहे हैं। छन्दबद्ध रचनाकार प्रायः संस्कृत और हिन्दी छन्दों के ज्ञाता हैं। श्री भरत राज पंत ने छन्दबद्धता से अपने को आबद्ध कर रखा है। "भिखारी", "राष्ट्रगान" तथा "नयन की उपमायें" मूल नेपाली में छन्दबद्ध हैं और इनका अनुवाद भी छन्दबद्ध रूप में ही प्रस्तुत किया गया है। उनकी कविताओं की विषय-वस्तु में विविधता

है और इन्होंने प्रगतिशील भवनाओं को लेकर "भिखारी" कविता की रचना की है। "राष्ट्रगान" राष्ट्रीय भावनाओं के अनुकूल है और "नयन की उपमायें" काव्य-कल्पना कौशल का परिचायक है ।

श्री नीर विक्रम प्यासी जी छन्दबद्ध रचना के साथ मुक्तछन्द में भी लिखते रहे हैं। इनकी रचनाओं में विषय-वस्तु की विविधता के साथ प्राकृतिक सौन्दर्य और मानवीय संवेदनाओं के सहज वर्णन हुए है।

श्री कंचन पुडासैनी मुख्यरूप से छन्दबद्ध कवितायें लिखा करते हैं। इनकी प्रकाशित कृतियां इस बात के प्रमाण हैं। यों इन्होंने मुक्तछन्द में भी रचना की है। छन्दबद्ध रचनाओं में कहीं-कहीं तुक या अनुप्रासों के व्यामोह भी परिलक्षित होते हैं।

डा0 वासुदेव त्रिपाठी ने संस्कृत छन्दों का मोहक प्रयोग कर नेपाली साहित्य को समृद्ध किया है। "वसंत" और "क्या लब्धि कहूं क्या शेष कहूं" शीर्षक रचनाओं में त्रिपाठी जी ने पद-लालित्य के साथ शब्द-विन्यास पर भी जोर दिया। राग-रंग-बसंत सम्बन्धी उनकी रचनायें निश्चित रूपेण मर्मस्पर्शी बन पायी हैं।

श्री ददेवजराज न्यौपाने जी की रचनाओं में राष्ट्रीय भावनायें और प्रेमाभिव्यक्ति सहज रूप से मिलती है। इन्होंने फूल और कांटें दोनों के महत्व को स्वीकारा है। इनकी रचनाओं में परम्परागत उक्तियों का समावेश भी मिलेगा। अनास्था से दूर विश्वास औन नवनिर्माण की प्रवृत्तियों को पल्लवित-पुष्पित करने वालों में हम इनका नाम भी आदर के साथ ही लेंगे। इनमें वैचारिक संकीर्णता के स्थान पर उदारतापूर्ण सम-भावना की झलक मिलेगी।

नेपाली साहित्य के वर्तमान काल में जिन कवि की कृतियों में विश्वासपूर्वक निर्माण की प्रवृत्तियां जमी हैं उनमें श्री देवज्ञराज न्यौपाने जी भी एक हैं।

नेपाली साहित्य के आधुनिक काल के वयोवृद्ध कवियों की रचनाओं में छन्दबद्धता तो है ही साथ ही कुछ एक प्रौढ़ कविगण भी छन्दबद्ध रचना करते रहे हैं। छन्दबद्ध रचनाकारों में गीतकार भी हैं जैसे– श्री माधव प्रसाद घिमिरे, स्व0 म0वी0वि0 शाह, अ0वि0 लाल दास 'इन्दु' तथा श्रीमती चांदनी शाह का उल्लेख यथास्थान किया गया है।

समसामयिक कविता ने सर्वप्रथम अपने को छन्द के बन्धनों से मुक्त किया। इस छन्दबद्धता से छुटकारे के साथ ही कविता गद्य रूप में अवतरित हुई है। रिमाल जी की कविता "कविको गान" रचना को प्रथम गद्य कविता माना गया है। नेपाली जनक्रांति के बाद के युग को गद्य काव्य का युग कहा गया है। इन दिनों छन्दबद्ध रचना करने वाले कवि बहुत कम हैं। शास्त्रीयता से मुक्त होकर आज के कवि अपने ढंग से लिखने लगे हैं और किसी एक पद्धति या प्रणाली के अन्तर्गत वे नहीं आते। इनका आदर्श पाश्चात्य कवि हो गये हैं। कहीं–कहीं पश्चिमी भाषा के शब्दों के भी प्रयोग इनकी रचनाओं में मिलते हैं। नये प्रतीकों और बिम्बों की खोज भी इन कवियों ने की है ।

पहले प्रणय निवेदन सीधा नहीं किया जाता था, अब यह बात नहीं रही। कवि अपनी प्रियतमा को सीधे प्रणय निवेदन करते दीखते हैं। रिमाल जी और विजय बहादुर मल्ल जी की रचनाओं में ये बातें स्पष्ट दीखती हैं। तरूण कवि भी इसी राह पर चलते नजर आते हैं। आज की कविता की विषय–वस्तु अतिरिक्ता में ही उलझी नहीं रही बल्कि वह देश की सीमा लांघकर अंतर्राष्ट्रीय

क्षेत्र में पहुंच चुकी है। भूपि शेरचन की रचना "हो चि मिन्हलाई चिट्ठी", स्व0 बालकृष्ण सम, स्व0 भवानी भिक्षु, श्री केदारमान "व्यथित" तथा श्रीमाधव प्रसाद घिमिरे की रचनायें नेहरू और गांधी जी पर देखने को मिलती हैं। आज की नेपाली कविता की जड़ शहरी क्षेत्र में जमी दीखती है। शहरी जीवन के दु:ख-दैन्य, गंदगी, फूहड़पन, अभिशाप और अव्यवस्था की झलक आज की कविता की विषय-वस्तु बनी है। हम यह भी कह सकते हैं कि आज की कविता न तो उपदेशात्मक है और न रीतिकालीन परम्परा से प्रभावित । रीति-प्रीति की बातें भी नये परिवेश में, फ्रायड के मनोवैज्ञानिक परिवेश में या सीधी तरह कह दी है। रोमांटिक कवियों की शैली में अमूर्तता, सांकेतिकता और ध्वन्यात्मकता भी परिलक्षित होती है। शैली में नवीनता, विविधता और प्रयोगात्मकता दीखती है। श्री मोहन कोइराला इस रूप में विशेष उल्लेखनीय हैं।

आधुनिक काल के पूर्वार्द्ध के अंत तक, प्राय: दो-तीन दशक पूर्व तक जनाकांक्षा की परिपूर्ति के अभाव में गहरी निराशा का वातावरण बना और कवियों के स्वर में स्वर मिलाकर कवयित्रियों ने निराशापूर्ण भावनायें ही व्यक्त कीं।

– उपसंहार –

नेपाली भाषा का साहित्य प्रारम्भ से ही कविता-प्रधान रहा है। नेपाली कविता के दो सौ वर्षों का विश्लेषण वस्तुत: पूरे साहित्य की प्रवृत्तियों, धाराओं, उतार-चढ़ाव और उभरती शैलियों और अभिव्यक्ति-शक्ति प्रतिबिम्बित करता है । नेपाली भाषा अभिव्यक्ति की दृष्टि से सशक्त हो गई हैं। भाषा को कवियों और कवयित्रियों ने संवारा है, सजाया है और परिष्कृत तथा परिमार्जित किया है।

गूढ़ भावों को जीवन की बेबसी को, जीवन की उत्कंठाओं को, जीवन की व्यथा को और जीवन में चिर–व्याप्त आशा को नेपाली कविता ने बखूबी व्यक्त किया है। नेपाली कविता का अतीत प्रेरक रहा है और वर्तमान चुनौती भरा । कई घाटियों और पर्वतों को लांघ कर काव्य धारा बही है, और बहती जा रही है। नेपाली कविता का भविष्य उज्ज्वल है। युवा कवियों से बड़ी अपेक्षायें हैं। आशा ही नहीं अपितु विश्वास है कि वे व्यापक दृष्टिकोण की पृष्ठभूमि में साहित्य सृजन करते रहेंगे। ऐसा साहित्य और ऐसी कविता जो भावना, शैली और कला में केवल राष्ट्रीय नहीं बल्कि अंतर्राष्ट्रीय बने और नेपाली कविता की अमिट छाप विश्व कविता पर पड़े ।

****

छठा अध्याय

नेपाली और भोजपुरी ध्वनि प्रकरण

ध्वनि – प्रकरण

नेपाली तथा भोजपुरी के तुलनात्मक अध्ययन के लिए संक्षेप में दोनों भाषाओं के ध्वनिग्रामों अर्थात् स्वनिमों का विवेचन आवश्यक है। भिन्न–भिन्न विद्वानों के द्वारा विवेच्य भाषाओं की ध्वनियों के अब तक के जो अध्ययन प्रस्तुत किए गए हैं, उनमें सर्वत्र एकरूपता नहीं मिलती, ऐसी स्थिति में हमारे लिए उन मत–मतान्तरों में पड़कर उनसे भिन्न कोई स्वतन्त्र निष्कर्ष देना संभव नहीं था, इसलिए हमने दोनों भाषाओं के अधिकारी विद्वानों में से एक को चुन लिया है। वस्तुतः हम जिन दो विद्वानों के विवेचन को नीचे उद्धृत कर रहे हैं, उनके चुनाव का एकमात्र कारण उनके विवेचन का संक्षेप में एकसाथ उपलब्ध होना ही रहा है ।

नेपाली के ध्वनिग्रामों का विवेचन हमने नेपाली के प्रसिद्ध विद्वान श्री चूड़ामणि उपाध्याय रेग्मी की "नेपाली भाषा को उत्पत्ति" शीर्षक पुस्तक से तथा भोजपुरी के ध्वनिग्रामों का विवेचन डा0 उदयनारायण तिवारी की पुस्तक "भोजपुरी भाषा और साहित्य"से ग्रहण किया है ।

---

1. (a) A minimum unit of distinctive sund feature(Bloom Field-Language P.F.)

   (b) A Phenemeis a class of Phenemeisty similar sunds contrasting and mutually exclusive with all similar classes in the languaye. (Block and Trager-An outline of Linguistic Analysis pp. 40).

नेपाली – स्वरवर्ण[1]

नेपाली भाषा के स्वरवर्ण निम्नलिखित हैं–

इ		उ
ए	अ	ओ
	आ	

नेपाली भाषा के व्यतिरेकी स्वरवर्ण ये ही हैं। नेपाली में ह्रस्व और दीर्घ स्वर में भी व्यतिरेक न होने के कारण इ और उ भी एक ही तरह के हैं। ध्वनि–तात्विक दृष्टि से किसी स्वर के उच्चारण में कम और किसी स्वर के उच्चारण में ज्यादा समय लगता है, और कुछ शब्दों में अर्थ की दृष्टि से दो रूप (अभिलो, अभीलो, सेतो, सेऽतो, कालो, काऽलो) हो सकते हैं लेकिन इसी आधार पर दीर्घता को वर्ण के स्तर पर स्वीकार नहीं किया जा सकता। वैसे सभी नेपाली स्वर अनुनासिक हो सकते हैं, अलग अर्थ में जैसे त, तँ, बास, बाँस, गाउ, गाउँ इत्यादि दूसरे अनुनासिक स्वर के आगे पीछे आने पर वा नासिक्य वर्ण के साथ आने पर उच्चारण में स्वर में अनुनासिकत्व जोड़ा जाता है। श्वसित व्यंजन ध्वनि के साथ उच्चरित स्वर भी श्वसित होते हैं। नेपाली स्वरों के इस संक्षिप्त वर्णन में स्वर के ध्वनि–तात्विक भेदों की चर्चा यहां नहीं की गयी है।

अ – यह केन्द्रीय, मध्य और अगोलित स्वर है। (नेपाली के कुछ भाषिक क्षेत्र में) यह पद के आदि, मध्य और अन्त में पाये जाते हैं ।

खल, कर, अगर, त, जन्म, खर, घर, तल ।

---

1. श्री चू०उ० रेग्मी – नेपाली भाषा को उत्पत्ति, पृ० 81.

आ – यह केन्द्रीय, निम्न और अगोलित स्वर है। किसी स्थिति में दूसरे वर्ण के साथ आने पर यह आगे के तरफ बढ़ सकता है। यह पद के आदे, मध्य और अन्त सभी स्थिति में मिलते हैं ।

आभा, खाल, खार, बाला, धान, मामा ।

इ – यह अग्र, उच्च और अगोलिक स्वर है। लिखित भाषा में इ, ई दोनों का ही प्रयोग मिलता है फिर भी बोलचाल में ऐसा भेद नहीं है। यह शब्द के शुरू, मध्य और अन्त में पाये जाते हैं –

ईच्छा, ईश्वर, खीर, खील, दिदी, यही ।

उ – यह पश्च, उच्च और गोलित स्वर है। इ की तरह इसके भी लिखित साहित्य में उ, ऊ दोनों रूप प्रचलित हैं, फिर भी नेपाली में उच्चारण में सामान्यतः एक ही किस्म का प्रयोग होता है । यह शब्द सभी स्थिति में आते हैं।

उता, हलो, खुल, खुर, घुलो, ढुटो, कुरा ।

ए – यह अग्र, मध्य और अगोलित स्वर है। यह शब्द की सभी स्थितियों में मिलता है ।

एक, देउता, खेल, खेर, पाले, जाले ।

ओ – यह पश्च, मध्य और केन्द्रीय स्वर है। यह पद के शुरू, मध्य और अन्त में आते हैं ।

ओखर, खोल, खोर, जाओ, कालो ।

संयुक्त स्वर[1]–

मूल स्वरों के मिश्रित रूप में दो स्वरों के एक साथ उच्चारण होने को संयुक्त स्वर कहते हैं। नेपाली स्वरों के साथ में ऐ और मूल स्वर की तरह ही पढ़ा जाता है लेकिन इनको संयुक्त स्वर कहना ही उचित है। वैसे ऐसे स्वरों की प्रवृत्ति मूल स्वर की तरह ही है। कैले (कहिले) ऐसे (अहिले) है न (होइन) धोता (देवता) चौटा (एउटा) कौन (कउन) आदि। लेकिन ये सब संयुक्त स्वर के रूप में ही ज्यादातर उच्चरित होते हैं ।

(क) ऐ (अइ) इसमें अ और इ का मिश्रण है।

ऐसेलु, पैसा, जनै ।

(ख) औ (अउ) में अ और उ की सन्धि स्पष्ट है।

औला, पौल, तोल, की ।

इसके अलावा दो स्वर एक ही जगह में होने के उदाहरण भी नेपाली में बहुत मिलते हैं ।

अइ– गइ, भइ, चइत, भइलो ।

अए – गए, भए, सए ।

अउ – अउलो, भउलो, पउल, चउर ।

आओ – आओ, जाओ, खाओ ।

आइ – भाइत, साइत ।

---

1. श्री उ0च0 रेग्मी – नेपाली भाषा को उत्पत्ति, पृ0 82.

आई – मराई, खाई, आई ।

आउ – भाउ, राउत, आउलो ।

आए – धाए, गाए, कराए, सुनाए ।

आओ – गाओ, जाओ ।

इए – भनिए, गरिए, सुनिए, बसिए ।

इउ – विउ, जिउ ।

उआ – गेरूवा, हसवा, जुआड़ी ।

उइ – उइले (उहिले), उइ (उही)

उए – कुएको, तुएको (कुहेको, तुहेको) ।

एइ – च्ये (चेइ) गरिनेइ (गरिन्ये) छ ।

एउ – भेउ, एउटा ।

ओइ – ओइलिनु (बैलिन) पोइ, खोइ।

अनुनासिक स्वर[1]–

अनुनासिक स्वरों के उच्चारण विधि निरनुनासिक स्वरों के जैसा होने पर भी भिन्नता है । अनुनासिक उच्चारण में उच्चारण करने पर बाहर निकलने वाली हवा कुछ मात्रा में नाक से भी निकलती है। नेपाली भाषा के सभी स्वर अनुनासिक बन सकते हैं ।

अँ – अँध्यारी, अँगार, अंगालो, तँ ।

आँ – आँखा, आंसु, डाँडा ।

---

1. श्री चूड़ामणि उपाध्याय रेग्मी – नेपाली भाषा की उत्पत्ति, पृ0 83.

ईं –	अईंसी (भैंसी) यहीं, इंट ।
ऊँ –	गाउँ, नाउँ, अउँठी (औंठी), जाऊँ ।
ऐं –	गएँ, भएँ, गाएँ, पाएँ, वेंसी ।
ओं –	ओंठ, खोंच ।

नेपाली व्यंजनवर्ण[1]–

नेपाली भाषा के व्यंजन वर्ण निम्नलिखित हैं –

प्	त्	ट्	च्	क्
फ्	थ्	ठ्	छ्	ख्
ब्	द्	ड	ज्	ग्
भ्	ध्	ढ्	झ्	घ्
म्	न्			ङ्
	स्			ह्
	ल्	र्	य्	
व्				

नेपाली भाषा के सभी व्यंजन वर्णों के उच्चारण भीतर से बाहर निकलने वाले श्वास की सहायता से होता है। यहां नेपाली व्यंजन के स्थान और घोशता और प्राणत्व के सम्बन्ध में सामान्य वर्णन करते हुए उनके वितरण के बारे में संक्षिप्त चर्चा की जाती है । नेपाली के घोष महाप्राण वर्णों को ध्वनि तान्त्रिक दृष्टि से श्वसित व्यंजन भी कहा जा सकता है और पद के सभी स्थिति में

---

1. श्री चूड़ामणि उपाध्याय रेग्मी – नेपाली भाषा को उत्पत्ति, पृ0 84.

उनके वितरण दिखाने पर भी स्वरमध्यगत अवस्था में और पदान्त में वे अल्पप्राण वर्ण के रूप में उच्चरित होते हैं। इस प्रकार बाघ्, साझा, पढ़नु, वाघ्नु, गाम्नु का उच्चारण बाग, साजा, पड़नु, गावनू, वांदनु होता है। उपरोक्त तालिका भा, नहीं, आए हुए" कतिपय वर्णों की चर्चा संक्षेप में इस प्रकार है। क् ख् ग् घ्.....

ये कण्ठ एवं स्पर्श व्यंजन हैं। इन व्यंजनों का उच्चारण करते समय जीभ के पिछले से तालु को स्पर्श करता है। इसमें पहला और दूसरा अघोष एवं तीसरा और चौथा सघोष तथा पहला और तीसरा अल्पप्राण और दूसरा और चौथा महाप्राण ध्वनि है। ये व्यंजन पद के आदि, मध्य और अन्त में आते हैं ।

क् – कदम, काको, नाक् ।

ख् – खन्ती, पर्खाल, राज् (नु) ।

ग् – गार्व, सगुन, मन (नु) ।

घ् – घर, संघार, बाघ् ।

च् छ् ज् झ्........

ये दन्तमूलीय एवं स्पर्श संघर्षी ध्वनि हैं। इनका उच्चारण करते समय जीभ के अग्र भाग से दन्तमूल को धक्का लगता है। इसमें पहला और दूसरा अघोष एवं तीसरा और चौथा घोश ध्वनि है और पहला और तीसरा अल्पप्राण तथा दूसरा और चौथा महाप्राण ध्वनि है। ये व्यंजन ध्वनि पद के शुरू मध्य और अन्त में आते हैं ।

च् – चिनो–विचारी, नाच ।

छ् – छाता, कछुआ, बछ ।

ज् – जात, बिजली, लाज्।

झ् – झाड़, सरझा, सांझ ।

त् थ् द् ध् ....

ये दन्त्य और स्पर्श व्यंजन है। इनका उच्चारण करते समय जीभ ऊपर के दांत को धक्का देती है। इसमें स और थ अघोष और द घ घोष्य ध्वनि एवं त द अल्पप्राण थ घ महाप्राण ध्वनि हैं। ये सभी धनि पद के आदि, मध्य तथा अन्त में मिलते हैं ।

त् – तार, बतास, बात् ।

थ् – थलो, पत्थर (पाथर), माथ् ।

द् – दही, कदम्, दूब् ।

ध् – धन, पंधेरो, सोंध (नु) ।

ट् ठ् ड् ढ् – ये मूर्धन्य स्पर्श व्यंजन हैं। इन व्यंजनों का उच्चारण करते समय जीभ का अग्रभाग जरा घूमकर कठोर तालु को धक्का देता है। इनमें ट् ठ् अघोष ड ढ घोष तथा ट् ड् अल्पप्राण और ठ ढ महाप्राण व्यंजन हैं। यह सभी पद के आदि, मध्य और अन्त में मिलते हैं। पद के मध्य और अन्त में ड ढ ताड़ित होते हैं ।

ट् – टट्टू, काट (नु)

ठ् – ठट्टा, बैठक, काठ

ड् – डर, डँडाल, ढाड्

ढ् – ढावनु, पढ़नु ।

प फ ब भा – ये द्वयोष्ठय स्पर्श व्यंजन हैं। इन ध्वनियों के उच्चारण करते समय ओठ जुड़ जाते हैं। इनमें प फ अघोष और ब भ घोष, प, ब अल्पप्राण और फ भ महाप्राण व्यंजन हैं। पद के आगे मध्य औरअन्त में ये वर्ण मिलते हैं ।

प् – पानी, कपास, पाप ।

फ् – फालो, काफल, बाफ् ।

ब् – बांस, गोबर, दब् ।

भ् – भर, जिभो, गाभ् (नु)।

ङ् ञ् ण् न् म् – ये अनुनासिक व्यंजनों में ञ् और ण् का उच्चारण कथ्य नेपाली में नहीं होते । सिर्फ लिखाई में ही इनका प्रयोग होता है। ञ् का प्रयोग यँ का जगह में पहले होता था, जैसे–आज्ञां, आञ्, सपिञें । ण का उच्चारण डँ के रूप में कहीं–कहीं किया जाता है और ये तत्सम् शब्दों में आते हैं। ये सभी अनुनासिक व्यंजनों के उच्चारण करते समय मुख के साथ नाक से भी साँस निकलता है ।

ङ् कण्ठ अनुनासिक घोश व्यंजन है। नेपाली में ये ध्वनि पदादि में कुछ शब्द में मिलते हैं, लेकिन मध्य और पदान्त में भी विशेष रूप से मिलते हैं। ङ्, यरि, डिच्च, कड़गाल, आङ ।

म् – अल्पप्राण, घोष, द्वयोष्ठय अनुनासिक व्यंजन है। इसका उच्चारण करते समय दोनों होठ मिल जाते हैं। यह पद के शुरू मध्य और अन्त में मिलते हैं। माउ, काम्लो, कम् ।

ड़ – (रह–ढ) ल (हल)

यह लुण्ठित, वर्त्स्य, घोष, अल्पप्राण्ण ध्वनि है। यह पद के सभी स्थल में आते हैं। यह लुण्ठित वर्त्स्य घोष महाप्राण ध्वनि है। यह ध्वनि नेपाली की तरह ब्रज, अवधी और भोजपुरी भाषा में मिलते हैं। उत्तर–मध्यकालीन नेपाली में यह ध्वनि मिलता था। आधुनिक नेपाली में यह ध्वनि ढ से विकसित हुआ। भानुभक्त पड्‌कनस भन्या (पढ़ीनस् भने) ल पार्श्विक, वर्त्स्य, अल्पप्राण ध्वनि है। इसके आचरण में स्वरतन्त्री में कुछ कम्पन भी होता है। यह पद के आदि मध्य और अन्त में आता है। महाप्राण ह भी ल में विकसित हुआ है।

ड़ – रड., करम्, घड़् ।

रह् – परृहनु (पढनु) करहाई (कढ़ाई) कोरृही (कोठी)।

ल् – लाज, लाटो, पलड., चेलो, दल (नु) खोल (नु)।

हन् – युह्नो, ओहनु ।

स् –

यह दन्तमूलीय, अघोष, संघर्षी। व्यंजन है। इसका उच्चारण करते समय जीभ ऊपर उठ जाता है और हवा संघर्ष करते हुए निकलता है। तालव्य श और मूर्धन्य ष का उच्चारण नेपाली में नहीं होता लेकिन तत्सम शब्दों के लिखाई में मिलता है।

स् – सानो, सिस्वो, मांस्नु ।

ह् – स्वरयन्त्रमुखी, संघर्षी। घोष ध्वनिहै। इसका उच्चारा करते समय जीभ तालु और होठ निष्क्रिय रहते हैं। यह यदि और मध्य में मिलते हैं।

ह – हलो, कहनु

य्, व् —

ये अन्तस्थ अथवा अर्धस्वर ध्वनि है। या का उच्चारण जीभ के अग्रभाग को कठोर तालु तक ले जाकर किया जाता है, लेकिन इसका उच्चारण तालप्यय ध्वनि और स्वर की तरह नहीं होता । बोलचाल की नेपाली में इसका उचचारण प्रायः इस स्वर की तरह होता है और इ तथा य में स्पष्ट व्यतिरेक भी नहीं मिलता । इस कारण नेपाली में य का अस्तित्व वर्ण रूप में विवादास्पद होता है। यद्यपि ध्वनि तान्त्रिक दृष्टि से इसका अस्तित्व माना जा सकता है। कुछ शब्दों में लिखित य का उच्चारण ए स्वर की तरह होता है। व द्वयोष्ठय अर्धस्वर है और यक् उच्चारण में जीभ वर्तुलाकार होता है। यह पद के आदि और मध्य में मिलता है। यह ध्वनि नेपाली में बहुत ही कम है और अन्त में नहीं मिलता, क्योंकि पदान्त में यह उ हो जाता है। बोलचाल में ॅ का उच्चारण उ की तरह होता है और इन दोनों में भी स्पष्ट व्यतिरेक नही मिलता। इसका प्रश्न भी "य" की तरह ही विवादास्पद है। ये दोनों वर्ण पदान्त में नहीं आते:

य् – यी, यस्टी, खचर, कायर, समय ।

व् – वार, कवल, हाव (हाउ) ।

अक्षर प्रणाली[1]–

संक्षेप में नेपाली अक्षर प्रणाली इस प्रकार है– नेपाली में संस्कृत के तत्सम् शब्द प्रशस्त मात्रा में हैं और नेपाली और संस्कृत की अक्षर–प्रणाली अलग होने के कारण तत्सम् शब्दों को छोड़कर सूत्ररूप में बताने पर नेपाली के आक्षरिक ढांचे को इस प्रकार बताया जा सकता है–

(प्य) स्व (प्य)

द्वि

---

1. चूड़ामणि उ0 रेग्मी – नेपाली भाषा की उत्पत्ति, पृ0 ४४.

यहां "व्य" से व्यंजन "स्व" से स्वर, द्वि से द्विस्वर को संकेतिक करता है । कोष्ठ भीतर का संकेत वैकल्पिकता का बोध कराता है। इस प्रकार हम नेपाली में निम्न प्रकार के अक्षर पाते हैं:-

स्व - आ । इ । ए ।

द्वि - आउ । आई ।

व्यस्व - खा । जा । तँ । भ ।

व्याद्वि - दही (दै), खै ?

द्विय - ऐन, औरा ।

व्यस्वव्य - कान्, सात्, भात् ।

स्वव्य - ईंट, इख्, ऊँट, अपि ।

व्यद्विव्य - स्याल, प्याल ।

यहां य और व को इ और उ के भेद रूप में मानकर द्विस्वर के घटक के रूप में दिखाया गया है। लेकिन व्यंजन के रूप में स्वीकार करके भी आक्षरिक बनावट में दिखाया जा सकता है, फिर जहां द्विस्वर आते हैं वैसी स्थितियों में देर से उच्चारण करने पर दो अक्षर बनते हैं, वहीं जल्दी उच्चारण करने पर एक अक्षर। जैसे- आउ, ऐन और स्याल के दो अक्षर में बांट सकते हैं।

भोजपुरी – ध्वनियाँ

भोजपुरी स्वर[1]–

संस्कृत उच्चारण में "अ" तथा "आ" – इन दो ध्वनियों का व्यवहार होता है; किन्तु भोजपुरी में इनके पांच उच्चारण वर्त्तमान हैं। इन्हें स्पष्ट करने के लिए क्रमशः ह्रस्व (अ), ह्रस्व (ऑ), दीर्घ (आ), ह्रस्व विलम्बित (अ) तथा दीर्घ विलम्बित (अऽ) कहा जा सकता है।

भोजपुरी ह्रस्व (अ) का उच्चारण थोड़ा वर्तुल होता है, भोजपुरी (अ) जब दीर्घ रूप में इसका उच्चारण होता है तब यह विलम्बित हो जाता है। यथा–

अचार; अकिलि, अक्ल; दस या दश; बस या बस आदि।

भोजपुरी दीर्घ (आ) के उच्चारण में जीभ का मध्य भाग थोड़ा ऊपर उठता है। यह वास्तव में केन्द्रीय स्वर है; किन्तु अँगरेजी (a) के इतना यह विवृत्त नहीं है। इसके उच्चारण में होंठ वर्तुलाकार नहीं होते ।

ह्रस्व (ऑ) का उच्चारण – स्थान दीर्घ (आ) की अपेक्षा किंचित ऊपर है। इसके उच्चारण में जीभ का ठीक मध्य भाग ऊपर नहीं उठता, किन्तु मध्य तथा पश्च भाग का निचला हिस्सा ही ऊपर उठता है।

दीर्घ (आ) के उदाहरण निम्नलिखित हैं :

आजु, आज, आमें; आन्हर, अन्धा; आमाँ, आमे आदि।

---

1. डा0 उदयनारायण तिवारी "ध्वनियों का विशेष विकरण" (क) स्वर पृ0 301.

ह्रस्व (ऑ) मॉरलै – "मारा", पॉरलै–आदि में मिलता है।

विलम्बित दीर्घ (अ̆) के उच्चारण में जीभ का पिछला भाग तालु के मध्य भाग की ओर ऊपर उठता है। उसका स्थान मूल स्वर, संख्या 6, से तनिक नीचे है। इसके उच्चारण में होंठ किंचित् गोलाकार रूप धारण कर लेते हैं।

विलम्बित ह्रस्व (अ) का उच्चारण–स्थान भी प्राय: वही है, जो दीर्घ (अ) का; किन्तु इसके उच्चारण में यह अन्तर आवश्य आ जाता है कि इसमें जीभ का पिछला भाग नहीं; अपितु बीच का भाग ऊपर की ओर उठता है।

विलम्बित दीर्घ (अ) का उच्चारण एकाक्षर अथवा एकाक्षर के बाद ह्रस्व इ तथा ह्रस्व उ से अनुगामी शब्दों में होता है। यथा–

क, ख, ग, च, लु, हँसु आदि में 'च' तथा 'हँ' का उच्चारण दीर्घ विलम्बित होगा ।

ह्रस्व विलम्बित अ का उच्चारण भोजपुरी जवन, कवन, तवन आदि के 'ज', 'क' तथा 'त' में सुन पड़ता है।

– ई, इ, इ –

ई : यह संवृन्त दीर्घ अग्रस्वर है। भोजपुरी ई का स्थान मूल अथवा प्रधान स्वर इ की अपेक्षा कुछ नीचा है ।

भोजपुरी इ का उच्चारण – स्थान ई की अपेक्षा कुछ नीचा है। इसके अतिरिक्त आदर्श भोजपुरी में एक अति ह्रस्व इ़ का भी व्यवहार होता है। यह अपूर्ण ध्वनि है और साधारणतः यह सुनाई नहीं देती । बनारस तथा आजमगढ़ की पश्चिमी भोजपुरी में तो इसका लोप हो गया है।

इनमें "ई" का आदि, मध्य तथा अन्त में "इ" का आदि तथा मध्य में एवं इ़ का केवल अन्त में व्यवहार होता है। यथा–

ऽ ऽ
ईसर, ईश्वर, इजत, इज्जत; तीस; खीसि, क्रोध; खीरा, एड़ी, घून्ही, खम्भा; मुट्ठी, छूरी, भरिचा, खरिका, लरिका आदि।

ऊ, उ, उ़,

ऊ : यह संवृत्त दीर्घ पश्च स्वर है। इसका स्थान मूल अथवा प्रधान स्वर से थोड़ा नीचे है। ह्रस्व (उ) का उच्चारण–स्थान दीर्घ (ऊ) से भी थोड़ा नीचे है। इसके उच्चारण में होंठ गोलाकार रूप धारण कर लेते हैं किन्तु उतना नहीं जितना मूल स्वर अथवा बंगला में।

आदर्श भोजपुरी में एक अति ह्रस्व उ़ का भी प्रयोग होता है जिसके उच्चारण में होंठ कम गोलाकार होते हैं ।

ह्रस्व उ शब्द के अन्त में तथा अति ह्रस्व उ़ शब्द के आदि में व्यवहृत नहीं होते। यथा–

अखि	ईख	ऊरिद	उर्द
लूला	बालू	नाऊ	उखाव
उधार	कर्जा	उजाड़	उजाड़
ससुर	सासु	सास	आजु

अति ह्रस्व उ् का व्यवहार वैकल्पिक रूप से ऊ तथा उ दोनों के लिए होता है। यथा– उ्ठे, उ्ठे; सुते, वह सोए आदि।

ए, ए ए

ए : यह अर्द्ध विवृत्त दीर्घ अग्रस्वर है। इसका उच्चारण स्थान मूल या प्रधान (ए) स्वर से कुछ नीचा है। इसके उच्चारण में जीभ का उठा हुआ भाग मूल स्वर (ए) की अपेक्षा थोड़ा पीछे रहता है।

भोजपुरी ह्रस्व ए का उच्चारण–स्थान मूल स्वर (ए) तथा (ऍ) के लगभग मध्य में पड़ता है। इसके उच्चारण में जीभ का केन्द्रीय स्थान की ओर अधिक अग्रसर होती है । इन स्वरों का उच्चारण कुछ ढीला होता है और इनमें सन्ध्यक्षरों के उच्चारण की प्रवृत्ति पाई जाती है। शब्दान्त, विशेषतः प्रत्यय–रूप में आने वाला ए् अत्यधिक विवृत्त स्वर है।

अति ह्रस्व ए् वस्तुतः सहायक ध्वनि है। इसके उच्चारण में जीभ की नोंक निचले मसूड़ोंको स्पर्श करती हुई प्रतीत होती है।

ए तथा ए् शब्दान्त में नहीं आते । यथा– एड़ी; एकः, खेमा।

(8) ऍं

यह अत्यधिक विकृत्त स्वर हे तथा इसका उच्चारण स्थान प्रायः वही है, जो मूल स्वर ऍं का है। वस्तुतः प्रत्यय के रूप में ही इसका व्यवहार होता है। प्राचीन भोजपुरी में, जोर देने के लिए, इसके साथ 'हिं' अव्यय का व्यवहार होता था, किन्तु आधुनिक भोजपुरी में इसका लोप हो गया है। प्रत्यय-रूप में शब्दान्त में व्यवहृत होने पर यह ए, तथा ए् का रूप धारण कर लेता है।

(9) अ ऍं

ऍं : यह सन्ध्यक्षर के दूसरे भाग के रूप में आता है। तत्सम या अर्द्धतत्सम (ऐ) जो पश्चिमी हिन्दी में (ऐ) अथवा ऐ रूप धारण कर लेता है, भोजपुरी में अऍं हो जाता है। भोजपुरी में अग्र (अ) तथा विकृत्त ऍं संयुक्त होकर सन्ध्यक्षर हो जाता है ।

(10) ओ, ओ –

ओ तथा ओ–का उच्चारण–स्थान मूल स्वर (ओ) से थोड़ा नीचे है । ह्रस्व 'ओ¯' का स्थान पश्च तथा केन्द्र के मध्य में है। इसके उच्चारण में होंठ 'अे' की अपेक्षा अधिक वर्त्तुल तथा मूल स्वर (ओ) अथवा बंगला 'ओ' से कम गोलाकार रूप धारण करते हैं। ये दोनों स्वर आदि, मध्य तथा अन्त में आते हैं । यथा–

ओछ, छोटा, ओ¯झइत, ओझा ।

अनुनासिक स्वर[1]–

अएँ को छोड़कर भोजपुरी में प्रत्येक स्वर का अनुनासिक रूप पाया जाता है। अनुनासिक स्वरों के उच्चारण में स्थान वही रहता है किन्तु साथ ही कोमल तालु और कौवा कुछ नीचे झुक जाता है और वर्हिगत वायु का कुछ भाग मुख द्वारा निकलने के अतिरिक्त नासिका–विवर से भी निकलने लगता है।

इसी कारण आनुनासिकता आ जाती है। यथा–

अं : हँस, हँसो, फँस, फंसो आदि ।

औं : गौंती ।

इं : इंकड़ी, छोटा कंकड़; सिंकरी, सौंकल ।

अनुनासिक के कारण अर्थ में अन्तर आ जाता है जैसे गोड़, पैर, गोंड, जाति–विशेष आदि।

संयुक्त स्वर[1]–

संयुक्त में ए, ऐ, ओ, औ सन्ध्यक्षर हैं। वस्तुतः दो स्वरों के संयोग से ही इनकी उत्पत्ति हुई है। आधुनिक बोलियों में भी दो स्वरों का संयोग होता है; किन्तु इस संयोग तथा सन्ध्यक्षरोंमें किञ्चित् अन्तर है। वास्तव में सन्ध्यक्षरों में दो स्वर–ध्वनियां मिलकर एक अक्षर में परिणत हो जाती हैं; किन्तु इस दूसरे प्रकार के संयोग में कभी–कभी विभिन्न (दो या तीन) स्वरों की सत्ता स्पष्ट रूप से दिखलाई देती है। भोजपुरी में दो स्वरों के संयोग के अनेक उदाहरण उपलब्ध हैं। जैसे–

---

1. डा0 उदय नारायण तिवारी, भोजपुरी भाषा और साहित्य, पृ0 304.

अइ:	मइल	मैला
अई:	चिरई	चिड़िया ।
अउ:	हउरा,	शोर ।
आई:	ओकाई,	वमन आदि ।

व्यंजन[1]

1. क्, ख्, ग्, घ् कण्ठ्य वर्ण हैं। प्राण तथा नाद के कारण इन ध्वनियों से निर्मित शब्दों के अर्थ में परिवर्तन हो जाता है, इसलिए इन्हें पृथक् ध्वनियां समझना चाहिए। यथा–

कानि, कानी स्त्री;
खानि; काली, कालिका देवी; खाली, गिन–गिनना;
घिन, घृणा; गिर, गिरना; घिर, घिरना।

ये सभी ध्वनियां आदि, मध्य तथा अन्त में आती हैं। यथा–

काम, कार्य; खेत; गेहूँ, गेहूँ;
घोड़ा; बो–कला, छिलका ।

2. संघर्षी – च्, छ्, ज्, झ् ।

इनमें च्, छ अघोष तथा ज् झ् घोष एवं च्, ज् अल्पप्राण तथा छ, झ् महाप्राण ध्वनियां हैं।

3. मूर्धन्य – ट्, ठ्, ड्, ढ् ।

इनमें ट्, ठ् अघोष, ड् ढ् घोष एवं ट् ड् अल्पप्राण तथा ठ् ढ् महाप्राण ध्वनियां हैं ।

---

1. डा0 उदयनारायण तिवारी, "भोजपुरी भाषा और साहित्य", पृ0 306.

इनमें से ट्, ठ् आदि, मध्य तथा अन्त में आते हैं, किन्तु ड, ढ उस अवस्था में इन्हीं स्थानों में आते हैं जब वे किसी अनुनासिक ध्वनि से पूर्व रहते हैं ।

4. दन्त्य : त्, थ्, द्, ध् ।

इनमें त्, थ् अघोष, द्, ध् घोष एवं त्, द् अल्पप्राण तथा थ्, ध् महाप्राण हैं ।

भोजपुरी में ध् पूर्णरूप से घोष ध्वनि नहीं है। निम्नलिखित शब्दों में ये ध्वनियां ऊपर के दाँतों का स्पर्श करती हैं। यथा–

कन्ता, छोटी तलवार;

खन्ता, जमीन खोदने का औजार;

कंधा

गद्दी ।

5. ओष्ठ्य – प्, फ्, ब्, भ् ।

प् तथा ब् शब्द के आदि, मध्य तथा अन्त में आते हैं।

यथा– पानी; बार, बाल; आपन, अपना; अबीर; नाप।

फ् तथा भ् दोनों प् तथा ब् की महाप्राण ध्वनियां हैं।

अनुनासिक व्यंजन – अनुनासिक व्यंजनों के उच्चारण में कोमल तालु के ऊपर उठने से नासिका–विवर के द्वार का अवरोध नहीं होता जैसा कि निरनुनासिक व्यंजनों के उच्चारण में होता है।

अ) ङ., ङ्. ह् – ये घोष कण्ठ्य अनुनासिक ध्वनि हैं। इनमें ङ्. छ महाप्राण वर्ण है।

ब) तालव्य – ञ्

यह घोष अनुनासिक तालव्य व्यंजन है और आदि में यह नहीं आता। यथा– ञिञ्ञा, भुइञा, बढ़िञा आदि ।

स) वर्त्स्य – न्, न्ह ।

न्ह् का ह् पूर्ण स्वर के पूर्व पूर्णरूप से उच्चरित होता है; किन्तु जब इसके बाद कोई अपूर्व अथवा अति ह्रस्व स्वर आता है तब यह अघोष न में परिणत हो जाता है ।

न शब्द के आदि, मध्य तथा अन्त में आता है, किन्तु न्ह, आदि में नहीं आता । यथा–

नाप; नाक, पानी, चानी, चाँदी; पान; जान; प्राण; चोन्हा, बान्ही; सेन्हि — सेनि – सेंध आदि।

जब न् किसी अन्य व्यंजन वर्ण से संयुक्त होता है तब इस संयुक्त होने वाले वर्ण के अनुसार इसके उच्चारण–स्थान में भी परिवर्तन हो जाता है, अर्थात् उस वर्ण के अनुसार इसका भी उच्चारण मूर्धन्य, तालव्य अथा दन्त हो जाता है। यथा –

डण्ड –– डन्ड;
कुञ्ज –– कुन्ज;
कण्ठ –– कन्ठ आदि ।

द) द्वयोष्ठ्य (म्, म्ह्)

ये द्वयोष्ठ्य घोष अनुनासिक व्यंजन वर्ण हैं, इनमें म्ह महाप्राण व्यंजन है ।

चूँकि प्राण तथा नाद के कारण इन ध्वनियों से निर्मित शब्दों के अर्थ में परिवर्तन हो जाता है, इसलिए इन्हें पृथक ध्वनियां समझना चाहिए। यथा–

बरमा, एक प्रकार का औजार; बरम्हा; बामन ।

म शब्द के आदि, मध्य तथा अन्त में आता है; किन्तु म्ह आदि में नहीं आता । यथा–

मोर; महुआ; जामुनि, कमरी, चाम; काम; बम्हारि; खम्हा।

पार्श्विक व्यंजन (ल्, ल्ह्)

ल् पार्श्विक, अल्पप्राण, घोष, वर्त्स्यध्वनि है तथा ल्ह् महाप्राण ध्वनि ।

लुंठित व्यंजन (र, र्ह्)

र् लुंठित, अल्पप्राण, वर्त्स्य, घोष ध्वनि है तथा र्ह् महाप्राण ध्वनि।

उत्क्षिप्त या ताड़नजात व्यंजन (ड़, ड़्ह, या ढ़)

ड़ अल्पप्राण, घोष मूर्धन्य उत्क्षिप्त ध्वनि है और ड़् ह् या ढ़ महाप्राण ध्वनि ।

संघर्षी (स्)–

यह वास्तव में वर्त्स्य, अघोष, ऊष्म संघर्षीय ध्वनि है। यह ध्वनि शब्द के आदि, अन्त तथा मध्य से आती है। यथा–

साग, शाक; सारी, साड़ी; घासि, घास ।

कण्ठ्यसंघर्षी (ह्)

जब 'ह्' शब्द के मध्य या अन्त में आता है तथा जब कोई ह्रस्व स्वर इसका अनुगामी होता है तो धीरे–धीरे इसके घोषत्व का लोप होने लगता है और वह अघोष ध्वनि में पलित हो जाता है। अन्तिम अवस्था में यह 'ह्' का रूप धारण कर लेता है। यथा–

हमार, मेरा; हाथ; जेहल, जेल; कहल, कहना, आदि।

भोजपुरी में एकौंदसाः, दुआदसाः, मृत्यु के पश्चात् ग्यारहवें तथा बारहवें दिन में, (ह) का उच्चारण विसर्गवत् हो जाता है और सुनाई नहीं देता।

संघर्षी 'ह्' अथवा विसर्ग

यह अघोष संघर्षी ध्वनि है और अघोष स्पर्श तथा संघर्षी व्यंजनों में प्राणत्व उत्पन्न करती है । विस्मयादिबोधक अव्ययों में भी यह ध्वनि सुन पड़ती है। पूर्ण स्वर के अनुगामी होने पर यह ध्वनि पूर्णरूप में तथा अपूर्ण स्वर के अनुगामी होने पर यह आंशिक रूप में सुन पड़ती है; यथा– आः, ओः आदि

अर्द्धस्वर या अन्तःस्थ (य)

'य्' को अन्तःस्थ या अर्द्धस्वर अर्थात् व्यंजन और स्वर के बीच की ध्वनि माना जाता है। भोजपुरी में 'य्' के स्थान पर विकल्प से लिखते समय

'अ' का प्रयोग किया जाता है। हिन्दी की बोलियों में 'य्' के स्थान पर शब्द के आरम्भ में 'ज्' हो जाता है। इसका कारण यह है कि 'य्' के उच्चारण में तालु के निकट जीभ को जिस स्थान में रखना पड़ता है, वहां उसे देर तक नहीं रखा जा सकता। मागधी अपभ्रंश से प्रसूत बोलियों में तो शब्द के आदि में इसका 'ज्' उच्चारण प्रसिद्ध है। यथा–

पिआस् या पियास्, डिअति या डियटि, घिआ या घिया, इआर या इयार आदि।

अर्द्धस्वर व्–

यह द्वयोष्ठ्य अर्द्धस्वर है। यह शब्द के मध्य में आता है तथा – श्रुति का कार्य करता है। यथा–

पावल, पाना; सवृति, सौत; गँवार; युवा या युआ, पूप; दुवार या दुआर, द्वार आदि:

संयुक्त व्यंजन–

भोजपुरी में संयुक्त व्यंजन निम्नलिखित रूप में मिलते हैं:–

(1) अल्पप्राण तथा संघर्षी, घोष एवं अघोष वर्ण अपने वर्ग के महाप्राण अथवा अपने ही वर्ण से संयुक्त होते हैं। ध्वन्यात्मक रीति से उन्हें दीर्घ व्यंजन (द्वित्व) (Long Consonant) कहा जा सकता है।

यथा–

च्क्कू, या चाकू; पक्की, कच्ची आदि।

(2) न्, म् तथा ङ् के भी दीर्घ (द्वित्व) रूप होते हैं। ये अपने वर्ग के वर्णों से संयुक्त हो सकते हैं। यथा-

बुन्ना, शून्य; महन्थ, महन्त, दङ्गा, दंगा–फसाद आदि:

(3) स् को उसके पहले का अघोष, अल्पप्राण, कण्ठ्य अथवा दन्त्य व्यंजन वर्णों से संयुक्त किया जा सकता है। यथा–

खुस्की, खुश्की; कुस्ती, दंगल; मस्ती, मश्ती ।

स् को उसके पहले में अघोष, अल्पप्राण, मूर्धन्य व्यंजन वर्णों से भी संयुक्त किया जा सकता है। यथा–

मास्टर या माहटर अस्पष्ट, असपहट आदि।

स् का दीर्घ (द्वित्व) रूप भी हो जाता है। यथा–

हिस्सा या हींसा; खिस्सा या खीसा।

(4) अर्द्धस्वर अपने पहले के कण्ठ्य, दन्त्य तथा ओष्ठ्य व्यंजनों से संयुक्त किया जा सकता है। यथा–

ख्याल या खियाल, प्यार या पियार, ग्वाल या गुआल, द्वार या दुआर, ग्यान या गिआन ।

य् को आगे आने वाले न् या म् से संयुक्त किया जा सकता है । यथा–

न्याव या नियाव, न्याय; म्यान, मियान आदि।

ऊपर के संयुक्त व्यंजनों को छोड़कर शब्द के आदि में, भोजपुरी में संयुक्त व्यंजनों का प्रयोग नहीं होता ।

व्यंजन वर्णों का द्वित्वभाव या दीर्घीकरण

भोजपुरी तथा अन्य सभी आधुनिक भाषाओं एवं बोलियों में व्यंजन ध्वनियों का दीर्घरूप में उच्चारण किया जाता है। इस दीर्घ उच्चारण को साधारणतः

द्वित्व उच्चारण की संज्ञा दी जाती है, क्योंकि ध्वनि-द्योतक वर्णों को दो बार लिखकर इस दीर्घ उच्चारण को प्रदर्शित किया जाता है। वस्तुतः किसी ध्वनि का दो बार उच्चारण नहीं होता । जिह्वा के अग्रभाग का देर तक, दांतों के स्पर्श करने के कारण 'त्त' का उच्चारण होता है। इस प्रकार इसे द्वित्व वर्णों की अपेक्षा दीर्घ व्यंजन कहना अधिक वैज्ञानिक है। व्यजनों के दीर्घीकरण से उनके अर्थ में भी अन्तर आ जाता है। यथा-

पता, पत्ता; गला, गल्ला; खीली, खिल्ली; पीला, पिल्ला।

भोजपुरी तथा नेपाली के ध्वनिग्रामों के तुलनात्मक अध्ययन का निष्कर्ष :

ध्वनिग्रामों की संख्या की दृष्टि से तुलना करने पर नेपाली की तुलना में भोजपुरी अधिक समृद्ध है। ऐ, औ तथा ऑ ये तीन मूलस्वर हैं जो नेपाली में नहीं मिलते ।

संध्यक्षर स्वरों की दृष्टि से नेपाली तथा भोजपुरी में कुछ समानता है, ऐ और अउ दो संयुक्त स्वर मिलते हैं ।

अनुनासिक स्वरों की दृष्टि से भी नेपाली तथा भोजपुरी में काफी समानताएं हैं। दोनों के प्रायः सभी मूल स्वरों के अनुनासिक रूप भी पाये जाते हैं ।

व्यंजन ध्वनिग्रामों की दृष्टि से नेपाली तथा भोजपुरी में यह भिन्नता दिखती है कि भोजपुरी में व्यंजनों की संख्या नेपाली से अधिक है।

ण व्यंजन का प्रयोग भोजपुरी और नेपाली दोनों में नहीं होता है।

ष का प्रयोग भी दोनों भाषाओं में नहीं होता है। श का प्रयोग भी दोनों भाषाओं में नहीं है।

******

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

** संदर्भ - ग्रन्थ **

काव्य और कविता संग्रह :

1. **गो-विलाप छन्दावली** – (भोजपुरी, हिन्दी, ब्रजभाषा), श्री दूधनाथ उपाध्याय, प्रकाशन– श्री नवरंग सिंह रईस, भेलसा : मुद्रक भारतीय जीवन प्रेस 1893 ई0 ।

2. **चारो खण्ड** – प्रकाशन–जगदीश नरायण तिवारी, 10–ए मछुआ बाजार स्ट्रीट, कलकत्ता–7, 1943 ई0 ।

3. **बदमाश दर्पण** –तेगअली, प्रकाशन–भारतीय जीवन प्रेस, काशी, 1895 ई0 ।

4. **बिरहा** – रामकृष्ण वर्मा, प्रकाशन–भारतीय जीवन प्रेस, काशी, 1900 ई0 ।

5. **भारत के गीत** – दूधनाथ उपाध्याय–प्र0स0 सन् 1914 ई0, प्रकाशक– डी0आर0ए0 बलिया ।

6. **रघुवीर पत्र–पुष्प** – (हिन्दी, भोजपुरी), रघुवीर नरायण शरण, बिहार बुक स्टोर, पटना, 1917 ई0 ।

7. **रघुवीर रसरंग** – (हिन्दी, भोजपुरी, ब्रजभाषा), रघुवीर नरायण शरण, बिहार बुक स्टोर, पटना, 1917 ई0 ।

8. **हिलोर** – महेन्द्र शास्त्री, राहुल पुस्तकालय, पो0 रतनपुरा, महाराजगंज सारन, सन् 1928 ई0 ।

9. **ग्राम गीतांजली** – चंचरीक प्र0स0 ठाकुर महातमरा (क) रेती चौक गोरखपुर, सन् 1931 ई0 ।

10. **भूकम्प पचीसी** – दूधनाथ उपाध्याय, प्रभात प्रेस, चौक बलिया, सन् 1934 ई0 ।

11. **गुनगुन** – (हिन्दी, भोजपुरी), मनोरंजन प्रसाद सिंह, पुस्तक भण्डार, लहेरिया सराय, सन् 1937 ई0 ।

12. **केवट अनुराग** – (हिन्दी, भोजपुरी), सिद्धनाथ सहाय विनयी, अम्बिका भवन, मनशा पाण्डेय का बाग, आरा, सन् 1941 ई0 ।

13. **मड़ई पलानी** – (सम्भवतः हिन्दी, भोजपुरी), रघुवीर नरायण शरण, इस पुस्तक की रचना श्री सिद्धेश्वर प्रसाद श्रीवास्तव ने भोजपुरी लोक साहित्य पर की है । अन्य विवरण नहीं मिल सका।

14. **द्रोपदी की रक्षा** – (हिन्दी, भोजपुरी), सिद्धनाथ सहाय विनयी।

15. **धरती के गीत** – (लोक भाषा कविता संग्रह), सम्पादक–रमेश चन्द्र सिन्हा, जन प्रकाशन गृह, राज भवन, स्टैण्ड रोड, बम्बई–4 ।

16. **तिरंगा** – महेश्वर प्रसाद प्र0, रचयिता, भरौली, शाहाबाद, 1950 ई0।

17. **भोजपुरी वीर काव्य** – प्रसिद्ध नारायण सिंह, अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशन मण्डल, बक्सर, सन् 1955 ई0 ।

18. **गाँव गिराऊँ** – (हिन्दी, भोजपुरी, अवधी), राजबली दुबे "तरल", प्रकाशन–आनन्द बहादुर सिंह, तुलसी पुस्तकालय, भरैनी, वाराणसी, 1959 ई0 ।

19. **साहित्य रामायण** – सुन्दर काण्ड (भोजपुरी) 1964, लंका काण्ड (भोजपुरी) 1965, दुर्गा शंकर प्रसाद सिंह "नाथ", नाथ साहित्य मंदिर, रेन बसेरा, दलीपपुर, शाहाबाद।

20. **भोजपुरी लोकगीत** – ले0 – विन्ध्यावासिनी रोड नं0 1, क्वाटर नं0 6, काजीपुर रोड, पटना ।

भोजपुरी कविताओं के हिन्दी संग्रह :

1. भोजपुरी के कवि एवं काव्य – ग्रंथकार महाराजकुमार दुर्गाशंकर प्रसाद सिंह "नाव", विद्यावाचास्पति, सम्पादक डा0 विश्वनाथ प्रसाद, प्रकाशक बिहार राष्ट्र भाषा परिषद, पटना–1, सन् 1958 ई0।
2. आधुनिक भोजपुरी गीत एवं गीतकार – सं0 राहगीर, मधु प्रकाशन, चेतगंज, वाराणसी, सन् 1958 ई0।

लोक साहित्य के सम्पादित संग्रह :

1. कविता कौमुदी – 3रा भाग (ग्राम गीत), राम नरेश त्रिपाठी, नवनीत प्रकाशन लि0, बम्बई, द्वि0संस्करण 1955 ई0 ।
2. भोजपुरी ग्राम गीत – डब्लू0जी0 आर्चर तथा संकठा प्रसाद, मुद्रक पटना ला प्रेस, पटना, सन् 1943 ई0 ।
3. लालच जी के जाल – भोजपुरी लोककथा एवं संग्रह, जगदीश, भगवती प्रसाद शास्त्री, पुस्तक भण्डार पटना, 1955 ई0 ।
4. भोजपुरी संस्कार–गीत – संपादक पं0 हंसकुमार तिवारी, श्री राधा बल्लभ शर्मा, प्रकाशन बिहार राष्ट्रभाषा परिषद पटना–4, 1977 ई0 ।
5. सोहर – सं0 पं0 रामनरेश त्रिपाठी, हिन्दी मन्दिर, प्रयाग।
6. उत्तर प्रदेश के लोकगीत – प्र0 हंस कुमार तिवारी, उ0प्र0 सरकार लखनऊ, सन् 1959 ई0 ।
7. भोजपुरी लोक साहित्य का अध्ययन – अप्रकाशित लेख डा0 कृष्णदेव उपाध्याय, एम.ए., डि.फिल.

8. भोजपुरी लोक गीत में करूण रस – सं0 2001 वि0, सम्पादक– श्री दुर्गा शंकर प्रसाद सिंह, प्रकाशक–हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।

9. कविता कौमुदी भाग 5 ग्राम गीत – सम्वत् 1986 वि0, सं0 राम नरेश त्रिपाठी, प्र0–हिन्दी मन्दिर, प्रयाग ।

10. जीवन के तत्व और काव्य के सिद्धान्त – 1942 ई0, लेखक– लक्ष्मी नरायण सुधांशु, प्रकाशक–युगांतर साहित्य मन्दिर, भागलपुर।

11. मत्स्यपुराण – सं0 श्री राम प्रताप त्रिपाठी, प्रकाशक–हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग ।

12. नाथ संप्रदाय 1950 ई0 – लेखक–हजारी प्रसाद द्विवेदी, प्र0–हिन्दुस्तान एकेडेमी, प्रयाग ।

13. हिन्दी भाषा और साहित्य – सम्वत् 1987 विक्रमी। लेखक डा0 श्याम सुन्दर दास, सम्पादक–इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

14. कबीर 1950 ई0 – लेखक–आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, प्र0 हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय, बम्बई ।

15. आल्हा – 1940 ई0, ले0 चतुर्वेदी द्वारिका प्रसाद शर्मा, प्र0–इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

16. हिन्दी साहित्य – 1944 ई0, ले0–डा0 श्याम सुन्दर दास, प्र0– इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

17. साहित्य प्रकाश – 1931 ई0, ले0–डा0 रमाशंकर शुक्ल रसाल, प्र0–इंडियन प्रेस, प्रयाग ।

18. भक्त गोपीचन्द्र – ले0 बालकराम योगेश्वर, प्र0–जवाहर बुक डिपो, गुदरी बाजार, मेरठ ।

19. हिन्दी साहित्य का इतिहास – (6वां संस्करण) सम्वत् 2007 विक्रमी। लेखक–आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, प्र0–नागरी प्रचारणी सभा, काशी।

20. मैथिली लोक गीत – सं0 1999 वि0, सम्पादक–श्री राम इकबाल सिंह, प्र0–हिन्दी मन्दिर, प्रयाग ।

कोश :

1. कृषि कोश : (प्र0 खण्ड), सम्पादक–डा0 विश्वनाथ प्रसाद, श्रुतिदेव शास्त्री, राधावल्लभ शर्मा, बिहारी राष्ट्रभाषा, पटना, 1959 ई0।

2. कृषि कोश : (द्वितीय खण्ड), सं0 श्री वैद्यनाथ पाण्डेय, श्रुतिदेव शास्त्री, प्र0–बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना 1966 ई0।

3. भोजपुरी भाषा का शब्दकोष – (भोजपुरी, हिन्दी), प्र0 एल0 सेंट जोसफ मिशन हाउस, मोतीहारी, 1940 ई0 ।

4. कहावत कोष – सं0 डा0 भुनेश्वर नाथ मिश्र "माधव" एवं विक्रमादित्य मिश्र, प्र0 बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना, 1965 ई0 ।

5. भोजपुरी लोकोक्तियां : डा0 शशि शेखर तिवारी, प्र0 बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना 1970 ई0 ।

6. पहेली कोश – सं0 श्री विक्रमादित्य मिश्र, प्र0 वि0रा0 परिषद, पटना, 1981 ई0 ।

7. भोजपुरी लोकोक्तियां एवं मुहावरे – (एक समीक्षात्मक प्रबन्ध), डा0 मुक्तेश्वर तिवारी "बेसुध" प्रकाशन हिन्दी परिषद आशापुर, चित्तबड़ा गांव, बलिया, 1970 ई0 ।

8. धान की उन्नत खेती – (कृषि प्रयोग) बंगाराम वैद्य, प्र0 पीरो शहाबाद, 1966 ई0 ।

9. फ्रोकट में शैर – (यात्रा विवरण), सं0 डा0 सत्यदेव ओझा, प्र0 भोजपुरी साहित्य परिषद 1, भोजपुरी बजार जमशेदपुर 3, 1967 ई0।

10. रमेशरधाम यात्रा – सावलिया बिहारी लाल वर्मा, समाज शिक्षा बोर्ड बिहार, पटना, सन् 1961 ई0 ।

भोजपुरी साहित्य की पत्र–पत्रिकाएँ :

1. भोजपुरी – (साप्ताहिक) – सं0 अखौरी महेन्द्र प्रताप वर्मा, चितरंजन एवेन्यु कलकत्ता ।

2. भोजपुरी त्रैमासिक – सं0 महेन्द्र शास्त्री, संचालक गिरीश तिवरी, भोजपुरी कार्यालय, कदम कुआं, पटना 3,1948 ई0 ।

3. भोजपुरी (मासिक) – सं0 रघुंश नारायणसिंह, प्र0 प्रधान कार्यालय, आरा,1952 ई0।

4. अजोर (त्रैमासिक) – सं0 पाण्डेय नर्मदेश्वर सहाय, स.स. अविनाशचन्द्र विद्यार्थी, प्र0 भोजपुरी परिवार, सलीमपुर अहरा पटना 3, सन् 1960 ई0।

5. गाँवघर (पाक्षिक) – सं0 भुनेश्वर प्रसाद श्रीवास्तव "भानु" गाँवघर कार्यालय, महादेवा, आरा, 1960 ई0 ।

6. भोजपुरी समचार (साप्ताहिक) – सं0 जयदारी प्र0 अेग्रेसिव फेडरेशन आफ इण्डिया एक्जीविजन रोड, पटना, 1965 ई0 ।

7. माटी की बोली (मासिक) – सं0 सतीश्वर सहायय वर्मा, विश्वनाथ प्रसाद, नवीनगंज, छपरा, 1964 ई0 ।

8. भोजपुरी कहानियां (मासिक) — अग्र सम्पादक—डा0 स्वामी नाथ सिंह वर्तमान सं0 डा0 रामवती पाण्डेय, प्रकाश—भोजपुरी संसद, जगतगंज वाराणसी, 1964 ई0।

9. चतुर्मुखी पत्रिका (त्रैमासिक) — सं0 श्री कुलदीप नरायण सिंह "झड़प", सिकन्दरपुर बलिया ।

10. हिलोर (मासिक) — डा0 रामनाथ पाठक "प्रणयी" सं0 देवकुमार मिश्र "अलमस्त", प्र0—देववाणी शोध मन्दिर, आरा, सन् 1969 ई0 ।

11. भोजपुरी समाज (मासिक)— भोलानाथ सिंह प्र0 भोजपुरी समाज परासिया जिला छिन्दाड़ा (मध्य प्रदेश) ।

12. भोजपुरी जनपद (मासिक) — सम्पादक संचालक—राधामोहन "राधेश", प्र0—भोजपुरी साहित्य मन्दिर, जगतगंज वाराणसी, 1968 ई0 ।

13. भोजपुरी साहित्य (मासिक) — सं0 डा0 जितराम पाठक, प्र0—भोजपुरी कार्यालय, प्रोफेसर कालोनी आरा, 1965 ई0 ।

14. धरती (त्रैमासिक)— सं0 मदनमोहन सिन्हा "मनुज" प्र0—धरती कार्यालय, लूकरगंज प्रयाग, सन् 1955 ई0 ।

15. हमार बोल — संम्पादक ब्रजेन्द्र भारती, प्र0 भोजपुरी सेवा मण्डल, 14 एलगिन रोड, इलाहाबाद, सन् 1964 ई0 ।

16. पुरवैया — (भोजपुरी भाषा, साहित्य एवं संस्कृति की त्रैमासिक पत्रिका), सम्पादक—रामबली पाण्डेय, प्र0—भोजपुरी संसद जगतगंज, वाराणसी।

नेपाली पुस्तकहरू :

1. गुरू प्रसाद मैनाली, नासो काठमांडौः राजेन्द्र प्रसाद मैनाली, 2044.

2. चूड़ामणि बन्धु, नेपाली भाषा को उत्पत्ति, काठमांडौ : साझा प्रकाशन, 2037.

3. चूड़ामणि बन्धु, भाषा विज्ञान काठमांडौ : साझा प्रकाशन, 2040.

4. ठाकुर प्रसाद पराजुली, नेपाली साहित्य को परिक्रमा : काठमांडौ नेपाली विद्या प्रकाशन, 2045.

5. तानाशर्मा, सम र समका कृति, काठमाडौ : साझा प्रकशन 2039.

6. दयाराम श्रेष्ठ, नेपाली साहित्यका केही पृष्ठ, काठमाडौ : साझा प्रकाशन, 2048.

7. दयाराम श्रेष्ठ र मोहनराज शर्मा, नेपाली साहित्यको संक्षिप्त इतिहास, काठमाडौः साझा प्रकाशन, 2040.

8. बालकृष्ण पोखरेल, नेपाली भाषा र साहित्य, काठमाडौ, रत्न पुस्तक भण्डार, 2032.

9. बालकृष्ण पोखरेल, पाँच सय वर्ष, काठमाडौ : साझा प्रकाशन, 2043.

10. बालकृष्ण पोखरेल, राष्ट्रभाषा, काठमाडौ : साझा प्रकाशन, 2040.

11. बालकृष्ण सम, नियमित आकस्मिकता, काठमाडौ : साझा प्रकाशन, 2043.

12. मोतीराम भट्ट, कवि भानुभक्तको जीवन चरित्र, बनारस : रामकृष्ण वर्मा, 1948.

13. मोहनराज शर्मा, शब्द रचना र वर्ण-विन्यास, काठमाडौ, काठमाडौ बुक सेन्टर, 2049.

14. रामचन्द्र लम्साल, कोश विज्ञान र नेपाली कोश, काठमाडौ, श्रीमती शारदा लम्साल, 2049.

15. रामराज पन्त, नेपाली लिपि विज्ञान, प्रयाग : रामचरन दास अग्रवाल, सन् 1958.

16. रोहिणी प्रसाद भट्टराई, वृद्ध नेपाली व्याकरण, काठमाडौः ने.रा.प्र.प्र., 2033.

17. शरदचन्द्र शर्मा भट्टराई, नेपाली वाङ्मय : केही खोज केही व्याख्या, काठमाडौ : नेपाल राजकीय प्रज्ञा प्रतिष्ठान, 2042.

18. शरदचन्द्र शर्मा भट्टराई र घटराज भट्टराई (सम्पा) प्राचीन नेपाली गद्य पुष्पोक : साझा प्रकाशन 2048.

1. क) नेपाली भाषा की उत्पत्ति : चूड़ामणि उपाध्याय रेग्मी ।

   ख) नेपाली भाषा का बनोट – गोपालनिधि तिवारी ।

2. नेपाली भाषा की उत्पत्ति र विकास – पारसमणि प्रधान ।
3. नेपाी भाषा की बनोट – गोपालनिधि तिवारी ।
4. जर्नल त्रिभुवन विश्वविद्यालय – डा0 सच्चिदानन्द चौधरी ।
5. मध्य पहाड़ी का भाषा शास्त्रीय अध्ययन – गोविन्द चातक ।
6. श्री सूर्य विक्रम शवाली – नेपाली भाषा का विकास को संक्षिप्त इतिहास।
7. मोहन प्रसाद – मध्यकालीन अभिलेख ।
8. नेपाली साहित्यको ऐतिहासिक परिचय, तारानाथ शर्मा, सहयोगी प्रकाशक, काठमाडौ ।
9. प्राथमिक कालीन कवि र काव्य प्रवृत्ति, केशव प्रसाद उपाध्याय, साझा प्रकाशन, काठमाडौ ।
10. नेपाली कविताको प्रवृत्ति, रमेश श्रेष्ठ, साझा प्रकाशन, काठमाडौ।
11. आधुनिक नेपाली कविता, कृष्ण चन्द्र सिंह प्रधान, नेपाल राजकीय प्रज्ञा प्रतिष्ठान, काठमाडौ ।
12. सात कविहरू, तुलसी दिवस, राजकीय प्रज्ञा प्रतिष्ठान, काठमाडौ ।
13. जूनकिरी, भरत राज पन्त, साझा प्रकाशन ।
14. उसैको लागी, म.वी.वि. शाह, साझा प्रकाशन ।
15. प्रस्थान, कन्चन पुडासैनी, हरि प्रकाश पडासैनी ।
16. किन्नर किन्नर, माधव प्रसाद घिमिरे, साझा प्रकाशन ।
17. लालित्य, पं0 लेखनाथ, पुस्तक संसर, विराट नगर ।
18. यो जिन्दगी खै के जिन्दगी, हरि भक्त कटुवाल, रत्न पुस्तक भण्डार, काठमाडौ।
19. इन्द्रेनी (मासिक पत्रिका), सं0 माधव प्रसाद घिमिरे, नेपाली साहित्य संसार, दार्जीलिंग ।

समीक्षात्मक ग्रन्थ (साझा प्रकाशन से प्रकाशित)

1. नेपाल काव्य र उसका प्रतिनिधि कवि – हृदयचन्द्र सिंह प्रधान ।
2. नेपाली काव्य र कवि – राममणि "रिसाल" ।
3. नेपाली साहित्य (पृष्ठभूमि र इतिहास) अभी सुवेदी ।
4. नेपाली साहित्य केहि पृष्ठ – दयाराम श्रेष्ठ "संभव– ।
5. प्राथमिक कालीन कवि – काव्य प्रवृत्ति – केशव प्रसाद उपाध्याय ।
6. संस्कृत को अमर साहित्यकार – घटराज भट्टराई ।
7. साझा समालोचना – सं0 कृष्ण चन्द्र सिंह प्रधान ।
8. साहित्य चर्चा – यदुनार्थ खनाल ।
9. साहित्यिक अनुशीलन – भानुभक्त पोखरेल ।

हिन्दी में प्रकाशित पुस्तकें :

1. नेपाली साहित्य का इतिहास – डा0 दीनानाथ शरण ।
2. नेपाल भारती – सं0 स्व0 ब्रज किशोर "नारायण" पटना ।
3. नेपाल की कहानी – श्री काशी प्रसाद श्रीवास्तव ।
4. नेपाल अतीत एवं वर्तमान – शंकर सहाय सक्सेना ।
5. नेपाली और हिन्दी भक्ति–काव्य का तुलनात्मक अध्ययन–डा0 मथुरादत्त पाण्डेय।
6. नेपाली भाषा एवं साहित्य – रुद्रराज पाण्डेय, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना।

मैथिली :

1. हर गौरी विवाह नाटक – जगज्ज्योतिर्मल्ल सम्पादक डा0 रामदेव झा दरभंगा।

शोध – पत्रहरू :

1. चक्रपणि खनाल डोट्याली भाषिकाको वर्ण विश्लेषण र अर्थसहित संकलन, त्रि.वि. नेपाली स्नातकोत्तर शोध पत्र, 2049.

2. जगन्नाथ उपाध्याय, तामाङ भाषा र नेपाली भाषाका व्याकरणको व्यतिरेकी तुलना, त्रि.वि. नेपाली स्नातकोत्तर शोध पत्र, 2049.

3. जीवेन्द्र देव गिरि, सिम्ताली क्रिया संरचनाको भाषा वैज्ञानिक विश्लेषण, त्रि.वि. नेपाली स्नातकोत्तर शोध पत्र ।

4. परशुराम कुईंकेल, काठमाडौं उपत्यकाको ध्वन्यात्मक शब्द–संकलन, त्रि.वि. नेपाली स्नातकोत्तर शोध पत्र ।

5. रामनाथ तिमल्सिना, संख्या र सार्वनामिक शब्दका आधारमा नेपाली भाषिकाको निर्धारण, त्रि.वि. नेपाली स्नातकोत्तर शोध पत्र 2050.

अंग्रेजी पुस्तकहरू :

1. आई.गेल्ब, स्टडी आफ राइटिंग : दि फाउन्डेशन आफ ग्रामोटोलाजी, शिकागो युनिवर्सिटी, शिकागो प्रेस, ई0 1952.

2. जे, लायन्स, इन्ट्रोडक्सन टू थ्योरेटिकल लिंग्विस्टिक्स, केम्ब्रिज युनिवर्सिटी, ई0 1968.

3. लियोनार्ड ब्लुमफिल्ड, लैंग्वेज, न्यूयार्क, हेनरी हल्ट, ई0 1933.

4. डेभिड क्रिस्टल, ए डिक्सनरी आफ लिंग्विस्टिक्स एण्ड फोनेटिक्स दो, सं. ब्रिटेन : बेसिन ब्लेकवेल लि., ई0 1985.